“21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श:एक तुलनात्मक अध्ययन (चयनित उपन्यासकारों के संदर्भ में”

“21 Vi sadi ke hindi or punjabi upneaso main dalit vemarsh: ek tulnatmak adhyian (chaniet upneaskaro ke sandarb main”

A Thesis

Submitted in partial fulfillment of the requirements

for the award of the degree of

DOCTOR OF PHILOSOPHY

in

(Hindi)

By

Rekha Rani

(41800044)

Supervised By

Dr. Anil Kumar Pandey

LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY

PUNJAB

2023

समर्पण

माता पिता को

जिन्होंने जन्म दिया

गुरूजनों को

जिन्होंने समय को समझने

के लिए दृष्टि दी

घोषणा - पत्र

मैं रेखा रानी शोधार्थी पीएच.डी. हिन्दी सत्य व निष्ठापूर्वक प्रमाणित करती हुँ कि **"21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्शः एक तुलनात्मक अध्ययन (चयनित उपन्यासकारों के संदर्भ में"** विषय पर किया गया शोध मेरा मौलिक शोध कार्य है। प्रस्तुत शोध प्रबंध लवली प्रोफैशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब की पीएच.डी. हिन्दी की उपाधि हेतु किया गया है। यह शोध डॉ.अनिल कुमार पाण्डेय सहायक प्रोफेसर, समाज विज्ञान एवं भाषा संकाय, लवली प्रोफैशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब के निर्देशन में पूरा किया गया है।

मैं यह भी प्रमाणित करती हूँ कि मेरे द्वारा किया गया प्रस्तुत शोध प्रबंध आंशिक अथवा पूर्ण रूप से किसी अन्य उपाधि के लिए अन्य किसी विश्वविद्यालय को प्रस्तुत नहीं किया गया है।

दिनांकः

रेखा रानी(शोध छात्रा)

पंजीयन संख्याः41800044

समाज विज्ञान एवं भाषा संकाय,

लवली प्रोफैशनल यूनिवर्सिटी,

फगवाड़ा, पंजाब।

प्रमाण - पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि शोधार्थी रेखा रानी ने **“21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्शः एक तुलनात्मक अध्ययन (चयनित उपन्यासकारों के संदर्भ में”** विषयक शोध प्रबंध मेरे निर्देशन में स्वयं लिखा है। इसकी सम्पूर्ण सामग्री शोधपरक एवं मौलिक है। मैं इस शोध प्रबंध को लवली प्रोफैशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा की पीएच.डी. हिन्दी की उपाधि हेतु मूल्यांकनार्थ प्रस्तुत करने की संस्तुति करता हूँ।

दिनांकः

(डॉ. अनिल कुमार पाण्डेय)

सहायक प्रोफेसर,

समाज विज्ञान एवं भाषा संकाय,

लवली प्रोफैशनल यूनिवर्सिटी,

फगवाड़ा, पंजाब।

प्राक्कथन

साहित्य को समाज का दर्पण क्हा गया है। इस नाते साहित्य और समाज का घनिष्ठ सम्बन्ध है क्योंकि इन दोनों का निर्माण मानव ने किया है। दोनों का निर्माण एक ही स्त्रोत से होने के कारण उनमें परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध होना स्वाभाविक है। वास्तव में समाज की संभावनाएँ ही लेखनी बद्ध होकर साहित्य की संज्ञा प्राप्त करती हैं। यही नहीं साहित्य में भी समाज के अश्रु-हास, उन्नति– अवनति, सभ्यता-असभ्यता आदि सपष्टतः देखे जा सकते हैं। इसलिए ही साहित्य को किसी समाज के उत्कर्ष और अपकर्ष के मानदंड के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। प्रत्येक समाज की सभ्यता, संस्कृति बौद्धिक गरिमा, अर्थ व्यवस्था, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, प्रगति, रूढ़ि–परम्परओं की स्थिति और भावी बहुमुखी योजनाओं का प्रतिबिम्ब उसका साहित्य ही होता है। साहित्य के संदर्भों से देखें तो निम्न वर्ग में अस्पृश्यता और जातिवाद को आधार बना कर लिखे गए साहित्य को दलित साहित्य के नाम से जाना जाता है। 21वीं सदी में दलित विमर्श तुलनात्मक अध्ययन पर आधारित प्रस्तुत शोध में दलित साहित्य में जीवन के विविध पक्षों से जुड़े विभिन्न बिन्दु हिन्दी और पंजाबी के चयनित उपन्यासकारों की रचनाओं पर आधारित हैं। “21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श तुलनात्मक अध्ययन (चयनित उपन्यासकारों के संदर्भ में” विषय पर शोध कार्य करते हुए चयनित रचनाओं में दलित विमर्श के जीवन से जुड़े विभिन्न आयामों को तुलना का आधार बनाया गया है। प्रस्तुत विमर्श से जुड़े पक्षों को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक बिन्दुओं के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए दलित समाज की वर्तमान समस्याओं और उनके निवार्ण बिन्दुओं को भी प्रस्तुत किया गया है।

प्रथम अध्याय **दलित विमर्श सैद्धांतिक पृष्ठभूमि** के अंतर्गत 'दलित' शब्द के अर्थ, दलित शब्द से जुड़ी परिभाषाएं और स्वरूप को प्रस्तुत करते हुए 'विमर्श' शब्द के अर्थ, परिभाषा और स्वरूप को प्रस्तुत किया गया है। 'दलित साहित्य' की अवधारणा तथा 'दलित साहित्य' के ऐतिहासिक परिपेक्ष्य के अंतर्गत हिन्दी और पंजाबी भाषा में लिखे गए दलित साहित्य के इतिहास को प्रस्तुत किया गया है। साहित्य में दलित विमर्श की प्रस्तुति तथा दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि को प्रस्तुत करते हुए, दलित रचनाकारों द्वारा लिखा हुआ साहित्य (स्वानुभूति पर आधारित) तथा गैर-दलित रचनाकारों द्वारा लिखे गए दलित साहित्य की (स्हानुभूति के आधार पर) तुलना करने का प्रयास है। चयनित रचनाकारों की रचनाओं में व्यंजित दलित विमर्श की तुलना करने के लिए 'तुलना' के सैद्धांतिक पक्ष के अंतर्गत तुलनात्मक अध्ययन के ऐतिहासिक परिपेक्ष्य को दृष्टिगोचर करते हुए, तुलनात्मक अध्ययन की विधियाँ, तुलनात्मक अध्ययन से जुड़े क्षेत्र, तथा तुलनात्मक अध्ययन के तत्त्वों को प्रस्तुत करते हुए, वर्तमान समय में साहित्य में तुलनात्मक अध्ययन के महत्त्व अर्थात इसकी आवश्यकताओं को प्रस्तुत किया गया है।

द्वितीय अध्याय **सामाजिक आयाम** के अंतर्गत प्रस्तुत अध्याय में दलित विमर्श से जुड़े पक्ष सामाजिक आयाम में दलित विमर्श तुलनात्मक अध्ययन के सामाजिक जीवन से जुड़े बिन्दुओं को पंजाबी तथा हिन्दी के चयनित दलित तथा गैर-दलित रचनाकारों की रचनाओ के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए परिवर्तन की स्थिति को प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत शोध में साहित्य तथा समाज के सम्बन्धों को प्रस्तुत किया गया है जिसके अंतर्गत हिन्दी और पंजाबी के उपन्यासकारों ने दलित जीवन के सामाजिक पक्ष से जुड़े बिन्दु जैसे दलित जातियों में शिक्षा की स्थिति, गंदगी भरे वातावरण की समस्या तथा इससे प्रभावित दलित परिवारों की स्थिति को प्रस्तुत किया है। दलित जातियों में विवाह प्रथा से जुड़े आयाम अनमेल

विवाह तथा अन्तर्जातीय विवाह की समस्या, दलित समाज के युवाओं में सामाजिक जीवन के प्रति आई जागरूकता को पीढ़ीगत अंतराल के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। दलित विमर्श के सामाजिक आयाम से जुड़े प्रस्तावित बिन्दुओं की तुलना करते हुए, विकास और परिवर्तन की स्थिति को भी प्रस्तुत किया गया है।

तृतीय अध्याय **राजनीतिक आयाम** के अंतर्गत दलित विमर्श में राजनीतिक आयाम का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए प्रस्तुत अध्याय के अंतर्गत राजनीति और साहित्य के सम्बन्धों को प्रस्तुत किया गया है। चयनित उपन्यासों में स्वानुभूति तथा स्हानुभूति पर आधारित दलित समाज और राजनीति के सम्बन्धों को प्रस्तुत करते हुए अवसरवादी और स्वार्थी राजनीति से प्रभावित दलित समाज की स्थिति, वर्तमान समय में राजनीति में व्याप्त जाति आधारित राजनीति की समस्या, प्रशास्निक क्षेत्रों में व्याप्त दफतरशाही और अफ़सरशाही को चिकित्सा व्यवस्था, पुलिस व्यवस्था, शिक्षा व्यवस्था तथा उससे प्रभावित दलित समाज की स्थिति को भी चयनित लेखकों ने प्रस्तुत किया है। दलित समाज को संविधानिक आधार पर मिली आरक्षण की सुविधा से दलित समाज में हुए विकास व परिवर्तन की स्थिति को भी प्रस्तुत शोध में तुलना का आधार बनाया गया है।

चतुर्थ अध्याय **आर्थिक आयाम** के अंतर्गत दलित विमर्श का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए दलित जीवन से जुड़े पक्ष आर्थिक आयाम को प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत अध्याय के अंतर्गत साहित्य में 'अर्थ' के महत्व को दर्शाते हुए दलित समाज में अर्थाभाव की समस्या से जूझते निर्धन दलित परिवारों की स्थिति को पंजाबी तथा हिन्दी के उपन्यासकारों की रचनाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। चयनित रचनाओं में गैर-दलित तथा दलित लेखकों ने बेरोजगारी की स्थिति तथा उससे प्रभावित दलित समाज का चित्रण किया है। दलित परिवारों में महँगाई की समस्या से प्रभावित दलित जातियों की स्थिति, आर्थिक आयाम से जुड़े बिन्दु

आर्थिक शोषण के अंतर्गत आर्थिक शोषण और ऋणग्रस्तता के शिकार दलित परिवारों की स्थिति को प्रस्तुत करते हुए दलित जातियों में आर्थिक कारणों से प्रभावित दलित औरतों की स्थिति तथा आर्थिक पक्ष से जुड़े बिन्दुओं में हुए विकास और परिवर्तन को प्रस्तुत शोध में तुलना का आधार बनाया गया है।

पंचम अध्याय **धार्मिक और सांस्कृतिक आयाम** में दलित विमर्श का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए दलित जीवन से जुड़े धार्मिक तथा सांस्कृतिक आयामों को प्रस्तुत किया गया है। चयनित रचनाकारों ने दलित जातियों की 'धर्म' में अत्यधिक आस्था को प्रस्तुत किया है इसके साथ ही धार्मिक पक्ष से जुड़े बिन्दु 'धर्म में जातिवाद' और दलित जातियों की धर्म में आस्था अथवा अत्यधिक आस्था के चलते अंधविश्वासों से ग्रसित दलित समाज की स्थिति को भी प्रस्तुत किया गया है, जिसमें अशिक्षा और अज्ञानता के चलते पशु-बलि अथवा भूत-प्रेत और देवी-देवताओं की स्वारियों सम्बन्धी अंधविश्वासों से प्रभावित दलित परिवारों की स्थिति को तुलना का आधार बनाया गया है। **सांस्कृतिक आयाम** के अंतर्गत दलित समाज की संस्कृति से जुड़े बिन्दुओं में पर्वोत्सव तथा मेलों, दलित जीवन से जुड़े पक्ष लोक संस्कृति के अंतर्गत दलित समाज के लोक जीवन से सम्बन्धित लोकगीतों तथा लोक प्रथाओं को प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत शोध में दलित जीवन से सम्बन्धित रीति-रिवाजों की तुलना करते हुए विकास और परिवर्तन की स्थिति को प्रस्तुत किया गया है।

षष्ठ अध्याय **समसामयिक समस्याओं के सांकेतिक निवारक बिन्दुओं का विश्लेषण** "21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श एक तुलनात्मक अध्ययन (चयनित रचनाकारों के संदर्भ में" विषय पर शोध कार्य करते हुए चयनित रचनाकारों द्वारा दलित विमर्श के वर्तमान जीवन से जुड़ी समस्याएं और उसके निवार्ण के लिए जो समाधान दिए गए हैं, को प्रस्तुत किया गया है।

सप्तम अध्याय **व्यवहारिक पक्ष-** "21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श एक तुलनात्मक अध्ययन(चयनित रचनाकारों के संदर्भ में", विषय से सम्बन्धित व्यवहारिक पक्ष को प्रस्तुत किया गया है जिसमें प्रस्तुत विषय से सम्बन्धित एक प्रश्नावली तैयार की गई है। प्रश्नावली में सम्मिलित दलित साहित्य से जुड़े पश्नों पर अभिमत प्राप्त किया गया, जिसके पश्चात प्रश्नावली को हिन्दी साहित्य से जुड़े प्रबुध विद्वानों एवं बुद्धिजीवियों को प्रेषित किया गया जिसके सार तथा सुझावों को अध्याय में प्रस्तुत किया गया है।

उपर्युक्त अध्यायों के पश्चात अंत में **उपसंहार** में शोध निष्कर्षों को प्रस्तुत किया गया है। उसके साथ ही मेरे द्वारा प्रस्तुत विषय से जुड़ी उपलब्धियाँ और भविष्य में प्रस्तुत विषय से सम्बन्धित शोध कार्यों के लिए सम्भावनाओं को भी प्रस्तुत किया गया है।

सर्वप्रथम मैं इस शोध प्रबंध के निर्देशक परमपूज्य गुरूवर डाँ. अनिल कुमार पाण्डेय जी, सहायक प्रोफैसर, सामाजिक विज्ञान एवं भाषा संकाय, लवली प्रोफैशनल विश्वविद्यालय, फगवाड़ा, पंजाब के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ जिनकी प्रेरणा एवं मार्गदर्शन के फलस्वरूप ही, इस शोध कार्य को सम्पन्न करने में सफल हो सकी हूँ। क्षेष्ठ गुरू का निर्देशन मिल जाए, तो संसार में किसी भी कार्य में सफलता प्राप्त की जा सकती है। यह मेरा सौभाग्य रहा, जो मुझे श्रेष्ठ गुरूवर का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। समय-समय पर उनसे प्राप्त उत्साह, स्नेह एवं सहयोग अविस्मरणीय है। मैं पूरे विभाग के अन्य गुरूजनों के प्रति भी अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ, जिन्होंने समय-समय पर अपने अमूल्य सुझावों और दिशा–निर्देशन प्रदान कर मेरा मार्गदर्शन किया।

अपने इस शोध कार्य में मुझे जिन आत्मीयजनों का सहयोग प्राप्त हुआ है, मैं उनके प्रति भी आभार प्रदर्शन करती हूँ। सर्वप्रथम प्रातः वंदनीय माता-पिता (पिता सवः श्री दयानंद जी, माता श्रीमति चन्द्रकांता) के आशीर्वाद को इस कार्य की पूर्णता में अहम् मानती हूँ। अपने जीवन साथी सुरेन्द्र मोहन एडवोकेट के द्वारा प्राप्त स्नेह, सहयोग एवं मार्गदर्शन के लिए जितना भी कहूँ, कम ही होगा। लवली प्रोफैशनल यूनिवर्सिटी के हिन्दी विभाग के गुरू जी डॉ. विनोद कुमार जी द्वारा समय-समय पर मेरा मार्गदर्शन करने हेतु विशेष आभार, मेरे गुरू जी प्रो. सुखबीर सिंह जी, गुरूजी डॉ. रणधीर कौशिक जी, डॉ. सुखविंदर सिंह झाड़ों, डॉ. जगदीप सिंह जी, मित्र डॉ. संजय सिंह यादव, आप सभी को मेरा बहुत आभार जिन्होंने सदैव मेरा सहयोग करते हुए मेरा मार्गदर्शन किया। प्रो. कमलेश चौधरी जी, डॉ. नरेश सिहाग जी, के प्रति भी स्नेह और आभार व्यकत करती हूँ।

रेखा रानी

(शोध छात्रा)

“21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्शः एक तुलनात्मक अध्ययन (चयनित उपन्यासकारों के संदर्भ में”

अनुक्रमणिका

प्राक्कथन

I. प्रस्तावना

II. समस्या कथन

III. समस्या औचित्य

IV. चुनौतियाँ

V. उद्देश्य

VI. शोध प्रविधियां

VII. परिसीमांकन

VIII. परिकल्पना

IX. पूर्व सम्बद्ध साहित्यावलोकन

X. शोध अंतराल

प्रथम अध्याय-सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि

1.1 ‘दलित’ अर्थ, परिभाषा और स्वरूप

1.2 ‘विमर्श’ अर्थ, परिभाषा और स्वरूप

1.3 ‘दलित साहित्य’ अर्थ, परिभाषा और स्वरूप

1.4 दलित विमर्श का ऐतिहासिक परिपेक्ष्य

1.5 साहित्य में दलित विमर्श की प्रस्तुति

1.6 दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि

1.6.1 दलित रचनाकारों द्वारा लिखा साहित्य(स्वानुभूति पर आधारित)

1.6.2 गैर-दलित रचनाकारों द्वारा लिखा साहित्य(स्हानुभूति पर आधारित)

1.7 तुलनात्मक अध्ययन का अर्थ, परिभाषा और स्वरूप

1.8 तुलनात्मक अध्ययन का ऐतिहासिक परिपेक्ष्य

1.9 तुलनात्मक अध्ययन की विधियाँ

1.10 तुलनात्मक अध्ययन के क्षेत्र

1.11 तुलनात्मक अध्ययन के तत्त्व

1.12 तुलनात्मक अध्ययन की आवश्यकता/महत्त्व

द्वितीय अध्यायः 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श

तुलनात्मक अध्ययनः सामाजिक आयाम/पक्ष

2.1 दलित जातियों में शिक्षा की स्थिति

2.2 दलित स्त्रियों की स्थिति

2.3 जाति आधारित भेदभाव

2.3.1 गैर-दलित जातियों का दलित जातियों से

2.3.2 दलित जातियों में आपसी भेदभाव

2.4 गंदगी भरा वातावरण

2.5 दलित जातियों मे विवाह् प्रथा

2.6 पीढ़ीगत अंतराल

तृतीय अध्यायः 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श

तुलनात्मक अध्ययनः राजनीतिक आयाम/पक्ष

3.1 दलित समाज और राजनीति

3.2 अवसर और स्वार्थ की राजनीति

3.3 जाति आधारित राजनीति

3.4 दफतरशाही और अफ़सरशाही

3.4.1 शिक्षा व्यवस्था

3.4.2 चिकित्सा व्यवस्था

3.4.3 पुलिस प्रशासन

3.5 आरक्षण व्यवस्था

चतुर्थ अध्यायः 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श

तुलनात्मक अध्ययनः आर्थिक आयाम/पक्ष

4.1 दलित समाज और अर्थाभाव

4.2 महंगाई से प्रभावित दलित समाज

4.3 दलित समाज और बेरोजगारी

4.4 आर्थिक शोषण से प्रभावित

4.5 आर्थिक ऋणग्रस्तता से प्रभावित

4.6 आर्थिक कारणों से नारी शोषण

पंचम अध्यायः 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श तुलनात्मक अध्ययनः धार्मिक तथा सांस्कृतिक आयाम/पक्ष

5.1 दलित समाज और धर्म

5.1.1 धर्म और जातिवाद

5.1.2 धर्मिक कृत्यों में आस्था

5.1.3 धार्मिक अंधविश्वास

5.1.3.1 पशु-बलि सम्बन्धी अंधविश्वास

5.1.3.2 भूत-प्रेत और देवी-देवताओं सम्बन्धी अंधविश्वास

5.2 दलित समाज और संस्कृति

5.2.1 पर्वोत्सव तथा मेले

5.2.2 लोक संस्कृति

5.2.2.1 लोक गीत

5.2.2.2 लोक प्रथाएँ

5.2.3 रीति रिवाज

5.2.3.1 जन्म सम्बन्धी रीति रिवाज

5.2.3.2 विवाह् सम्बन्धी रीति रिवाज

5.2.3.3 मृत्यु सम्बन्धी रीति रिवाज

षष्ठ अध्याय –समसामयिक समस्याओं के सांकेतिक निवारक बिन्दुओं का विश्लेषण

सप्तम अध्याय -21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श

व्यवहारिक पक्ष

उपसंहार

संदर्भ ग्रंथ सूची

1 आधार ग्रंथ

2 सहायक ग्रंथ

3 कोश ग्रंथ

4 पत्र-पत्रिकाएं

परिशिष्ट

1. साक्षात्कार

2. प्रश्नावली

3. शोध आलेख

4. सम्मेलन सह्भागिता

“21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्शः

एक तुलनात्मक अध्ययन (चयनित उपन्यासकारों के संदर्भ में”

प्रस्तावना

दलित विमर्श तुलनात्मक अध्ययन पर आधारित प्रस्तुत शोध में दलित साहित्य में जीवन के विविध आयामों के पुनरावलोकन का प्रयास है। इस शोध को हिन्दी और पंजाबी के 21वीं सदी के उपन्यासों में दलित विमर्श तुलनात्मक अध्ययन पर आधारित किया गया है। साहित्य को समाज का दर्पण माना जाता है। साहित्यकार जो कुछ भी समाज में देखता है, उसका यथार्थ चित्रण वह अपने साहित्य के माध्यम से करता है। चयनित रचनाओं में सामाजिक यथार्थ को आधार बनाते हुए दलित वर्ग की व्यथा को वाणी देने का प्रयास किया गया है। ‘दलित’ शब्द की व्युत्पति संस्कृत के ‘दल’ धातु से हुई है जिसका अर्थः तोड़ना, हिस्से करना, कुचलना अथवा मूल रूप दबाकर क्षतिग्रस्त नष्ट-भ्रष्ट करना माना गया है। इस संदर्भ में*आदर्श हिन्दी शब्द कोश* में सूर्य नारायण उपाध्याय ने ‘दलित’ शब्द का अर्थ “दलित अर्थात रौंदा हुआ, कुचला हुआ, पदाक्रांत, दबाया हुआ” बताया है।(352) दलित साहित्य के सम्बन्ध में *दलित सरोकार अतै साहित्य* पुस्तक में परिभाषा देते हुए डॉ.चरनदीप कहते हैं कि “दलित साहित्य से तात्पर्य दलित जीवन और उसकी समस्याओं पर लेखन को केंद्र में रखकर हुए साहित्यक आंदोलन से है, जिसका सूत्रधार दलित पैंथर को माना जाता है”(36)। दलित पैंथर आंदोलन के दौरान बड़ी संख्या में दलित साहित्य का निर्माण हुआ। वर्तमान समय में भी दलित विमर्श की साहित्यिक प्रवृति का स्वरूप विभिन्न भाषाओं के लेखकों के चिंतन एवं रचनाओं के माध्यम से सामने आ रहा है। इसी को आधार बना कर हिन्दी और पंजाबी के चयनित उपन्यासकारों के उपन्यासों को समेटते हुए इस शोध कार्य में तुलनात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया गया है जिसके द्वारा

दोनों भाषाओं के उपन्यासों में दलित विमर्श की तुलना कर समाज को सही दिशा में आगे बढ़ाना है।

समस्या कथनः "21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्शः एक तुलनात्मक अध्ययन (चयनित उपन्यासकारों के संदर्भ में"

साहित्य का उद्देश्य मानवीय जीवन है। साहित्यकार चाहे जिस किसी का भी चित्रण करे वहां जिन्दगी जरूर होगी। साहित्यकार की समग्र अनुभूतियाँ जीवन्त और व्यापक होती हैं इन्हीं अनुभूतियों को रचनाओं के माध्यम से व्यक्त करने का सर्वप्रथम प्रयास मुंशी प्रेमचन्द ने किया, उन्होंने अपने कथा साहित्य में दलित जीवन की व्यथा को वाणी दी। तत्पश्चात् पाण्डेय वेचन शर्मा उग्र, रामदरश मिश्र, यादवेन्द्रर शर्मा चन्द्र, अमृतलाल नागर, इत्यादि कई रचनाकारों ने दलित जातियों के प्रति संवेदना अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रक्ट की है। 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श का तुलनात्मक अध्ययन चयनित उपन्यासकारों के संदर्भ में करते हुए तुलना के विविध आयाम देखने के लिए प्रयाप्त प्रतीत होता है।

समस्या औचित्य

किसी भी भाषा का साहित्य तभी सफल कहलाता है यदि उससे सम्बन्धित साहित्य से जुड़े पक्षों का यथार्थ चित्रण किया जाता है। हिन्दी और पंजाबी के उपन्यास 21वीं सदी के संदर्भ में दलित जीवन के विविध आयामों में हुए विमर्शों को अपने में समेटे हुए हैं, जिसे साहित्य में 'दलित विमर्श' के नाम से अभिहित किया गया है। विभिन्न भाषाओं में लिखित साहित्य में 'दलित विमर्श' एक ज्वलंत विषय बन चुका है। हिन्दी और पंजाबी के उपन्यासों में दलित विमर्श के विविध आयामों की तुलना का ही विषय है यह शोध।

शोध कार्य में चुनौतियां- भारत में दलित साहित्य को केन्द्र में रखकर स्वतन्त्र लेखन 1970 के आस पास हुआ है। इससे पहले भी बहुत से रचनाकारों ने दलित जीवन को आधार बनाकर रचनाएं की, जिनका उद्देश्य दलित क्हे जाने वाले वर्गों की पीड़ा को साहित्य के माध्यम से प्रक्ट करना रहा है। अतः दलित साहित्य के अंतर्गत हिन्दी और पंजाबी के उपन्यासों में दलित विमर्श का तुलनात्मक अध्ययन मेरे शोध विषय के लिए बहुत चुनौती पूर्ण हो सकता है।

- 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श (चयनित उपन्यासकारों के संदर्भ में' का तुलनात्मक अध्ययन काफी विस्तृत विषय है, तो मेरे द्वारा शोध लक्ष्य से भटकने की पूर्ण संभावना है। अपनी सीमाओं मे रहते हुए शोध कार्य को अपने लक्ष्य तक पहुँचाना अपने आप में एक चुनौती है।
- 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श से जुड़ी रचनाओं की रचना दलित तथा गैर-दलित लेखकों द्वारा हुई है जिसमें दलित और गैर-दलित लेखकों की मानसिकता को समझते हुए दलित जीवन की संवेदनाओं और यथार्थ को समझना मेरे लिए चुनौतीपूर्ण रहेगा।
- 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित और गैर-दलित लेखकों ने अपने-अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। इन विचारों से खुद को प्रभावित होने से बचाना बहुत चुनौती पूर्ण होगा।

उद्देश्यः

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श के विविध आयामों का तुलनात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। मेरे द्वारा प्रस्तावित शोध के निम्न उद्देश्य होंगे।

- दलित विमर्श की परम्परा और साहित्य में उसकी प्रस्तुति को स्पष्ट करना।

- 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श के विभिन्न आयामों में हुए विकास/परिवर्तन को इंगित करना।

- 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में व्यंजित दलित विमर्श की तुलना करना।

- दलित विमर्श से प्राप्त/ सम्बद्ध समस्याओं के निवारक बिन्दुओं को प्रत्यक्ष करना।

शोध प्रविधि

किसी भी कार्य को पूर्ण करने हेतु उसकी रुपरेखा बना लेना आवश्यक है। मनुष्य को मंजिल तक पहुँचाने हेतु रास्ते की आवश्यकता होती है। उसी प्रकार शोधार्थी को निर्धारित अवधि में अपने निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए शोध प्रविधियों की आवश्यकता होती है। इस विषय में शोधार्थी अपने शोध में अनेक प्रविधियों में से कुछ का चुनाव करता है। मेरे द्वारा प्रस्तुत शोध विषय “21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्शः एक तुलनात्मक अध्ययन (चयनित उपन्यासकारों के संदर्भ में” विषय पर कुछ शोध प्रविधियों की सहायता से कार्य सम्पन्न किया जाएगा जो निम्नलिखित है।

1) **ऐतिहासिक शोध प्रविधिः** 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श के विकास को समझने हेतु, इसके विभिन्न चरणों व आधार स्तम्भों को जानने हेतु हमें इतिहास में जाना होगा।

2) **मनोवैज्ञानिक शोध प्रविधिः** चयनित रचनाओं में दलित विमर्श को जब कथाकार लिखता है उस समय के उनके मनोविज्ञान को समझना एक शोधार्थी के लिए आवश्यक है । इसके अभाव में हम रचना के मर्म को नहीं जान पाऐंगें।

3) **तुलनात्मक शोध प्रविधिः** इस अनुसंधान प्रविधि द्वारा शोध में तुलनात्मक प्रविधि का प्रयोग करके अपने विषय के लिए जरूरी तथ्य प्राप्त करना। यह तुलनात्मक शोध मुख्यतः हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श के विविध आयाम/ पक्ष (सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक)को दलित और गैर-दलित लेखकों के लेखन को दृष्टिगत रखते हुए किया जाएगा।

4) **आलोचनात्मक शोध प्रविधिः** चयनित रचनाओं में दलित विमर्श को जब कथाकार लिखता है तो उस समय आलोचनात्मक पद्धति द्वारा रचनाओं की आलोचना करते हुए रचना को समझना एक शोधार्थी के लिए अति आवश्यक है।

5) **सर्वेक्षण शोध प्रविधिः** रचना के यथार्थ को समझने के लिए सर्वेक्षण प्रविधि का प्रयोग अति आवश्यक है ताकि रचनाकार की मानसिकता के साथ-साथ यथार्थ के धरातल को समझा जा सके।

परिसीमांकनः

किसी भी विषय का सीमाबद्ध होना उसकी कुशलता एवं पूर्णता का ध्योतक है। हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्शः तुलनात्मक अध्ययन के सैद्धांतिक पक्ष एवं वर्ण व्यवस्था से उत्पन्न समस्याओं का परोक्ष रुप में अंकन हुआ है, इसमें कुछ

सामान्य और आलोचनात्मक पुस्तकें दलित विमर्श के उद्भव और विकास पर भी प्रकाश डालती हैं लेकिन सम्पूर्ण रुप में 21वीं सदी में हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श के विविध आयामों में तुलनात्मक अध्ययन का पक्ष अछूता है। दलित विमर्श के कई पक्ष है। वर्ण व्यवस्था के बदलते हुए स्वरूप ने इस अध्ययन के लिए प्रेरित किया। इस शोध कार्य के लिए 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों (चयनित उपन्यासकारों के) को अध्ययन का विषय बनाया जाएगा, जिन्में प्रत्यक्ष और प्रगाढ़ रूप में दलित विमर्श व्यक्त हुआ है।

परिकल्पनाः-

किसी भी कार्य के निष्कर्ष का पुर्वानुमान परिकल्पना कहलाता है इसमें शोधकर्ता अपनी कल्पना के द्वारा कुछ निष्कर्ष प्राप्त होने की संभावना को प्रकट करता है। प्रस्तावित शोध कार्य में निम्नलिखित परिकल्पनाएं निर्मित की गईं हैं जो मेरे शोध विषय 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों के तुलनात्मक (दलित विमर्श) अध्ययन अनुभव और सामान्य सिद्धातों पर आधारित है।

- 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श के विविध आयामों का वर्णन करना, जिसके माध्यम से दलित जीवन के सरोकारों को प्रस्तुत किया गया है।
- उपन्यासकार न तो किसी वर्ग विशेष के विरोधी हैं और न ही हितैषी, बल्कि वे तो सामाजिक व्यवस्था के प्रति दृष्टिकोण के विरोधी हैं क्योंकि उपन्यासकार स्वयं दलित और गैर-दलित हैं।

साहित्यावलोकन (हिन्दी और पंजाबी साहित्य में दलित विमर्श पर हुआ शोध कार्य)

हिन्दी (दलित विमर्श)

शोध हेतु मेरे द्वारा 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श तुलनात्मक अध्ययन चुना गया है। इस विषय पर अभी तक कोई शोध कार्य नहीं हुआ। दलित साहित्य में जिन विश्वविद्यालयों में शोध कार्य हुए हैं, उनका विवरण मेरे द्वारा निम्नव्रत दिया जा रहा है। इस विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि मेरा शोध विषय मौलिक व नवीनता को लिए हुए है।

1. रमाकांत, हिन्दी उपन्यासों में दलित चेतना सन् 1980 से 2000 तक, पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़, 2017. प्रस्तुत शोध प्रबंध में शोधार्थी द्वारा हिन्दी उपन्यासों मे दलित चेतना से जुड़े विभिन्न पक्षों पर अनुसंधान कार्य किया गया है। जिसमें दलित जातियों के सामाजिक जीवन, आर्थिक जीवन, राजनीतिक जीवन, धार्मिक जीवन, को प्रस्तुत किया गया है।

2. विजय कुमार, हिन्दी दलित साहित्य पर बौद्ध दर्शन का प्रभाव 1980 से लेकर आज तक, पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़, 2016. प्रस्तुत शोध प्रबंध दलित साहित्य पर बौद्ध दर्शन के प्रभाव को स्पष्ट करता है। दलित साहित्य पर बौद्ध दर्शन के प्रभाव के परिपेक्ष्य में मूल्यांकन करते हुए अनुसंधान कार्य किया गया है।

3. राम दिनेश, समकालीन हिन्दी कहानी में गैर-दलितों का दलित विषयक लेखन (अम्बेडकरवादी चिंतन के विशेष संदर्भ में) जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय दिल्ली, 2014. प्रस्तुत शोध प्रबंध में अम्बेडकर के दर्शन को मात्र दलित मुक्ति का दर्शन न मानते हुए व्यवस्था को बदलने वाला दर्शन माना है। इन कहानियों में दलित पात्र अम्बेडकर की विचारधारा को अपनाए हुए हैं।

4. अभय कुमार, समकालीन हिन्दी दलित साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय दिल्ली, 2014. प्रस्तुत शोध प्रबंध में दलित

साहित्य का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से विश्लेक्षण करते हुए भाषा, शिल्प, सौन्द्रर्यबोध, मूल्य बिम्ब और प्रतीक पर भी चर्चा प्रस्तुत अनुसंधान में की गई है।

5. गीतवाल, गिरिराज किशोर के उपन्यास *परिशिष्ट* में दलित जीवन, पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, 2010. प्रस्तुत लघु शोध प्रवंध में दलित जीवन के राजनीतिक पक्ष में फैले भ्रष्टाचार की घिनौनी तस्वीर को दिखाया गया है और यह भ्रष्टाचार वर्तमान समय में समाज के हर क्षेत्र में व्यापत है।

6. सत्त नारायण, हिन्दी में दलित रचनाकारों की आत्मकथाओं और भारतीय सांस्कृतिक परिवेश का संदर्भ, पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, 2009. प्रस्तुत शोध प्रबंध में दलित रचनाकारों द्वारा लिखित आत्मकथाओं में दलित जीवन के सांस्कृतिक परिवेश को भारतीय सांस्कृतिक परिवेश से अलग दर्शाते हुए, दलितों की जीवन व्यथा प्रस्तुत को प्रस्तुत किया गया है।

7. हरदीप कौर, जगदीश चन्द्र के उपन्यास *जमीन अपनी तो थी* में दलित संवेदना, पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, 2009. प्रस्तुत शोध प्रबंध में दलित जीवन की संवेदनाओं का चित्रण किया गया है। दलित वर्ग के दुःखों, उनकी मजबूरियों उनके शोषण का चित्रण किया गया है।

8. कुसुमलता, अजय नावरियां के उपन्यास *उधर के लोग* का सांस्कृतिक अध्ययन, पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, 2008. प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध में चित्रित निम्नवर्गीय लोगों की जागृत अवस्था न होने के कारण दुर्दशा को प्रस्तुत किया गया है।

9. वरिंद्रर कौर, मंजूज्योत्सना के कहानी संग्रह *जग गयी जमीन* में दलित संवेदना, पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध में दलित वर्ग की गरीबी, निर्धनता, और आर्थिक शोषण की मुँह बोलती तस्वीर को चित्रित किया गया है।

10. जसदीप मोहन, ओमप्रकाश बाल्मीकि की रचना, *जूठन* में दलित जीवन की प्रस्तुति और सामाजिक सार्थकता, पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला 2007. प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध मे दलितों के प्रति सामाजिक व्यवस्था की करूरता की शिल्प चिकित्सा करने के बाद उच्च जातियों की दलितों के प्रति अपार घृणा और उससे जन्में विद्रोह की भावना को प्रस्तुत किया गया है।

पंजाबी दलित विमर्श

1. बलदेव सिंह, पंजाबी कहानी विच्च दलित चेतना, (गुरदयाल सिंह, कृपाल कजाक, अतरजीत अतै प्रेम गोरखी, दे विशेष प्रसंग विच्च) पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़, 2017. प्रस्तुत शोध प्रबंध में शोधार्थी ने (चयनित) कहानीकारों की कहानियों में दलित जीवन के विविध पक्षों के यथार्थ को उजागर किया है।

2. हरदीप सिंह, पंजाबी कविता विच्च दलित ते दमित सरोकार(हरे इन्कलाब दे प्रसंग विच्च)पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, 2017. प्रस्तुत शोध प्रबंध में दलित और दमित सरोकारों के साथ-साथ, छोटे-छोटे किसानों, खेत मजदूरों और अन्य दमित हाशियाकृत वर्गों के सरोकारों को बाखूबी चित्रित किया गया है।

3. सतनाम कौर, पंजाबी नाटकां विच्च दलित पात्रां दी निर्माणकारी, पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, 2017. प्रस्तुत शोध प्रबंध में दलित पात्रों की निर्माणकारी वर्गीकरण द्वारा पंजाबी नाटकों के पात्रों को दो भागों में बांटा गया है। (1) चेतन पात्र (2) चेतना विहीन, पात्रों को आधार बनाकर दलित जीवन के पक्षों से जुड़े यथार्थ को प्रस्तुत किया गया है।

4. मनप्रीत कौर, चरणदास सिद्दू दी दलित दृष्टि, पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, 2016. प्रस्तुत शोध प्रबंध में चरणदास सिद्दू के नाटक *बाबा बंतू* अतै *चन्नों बाजीगरनी*, में दलित वर्ग की सामाजिक और आर्थिक समस्याओं को वाणी दी है।

5. गुरप्रीत कौर, सवराजबीर दे नाटकां विच्च दलित चेतना, पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, 2016. प्रस्तुत शोध प्रबंध में दलित औरतों पर होते शोषण को रूपमान किया गया है।

6. तरसेम सिंह, अजमेर सिंह औलख दे नाटकां विच्च दलित चेतना, पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, 2016. प्रस्तुत शोध प्रबंध में औलख के नाटक *केहर सिंह दी मौत*, *इक सी दरिया*, *मलवान*, *झनां दे पाणी*, *निक्के निक्के सूरजां दी लड़ाई*, इत्यादि के प्रसंग में दलित समस्याओं के साथ-साथ चेतन और जागरूक स्त्री पात्रों को भी प्रस्तुत किया गया है।

7. मलकीत सिंह, 1960 तो बाद दे पंजाबी नावलां विच्च दलित वर्ग दी चेतना, पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़, 2016. प्रस्तुत शोध प्रबंध में 1960 के बाद के दलित वर्गों की सामाजिक और आर्थिक विषमता को आधार बनाया गया है। समाज के सम्पन्न वर्ग द्वारा दलित वर्ग पर किए गए शोषण और आर्थिक मंदहाली को प्रस्तुत किया गया है।

8. चरणदीप सिंह, पंजाबी कविता विच्च दलित चेतना (गुरदास आलम, संतोख सिंह धीर, संतराम उदासी, लाल सिंह दिल, अतै बलवीर माधोपुरी दे प्रसंग विच्च) पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़, 2016. प्रस्तुत शोध प्रबंध में शोधार्थी ने चयनित पाँच कवियों की कविताओं में दलित जीवन को प्रस्तुत करते हुए इनके आपसी सरोकारों को चरित्रार्थ किया है।

9. सिकंदर सिंह, कबीर काव्य दलित दृष्टि का काव्य, पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, 2009. प्रस्तुत शोध प्रबंध में कबीर की दलित विचारधारा में दलित पद्धति सम्बन्धी विवेक जागृत करके हिन्दू, जोगमत और इस्लाम धर्म की मुख्य विचारधारा की स्थापना की गई है।

10. बलदेव सिंह, पंजाबी नाटकां विच दलित चेतना, पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, 2009. प्रस्तुत शोध प्रबंध में पंजाबी नाटकों में दलित चेतना की दृष्टि से भारतीय सामाजिक व्यवस्था के अंदर सामाजिक आर्थिक शोषण का शिकार हो रहे दलित वर्गों के हक्कों को प्रस्तुत किया गया है।

(ब) दलित विमर्श के प्रमुख हस्ताक्षर

(हिन्दी दलित साहित्य)

भारतीय स्तर पर चल रहे दलित विमर्श की साहित्यक प्रवृति का स्वरूप मराठी एवं हिन्दी लेखकों के चिंतन एवं रचनाओं के माध्यम से सामने आया है। दलित चेतना के इन प्रमुख हस्ताक्षरों का वर्णन इस प्रकार हैः

1. **ओम प्रकाश बाल्मीकिः** हिन्दी दलित साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले इस रचनाकार का जन्म 30 जून 1950 को मुज्जफर नगर उत्तरप्रदेश में और मृत्यु 17 नवम्बर 2013 को हुई। इनकी आत्मकथा *जूठन*(1997) को दलित साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इसके अतिरिक्त *संताप*, *सफाई देवता*, *अब और नहीं*(काव्य संग्रह),*सलाम*, *घुसपैठिए* (कहानी संग्रह),तथा *दलित साहित्य का सौन्द्रर्य शास्त्र* इनकी प्रमुख रचनाएं हैं।

2. मोहनदास नैमिशरायः मोहनदास नैमिशराय की झलकारी बाई के जीवन पर *वीरांगना झलकारी बाई* नामक पुस्तक साहित्य में 35 से ज्यादा कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। जिनमें उपन्यास कथासंग्रह, आत्मकथा तथा लेख आदि प्रमुख हैं। आपके *क्या खरीदोगें मुझे* (उपन्यास),*अदालतनामा* (नाटक), *अपने-अपने पिंजरे* (आत्मकथा) इत्यादि प्रसिद्ध रचनाएं है।

3. जयप्रकाश कर्दमः एक हिन्दी साहित्यकार है। वह दलित साहित्य से जुड़े लेखक हैं। इनकी प्रसिद्ध रचनाएं *छप्पर*, *करूणा*, *शमशान का रहस्य* (बाल उपन्यास) हैं। इसके

अतिरिक्त आप ने कविता, कहानी, निबन्ध, एवं शोध पुस्तकों की रचना एवं संपादन कार्य किया। *तिनका- तिनका आग, गूंगा नहीं था मैं* आपके प्रसिद्ध काव्य संग्रह हैं।

4. जगदीश चन्द्रः जगदीश चन्द्र का जन्म 23 नवंबर, 1930 को जिला होशिआरपुर, पंजाब में हुआ। आपकी सन् 1996 में प्रकाशित कृतियां *यादों का पहाड़, धरती धन ना अपना* प्रसिद्ध (उपन्यास) है।1996 में जालंधर में आपका निधन हुआ।

5.प्रेम कपाड़ियाः प्रेम कपाड़िया की प्रमुख रचना *मिट्टी की सौगन्ध*, दलित जीवन के विभिन्न पक्षों को प्रस्तुत करने वाली रचना है। इसमें दलित जीवन को अभिशाप मानते हुए छुआछूत की समस्या को दर्शाया गया है।

6.कंवल भारतीः दलित चेतना से जुड़े साहित्यकारों में कंवल भारती की एक स्वतन्त्र पहचान है। आपका जन्म 1953 में हुआ,*तब तुम्हारी निष्ठा क्या होती* आपका महत्वपूर्ण काव्य संग्रह है। आपका साहित्यक जीवन पत्रकारिता से आरम्भ हुआ। कंवल भारती दलित चेतना से जुड़े साहित्य को अजस्त्र देन हैं।

7. पुरषोत्म सत्याप्रेमीः 1944 को मध्य प्रदेश के उज्जैन में आपका जन्म हुआ। आपकी प्रकाशित रचनाएं हैं। *स्वालों के सूरज, द्वार पर दस्तक, मूक माटी की मुखरता,* (काव्य संग्रह)तथा*पत्ते क्यों गिरते हैं, दलित साहित्य और सामाजिक न्याय* (निबंध संग्रह) दलित साहित्य से जुड़ी रचनाएं हैं।

8. सूर्य नारायण रणसूभेः आप समकालीन हिन्दी के प्रमुख साहित्यकार तथा हिन्दी के अध्यापक रहे। आपका जन्म 1942 को कर्नाटक राज्य में हुआ। आपके प्रकाशित साहित्य में *दलित साहित्यः स्वरूप और संवेदना, पत्रकार डॉ.भीम राव अम्बेडकर, हिन्दी उपन्यास विविध आयाम* इत्यादि समीक्षात्मक ग्रंथ प्रकाशित हुए।

9. सूरजपाल चौहानः आपका जन्म 20 अप्रैल 1955 ईः में उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ जिले के फुसावली जनपद में हुआ। आपका नाम दलित साहित्य में अलग महत्व रखता है। आपकी खयाति प्राप्त रचना आत्मकथा *तिरस्कृत* है। आप की *है री कब*

आएगा कहानी संग्रह के अतिरिक्त अनेक कृत्रियां तेलगु, मराठी, गुजराती, पंजाबी, अंग्रेजी जर्मन भाषओं में अनुदित हैं।

10. रमणिका गुप्ताः आपने अपनी पहचान युद्धरत आम आदमी जैसी जुझारू पत्रिका से की है। आप आदिवासी, दलितों और महिलाओं के संघर्ष का चेहरा मानी जाती थी। आपकी पसिद्ध आत्मकथा*आपहुदरी* में आपने अपने जीवन की सच्चाई को प्रस्तुत किया है।

दलित विमर्श के प्रमुख हस्ताक्षर

(पंजाबी दलित साहित्य)

1.जसवंत सिंह कंवलः जसवंत सिंह कंवल का जन्म 27 जून 1919 को टुडीके जिला मोगा में हुआ। आपने दलित विमर्श से जुड़े प्रसिद्ध नावल *हाणी*, *ज़ेरा*, *तोसाली दी हंसों*, *जंगल का शेर*, *मनुष्यता* इत्यादि में सामाजिक भेदभाव को यथार्थ दृष्टि से प्रस्तुत किया है।

2.गुरदयाल सिंहः पंजाबी के प्रसिद्ध नावलकार गुरदयाल सिंह का जन्म 10 जनवरी 1933 को हुआ। गुरदयाल सिंह 40 से ज्यादा पुस्तके पंजाबी साहित्य की झोली में डाल चुके हैं। आप पंजाब के प्रथम फिलासफर और गलपकार माने जाते हैं। आपके नावल *मड़ी दा दीवा, आथण-उग्गण,* और *अन्ने घोड़े दा दान,* रचनाओं में पंजाब के दलित समाज के जीवन को प्रस्तुत किया है।

3.सोहण सिंह शीतलः आप का नावल *युग बदल गया,* में दलित औरत के जिस्मानी शोषण और दर्द को ब्यान किया गया है। आप को उपन्यास *युग बदल गया* के लिए 1974 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। आपका जन्म 1909 में और मृत्यु 1998 में हुई।

डा. सुरिन्द्र अजनात, ज्ञान सिंह बल्ल, हरविंदर भंडाल, शबदीश, केवलसिंह परवाना, डॉ. सरबजीत सिंह, गुरनाम सिंह मुक्तसर, एस.एल विरदी. लाल सिंह दिल, दलित चेतना के साहित्यक पक्ष से जुड़े हुए लेखक हैं।

4.अजमेर सिंह औलखः का जन्म 19 अगस्त 1942 को हुआ। आपने पंजाब के किसानी जीवन एवं निम्नवर्ग की समस्याओं को प्रगतिवादी विचारधारा में प्रस्तुत किया है। आपके दलित विमर्श से जुड़े (नाटक) *सत्त बैगाने*, *केहर सिंह दी मौत*, *सलवान, इक सी दरिया*, *झनां दे पाणी*, महत्वपूर्ण रचनाएं हैं। आपकी मृत्यु 15 जून 2017 को हुई।

5.चरनदास सिद्धदूः चरनदास सिद्दू का जन्म 22 मार्च 1938 को जिला होशिआरपुर पंजाब में हुआ। आपकी दलित विमर्श से जुड़ी रचनाएं हैं *प्रेम पिकासो, मंगू ते किक्कर*, *चन्नों बाजीगरनी*, *एकलव्य बोलिया* इत्यादि प्रमुख हैं।*भगत सिंह शहीद तिक्कड़ी* के लिए 2003 में साहित्य एकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। आपकी मृत्यु 19 नवंबर 2013 को हुई।

6. सुखबीर सिंहः सुखबीर सिंह उर्फ बलबीर सिंह का जन्म 9 जुलाई 1925 को हुआ। आपने पंजाबी कवि नावलकार, कहानीकार, निबंधकार और अनुवादक, के रूप में अपनी पहचान बनाई। आपकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैः-*कच्च दा शहर*, *गरदिश*, *टूटी हुई सड़क*। प्रस्तुत रचनाओं में आपने दलित जीवन के यथार्थ को प्रस्तुत किया है। आपकी मृत्यु 22 फरवरी 2012 को हुई।

7.लाल सिंह दिलः लाल सिंह दिल का जन्म 11 अप्रैल 1943 को लुधियाना में हुआ। नक्सलवाड़ी काव्य लहर में तुफान की तरह उठे वर्ग संघर्ष को आधार बनाकर *सतलुज दी हवा*, *बहुत सारे सूरज, नागलोक*, आत्मकथा *दास्तान* में दलित और दमित सरोकारों को प्रस्तुत किया है। आपकी मृत्यु 14 अगस्त 2007 में हुई।

(स)दलित विमर्श का ऐतिहासिक परिपेक्ष्य

दलित साहित्य के मूल में दलित विमर्श है। *आदर्श हिन्दी शब्द कोश* में सूर्य नारायण उपाध्याय ने 'दलित' शब्द से अभिप्राय "दलित अर्थात रौंदा हुआ, कुचला हुआ, पदाक्रांत, दबाया हुआ" से लिया है(352)। दलित विमर्श की आवश्यकता की क्या ऐतिहासिक पृष्ठभूमि है इस का ज्ञान हमें इस बात से होता है कि लगभग तीन हजार साल पहले मध्यपूर्वी देशों से आए लोगों के आगमन से भारतीय सांस्कृतिक व्यवस्था की बुनियाद निर्मित हुई। आर्य लोगों ने यहाँ के मूल निवासियों को अपना गुलाम बनाया और इसी गुलामी को निरतंर बरकरार रखने के लिए धार्मिक मूल्यों का निर्धारण किया जिसने समाज को चार वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) में विभाजित कर हर किस्म के शोषण को धार्मिक आधार पर सही करार दे दिया। वैदिक काल से होते हुए उपनिष्द काल, धर्मसूत्र, कोटिल्य का अर्थ शास्त्र, यहाँ तक कि मनुस्मृति में भी इन चार वर्णो और हर श्रेणी के भीतर भिन्न-भिन्न जातियों के सामाजिक कर्तव्यों की व्याखया की गई, और इसका उलंघन करने वाले के लिए सख्त दण्ड का नियम बनाकर भारतीय समाज को विलक्षण किस्म की जाति-पाति आधारित व्यवस्था में जकड़ कर रख दिया। क्हना न होगा कि पुरातन भारतीय समाज में चार्वाक दर्शन, विद्रोही विचारधारा के रूप में सामने आता है जो सभी तरह के कर्म-काण्डों नियमों का विरोध करता है। बौद्ध धर्म दर्शन, विद्रोह के विकसित रूप के तौर पर उपस्थित होता है जो कि चार्वाक की तरह तीखा न होकर उदार है। मध्यकालीन भारत में भक्ति आन्दोलन के रूप में उभरी अध्यात्मिक लहर सचेत तौर पर वर्ण व्यवस्था विरोधी थी जिसने भारतीय समाज के इतिहास में पीड़ित वर्ग के लोगों को अभिव्यक्ति का अवसर दिया जिसमें गुरू नानक देव, कबीरदास, तुकाराम, इत्यादि समाज सुधारकों का महत्वपूर्ण योगदान है।

अंग्रेजी शासन व्यवस्था के साथ ही ईसाई धर्म ने भारतीय लोगों के जीवन को प्रभावित किया। हिन्दू धर्म का कठोर जातिवादी विभाजन, निम्न वर्ग के लोगों का ईस्लाम और ईसाई धर्मों में परिवर्तित होने का कारण बना। परिणाम स्वरूप भारतीय इतिहास के जागरण काल में राजाराम मोहन राय, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद, महादेव गोविंद रानाडे, स्वामी दयानंद सरस्वती, ऐनी बेसेंट और बाल गंगाधर तिलक ने समाज सुधार एवं धर्म सुधार आंदोलन चलाया। जिसमें ब्रह्म समाज, आर्य समाज, थियोसोफीकल सोसायटी, रामकृष्ण मिशन, इत्यादि संस्थाओं ने अहम भूमिका निभाई।

उल्लेखनीय है कि ज्योतिबा फूले दलित मानव की मुक्ति एवं नारी स्वतन्त्रता के लिए मजबूत सामाजिक एवं वैचारिक संघर्ष प्रारम्भ करने वाले पहले भारतीय कहे जा सकते हैं। उनकी सन् 1873 में प्रकाशित पुस्तक *गुलामगिरी* मुक्ति का सम्पूर्ण घोषणा पत्र है, पेरियार स्वामी नायकर, नारायण गुरू, महात्मा गांधी, डॉ.भीमराव अम्बेडकर, स्वामी अछूतानंद, गुरू घासी दास, गंगू राम इत्यादि वर्ण व्यवस्था विरोधियों ने दलित विमर्श के केन्द्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, दलित विमर्श के संदर्भ में भारतीय इतिहास में डॉ.भीमराव अम्बेडकर का सर्वाधिक योगदान है उन्होंने दलित अंदोलन को राजनीतिक, सांस्कृतिक और वैचारिक दिशा प्रदान की। अम्बेडकर के दलित सुधार अंदोलन के बारे में *शब्द सरोकार* पत्रिका में अपने विचार प्रस्तुत करते हुए डॉ. हुकुमचन्द्र राजपाल कहते हैः

> डॉ.अम्बेडकर को मात्र दलित जातियों के कर्णधार मानना उचित नहीं। उन्होंने सामाजिक कुरीतियों, स्त्री शोषण, शिक्षा, आर्थिक-भ्रष्टाचार आदि अनेक विषयों पर अपनी लेखनी चलाई, जिसका सम्बन्ध साधारण जन के साथ था।(58)

दलित साहित्य और दलित विमर्श

हिन्दी साहित्य में सर्वप्रथम प्रगितशील धारा से जुड़े बहुत सारे लेखकों ने अपनी–अपनी रचनाओं में दलित जीवन के यथार्थ को केन्द्र बनाया। इन रचनाकारों में मुंशी प्रेमचन्द का नाम सबसे अग्रणिय है। उन्होंने *गोदान* और *कर्म भूमि* उपन्यासों में सबसे पहले दलितों की पीड़ा को वाणी दी। प्रेमचन्द के अतिरिक्त सूर्यकांत त्रिपाठी निराला का *भूले बिसरे चित्र*, रांग्य राघव का *कब तक पुकारू*, अमृत लाल नागर का *नाच्चौ बहुत गोपाल*, बाला दूबे का *यथा प्रस्तावित*, मधुकर सिंह *जंगली सूअर* दलित विमर्श पर आधारित उपन्यास हैं। *पंजाब सौरभ पत्रिका* में प्रकाशित एक साक्षात्कार में स्वयं अमृतलाल नागर ने क्हा था "सामाजिक स्तर पर हरिजनोद्वार आंदोलन का जो कार्य बाबू प्रेमचन्द के हाथों हुआ, उसी कार्य को साहित्य के माध्यम से उपन्यासों द्वारा आगे बढाया जाएगा"(16)। हिन्दी कहानियों में मुंशी प्रेमचन्द द्वारा लिखित 'सद्गति' और 'ठाकुर का कुआं', विशेष तौर पर उल्लेखनीय है। मोहन दास नैमिशराय की कहानी 'सबसे बड़ा दुःख', ओमप्रकाश बाल्मीकि की कहानी 'अन्धेरी बसती', 'कथालोक' इत्यादि निर्णायक भीम पत्रिका में प्रकाशित हुई, दलित विमर्श की कहानियाँ हैं। हिन्दी साहित्य में <u>आत्मकथा</u> के अंतर्गत दलित जीवन से जुड़ी बहुत सारी आत्मकथाओं की भी रचना हुई है जिसमें मोहनदास नैमिशराय की आत्मकथा *अपने–अपने पिंजरे* कौश्लया बैसंतरी की आत्मकथा *दोहरा अभिशाप* ओम प्रकाश बाल्मीकि की *जूठन* डॉ.तुलसी राम की *मुर्दहिया*, सूरज पाल चौहान की *तिरस्कृत*, श्यौराज सिंह बैचेन की *मेरा बचपन मेरे कंधों पर*, सुशीला टांकभौरे की *शिकंजे का दर्द*, इत्यादि दलित जीवन से जुड़ी आत्मकथाएं हैं। हिन्दी कविता के अंतर्गत आरसी प्रसाद सिंह, सुर्यकांत त्रिपाठी निराला, ग्या प्रसाद शुक्ल, पंडित माध्व शुक्ल आदि विशेष तौर पर दलित विमर्श से जुड़े कवि है।

पंजाबी साहित्य और दलित विमर्शः- पंजाबी कथा साहित्य में प्रगितवादी और जुझारवादी साहित्य में दलित विमर्श पर काफी चर्चा हुई है। *दलित सरोकार अतै साहित्य* पुस्तक में डॉ.चरनदीप दलित समाज के बारे में अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहते हैं-

> पंजाबी समाज के सभ्आचार, धार्मिक, सामाजिक, नैतिक जीवन के वरतारे जात-पात और ब्राह्मणी मानसिक विकारों की जकड़ से पूरी तरह मुक्त नहीं हैं। इसलिए पंजाबी साहित्य में आर्थिक न बराबरी के साथ-साथ दलित मनुष्य के सामाजिक, मानसिक संताप का भी चित्रण होता रहा है।(105)

पंजाबी नावल साहित्य के इतिहास में भाई वीर सिंह द्वारा लिखित*सुभाग जी दा सुधार हथ्थी बाबा नौध सिंह* पहला पंजाबी नावल है जिसमें पंजाब की निम्मवर्ग की ग्रामीण जनता का जिक्र हुआ है। सिक्ख धर्म के दलित पक्ष के दृष्टिकोण को पंजाबी नावल में पहली बार नानक सिंह ने अपने नावल *चिट्टा लहू* में प्रस्तुत किया है। जसवंत सिंह कंवल के नावल *हाणी* में समाज में व्याप्त जाति-पाति की समस्या को प्रस्तुत किया है। इसके अतिरिक्त गुरदयाल सिंह के नावल *मड़ी दा दीवा, आथण उगण, अन्ने घोड़े दा दान* दलित विमर्श से जुड़े नावल हैं। सोहन सिंह शीतल का नावल*युग बदल गया*, करमजीत कुस्सा का *नावल अग्ग दा गीत*, गुरचरण सिंह राओं का *मिशालची*, करमजीत औजला का नावल*ऊँच-नीच*, निंदर गिल्ल का *दास्तां दलिता दी* बलवीर परवाना का *बैगाने पिंड दी जूह* दलित विमर्श से सम्बन्धित नावल है। **पंजाबी कहानी** जगत में सुजान सिंह की ‘बागा दा राखा’ प्रथम दलित विमर्श की कहानी कही जा सकती है। इसके अतिरिक्त इनकी ‘प्राहुणा’, ‘कुलक्षेष्ठ’, ‘गुरपूरब’, और ‘दुल्ली’, दलित विमर्श की कहानियां हैं । संत सिंह सेखों की कहानी ‘कम्म दी चम्म’, कुलवंत विर्क की कहानी ‘साबण दी चिप्पर’, ‘तूड़ी दी पंड’, ‘सांझ’,

संतोख सिंह धीर की 'कोई इक्क स्वार', गुरदयाल सिंह की 'चारे दी पंड', 'गद्धी वाला', डॉ.एस तरसेम की 'प्रेम प्रकाश', 'लक्ष्मी', 'अनुष्ठान', मोहन भंडारी की 'गंगा जल', मनमोहन बावा की 'नारा दा मुण्डा', 'उदाम्बरा', 'मूलस्थान की देवी', दलित विमर्श का कहानियां हैं। कृपाल कजाक की 'हुम्स','सैलाब', अतरजीत की 'ठुअआ', 'अदना इन्सान', 'सबूत', 'कदम', 'रसगुल्ले', वरिआम संधू की 'नौ बारा दस', बलदेव सिंह की 'सिदक','जिस तन लागे', 'मंत्री', 'कुड़ी ते दात्ती', नच्त्रछतर की कहानी 'हार जित्त', अजमेर सिद्दू की 'गोरजा', देश राज काली की 'जखमां दे रस्तियों', भगवंत रसूलपूरी की 'फैसला', 'कसूरवार' इत्यादि दलित विमर्श की कहानियां हैं। पंजाबी सवै जीवनीआं(आत्मकथा) पंजाबी साहित्य के अंतर्गत दलित विमर्श से जुड़ी सवै जीवनीआं दलित विमर्श को उभारने में सफल रही है। लाल सिंह दिल की आत्मकथा *दास्तान*, प्रेम गोरखी की आत्मकथा *गैरहाजिर आदमी*, बलवीर माधोपुरी की *छांग्यारूख*, समाज में जाति-पाति और छुआ-छूत की भावनाओं का चित्रण करती है। इसके अतिरिक्त संतोख सिंह धीर की *ब्रहस्पति*, जिंदर की *कुवासी रोटी*, गुरदयाल सिंह की *नियाण मत्तिआ*, *दूजी देही*, आत्मकथाओं में दलित विमर्श और निम्न वर्ग से दुर्व्यवहार की दुशवारियों का चित्रण किया गया है। पंजाबी कविता की प्रगितवादी धारा के कवियों में संतोख सिंह धीर, और गुरदास आल्म को प्रथम दलित विमर्श के कवि क्हा जा सकता है। गुरदास आल्म की कविता 'जे मैं मर गया', 'अछूत का ईलाज', 'उड़दीयां धूड़ां', 'अल्ले फट्ट', दलित मनुष्य के आस्तित्व से जुड़ी कविताएं हैं। संत राम उदासी का प्रसिद्ध गीत 'मघदा रही वे सूरजा, तू कम्मीआं दे वेहडे', दलित मुक्ति प्रति आशावादी दृष्टिकोण को प्रस्तुत करता है। नई कविता सम्बन्धी अपने विचार *दलित सरोकार अतै साहित्य* पुस्तक में डॉ.सरबजीत ने प्रस्तुत किए हैं कि "नई कविता विच दलितां दीआं दुष्वारियां, तंगिआं तरूशीआं, दुःखां-गमां घाटा-ऊणा, चाहता सुपनिआं दा भरवा चित्रण है।"(112)

दलित विमर्श के विविध आयामः साहित्यिक शोध के अंतर्गत साहित्यिक विमर्श में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रत्येक पक्ष अथवा आयाम के प्रति साहित्यकार के विचार और नज़रिया समय के परिवर्तन के साथ–साथ परिवर्तित होता रहता है। किस प्रकार रचनाकार समय और परिस्थितियों के प्रति जागरूक होकर अपने भावों को अभिव्यक्त कर ठोस कदम उठाता है। यही उस विमर्श के मुख्य बिन्दु बन जाते हैं। 'आयाम' का शाब्दिक अर्थ होता हैः अधिकतर सीमा विस्तार, विस्तीर्णता। किसी भी समाज के आवश्यक पहलू सामाजिक राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, तथा सांस्कृतिक ही होते हैं, जब तक किसी भी समाज का मूल्यांकन इन बिन्दुओं के आधार पर नहीं किया जाता तब तक न तो समाज को पूर्णरूपेण जाना जा सकता है और न ही उसमें सुधार की अपेक्षा की जा सकती है। प्रस्तावित शोध विषय में हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श के इन आयामों का वर्णन किया जाएगा ताकि हिन्दी और पंजाबी के चयनित उपन्यासों में दलित विमर्श के विविध आयामों का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सके।

1. सामाजिक आयामः साहित्य समाज के केवल अलग-अलग पहलूओं को प्रस्तुत ही नहीं करता बल्कि उनके पीछे छिपी सच्चाइयों और अंतर्विरोधों को भी उजागर करता है। जिसका आधार सामाजिक सरोकारों को भी माना जाता है। प्रस्तावित शोध में दलित विमर्श के इन्हीं सम्बन्धों की तुलना करना भी शोध का एक पक्ष रहेगा।

2.राजनीतिक आयामः का अर्थ राज्य की व्यवस्था संचालन से समझा जाता है। राजनीतिक आयाम के अंतर्गत हम यहां पर हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श का तुलनात्मक अध्ययन करने के लिए राजनीतिक आयाम को आधार बनाऐगें क्योंकि किसी भी समाज का राजनीतिक वातावरण और परिस्थितियां उसके वर्तमान आस्तित्व का निर्धारण करती हैं। राजनीति को समाज से पृथक कर देना जीवन को एकांगी बना देना है। साहित्य में राजनीति का प्रवेश दो रूपों में होता है। पहला

लेखक की वैचारिक प्रतिबद्धता और दूसरा जन-जीवन पर पड़ने वाले राजनीतिक प्रभावों के निष्पक्ष अंकन के रूप में।

3.आर्थिक आयामः 'अर्थ' समाज की सबसे बड़ी आवश्यकता है। 'अर्थ' के अभाव में जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। किसी भी समाज की आर्थिक स्थिति उस समाज के स्वरूप को काफी प्रभावित करती है। जीवन की 'अर्थ' व्यवस्था सम्बन्धी विभिन्न स्थितियों समस्याओं और उनके समाधानों के मध्य गतिशील विचारों को आर्थिक आयाम क्हा जा सकता है। हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श का आर्थिक स्तर पर तुलनात्मक अध्ययन करते हुए आर्थिक पक्ष को प्रस्तुत करना भी शोध का एक पक्ष रहेगा।

4. धार्मिक आयामः 'धर्म' शब्द 'धृ' धातु से बना है जिसका अर्थ है 'धारण शक्ति'। अतःकिसी धारण शक्ति को धर्म क्हा जाता है। 'धर्म' मुख्यतः ईश्वर के प्रति आस्था से जुड़ा भाव है। प्राचीन समय में धर्म विहीन व्यकित को पशु समान समझा जाता था। प्राचीन समय से लेकर आधुनिक समय तक धर्म मनुष्य के साथ रहा है। अतः धार्मिक स्तर पर भी हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श का तुलनात्मक अवलोकन भी मेरे शोध का एक पक्ष रहेगा।

5. सांस्कृतिक आयामः 'संस्कृति' किसी भी समाज में गहराई तक व्याप्त गुणों की समग्रता का नाम है। 'संस्कृति' का शब्दार्थः उत्तम या सुधरी हुई स्थिति है। मनुष्य स्वभावतः प्रगितशील प्राणी है और अपनी बुद्धि के प्रयोग से अपने चारों ओर की प्राकृतिक परिस्थितियों को निरंतर सुधारता और उन्नत करता रहता है। ऐसी प्रत्येक जीवन-पद्धति, रीति रिवाज, रहन-सहन, आचार-विचार, नवीन अनुसंधान और अविष्कार, जिसमें मनुष्य पशुओं और जंगलियों के दर्जे से ऊपर उठता है और सभ्य बनता है, संस्कृति का ही हिस्सा हैं। प्रस्तुत शोध में मेरे द्वारा हिन्दी और पंजाबी

उपन्यासों में चित्रित संस्कृति में दलित विमर्श को आधार बनाकर तुलना करने का प्रयास रहेगा।

(द) शोध कार्य के लिए चयनित रचनाएं

हिन्दी उपन्यासकार (गैर-दलित)

1. रूप सिंह चन्देल(कानपुर टू कालापानी 2019)(दगैल 2019)

2. शिवमूर्ति (तर्पण 2004) 3.वंदना देव शुक्ल(मगहर की सुबह 2014)

हिन्दी उपन्यासकार (दलित)

1. कैलाशचन्द्र चौहान(भंवर 2013)(विद्रोह 2017)

2 विपिन बिहारी(हमलावर 2014) (मरोड़ 2017)

पंजाबी उपन्यासकार/ नावलकार (गैर-दलित)

1.रामस्वरूप अणखी (सलफास 2004) 2.बलदेव सिंह (अन्नदाता 2010)

3. निंदर गिल्ल (पंडोरी प्रोहितां 2012) 4. एस. एस. कालड़ा(मुक्ति 2017)

पंजाबी उपन्यासकार/ नावलकार (दलित)

1. अज़ीज सरोए (हनेरी रात दे जुगनू 2011) (केही वगे हवा 2014)

2. देशराज काली(परणेश्वरी 2008) (शांति पर्व 2009)

शोध अंतराल

पूर्व में किए गए शोधकार्यों के साहित्य पुनरावलोकन से हमें कुछ निष्कर्ष प्राप्त होते हैं, जिनमें मुख्य है कि पूर्व के शोध व्यकित विशेष पर आधारित है या वे समाज के अंग तथा आयामों पर आधारित है। कुछ कार्यों में दलित साहित्य में दलित चेतना विषय पर कार्य किया गया है। अतः यह शोध 21वीं सदी के उपन्यासों में दलित विमर्श के विविध आयामों को अपने अंदर समाहित करते हुए आगे बढ़ने का प्रयत्न है।

इस प्रकार निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि साहित्य में 'दलित विमर्श' आज एक ज्वलंत विषय है। जिसको केन्द्र में रखकर आज विभिन्न भाषाओं के रचनाकार रचना करने में संग्लन है। जिसके मध्य में समाज का निम्न वर्ग विद्यमान है। प्रस्तुत शोध मेरे द्वारा हिन्दी और पंजाबी के उपन्यासों में दलित विमर्श के विविध आयामों की तुलना करने का प्रयास किया जाएगा। वर्तमान समय में दलित विमर्श और उसके प्रत्येक आयाम का विस्तार पूर्वक वर्णन व उसके प्रति जागरूकता लाने का प्रयास किया जाएगा। प्रस्तुत शोध में मेरे द्वारा चयनित रचनाओं को भारत जैसे विशाल भू-खण्ड व अनेक भाषा व संस्कृतियों वाले देश की एकता व अखण्डता के लिए सामाजिक चेतना के अंतर्गत दलित विमर्श अत्यंत आवश्यक तत्व है। उपन्यासों में दलित विमर्श के प्रत्येक आयाम को स्थान दिया गया है। वास्तव में विमर्श भावात्मक तत्व है, जिसमें समस्त देश की विविधता व अनेकता, एकता के सूत्र में बंध जाती है।

अध्याय 1

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्शः एक तुलनात्मक अध्ययनः सैद्धांतिक पृष्ठभूमि

साहित्य समाज का दर्पण है वह दर्पण जिसमें देश अथवा समाज का अन्तर्बाह्र दोनों रूपों का दर्शन होता है। मानव समाज तथा उससे जुड़े हुए घटकों का जीता-जागता सच्चा प्रमाणिक दस्तावेज साहित्य है। साहित्य और समाज का अटूट सम्बन्ध है। बिना समाज का साहित्य और साहित्य के समाज की कल्पना करना असम्भव है। समाज गतिशील है, परिवर्तित है अतः साहित्य भी समाज के साथ-साथ बदलता रहता है। काल एवं समाज-सापेक्ष, परिस्थितियों के अनुरूप साहित्य निर्मित होता है। यही कारण है कि साहित्य को विभिन्न विमर्शों में अभिव्यक्त किया गया है। दलित विमर्श भी उन्हीं में से एक है। 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्शः एक तुलनात्मक अध्ययन (चयनित उपन्यासकारों के संदर्भ में', शोध विषय की दिशा पर विचार करते हुए, दलित साहित्य का स्वरूप निर्धारण करने के लिए दलित शब्द की व्युत्पति, अर्थ, दलित साहित्य की परिभाषा, स्वरूप, दलित विमर्श की परम्परा, और साहित्य में दलित विमर्श की प्रस्तुति इत्यादि को समझना अत्यंत अनिवार्य है।

1.1 दलितः अर्थ, परिभाषा और स्वरूप

'दलित' शब्द की व्युत्पत्ति 'संस्कृत' धातु 'दल' से हुई मानी जाती है, जिसका अर्थ होता है तोड़ना, हिस्से करना, कुचलना, दबा हुआ। इस सन्दर्भ में *आदर्श हिन्दी शब्द कोश* में सूर्य नारायण ने 'दलित' शब्द से अभिप्राय "दलित अर्थात रौंदा हुआ, कुचला हुआ, पदाक्रांत, दबाया हुआ" से माना है।(352) डॉ.हरदेव बाहरी ने *राजपाल हिन्दी शब्द कोश* में 'दलित' शब्द का अर्थ "कुचला हुआ, दबाया हुआ या नष्ट किया हुआ" बताया है।(386) इस प्रकार उपर्युक्त शब्द कोशों में दलित शब्द के अर्थों से यह अभिप्राय लिया जा सकता है, कि जो दबा हुआ है, जिसे किसी ने जान बूझ कर नष्ट करने का प्रयास किया है, उन्हें रौंदा कुचला गया है, उपेक्षित रखा गया है, वे दलित

हैं। अनेक विद्वानों ने समय-समय पर 'दलित' शब्द को परिभाषित करने का प्रयास किया है। 'दलित' शब्द के बारे में बाबा साहिब के कथन को *हिन्दी दलित साहित्य की दस्तक* पुस्तक में गौतम भाईदास कुँवर ने प्रस्तुत किया हैः

> अछूतपन की उत्पति से पहले अपने मूल रूप में हिन्दुओं और अछूतों का भेद एक दल के आदमियों तथा पराए दलों के छितरे हुए आदमियों का विभेद था। ये छितरे हुए आदमी आगे चलकर अछूत कहलाए।(19)

दलित साहित्य का सौन्द्रर्य शास्त्र पुस्तक में 'दलित' शब्द को परिभाषित करते हुए प्रसिद्ध हिन्दी दलित साहित्यकार ओमप्रकाश बाल्मीकि लिखते हैः

> जिसका दलन या दमन किया गया है, दबाया गया है, पीड़ित, शोषित सताया हुआ, गिराया हुआ, उपेक्षित, घृणित रौंदा हुआ, मसला हुआ, घिनिष्ट मर्दित, हतोत्साहित, वंचित इत्यादि को दलित कहा गया है।(13)

डॉ.श्यौराज सिंह बेचैन के द्वारा 'दलित' शब्द सम्बन्धी दी गई परिभाषा को *दलित साहित्य का सौन्द्रर्य शास्त्र* पुस्तक में ओमप्रकाश बाल्मीकि ने प्रस्तुत किया है। उनके अनुसारः "दलित वह है जिसे भारतीय संविधान में अनुसूचित जाति अथवा जन जाति का दर्जा दिया गया है"।(13)

अवतिंका प्रसाद मम्मट के 'दलित' शब्द सम्बन्धी विचारों को*हिन्दी दलित साहित्य की दस्तक* पुस्तक में गौतम भाईदास कुँवर ने प्रस्तुत किया है। उनके अनुसारः "दलित शब्द व्यापक है, आधुनिक शुद्र समाज का बहुत बड़ा हिस्सा दलित संज्ञा में समाविष्ट है"।(18)

कँवल भारती के 'दलित' शब्द सम्बन्धी विचारों को ओमप्रकाश बाल्मीकि ने *दलित साहित्य का सौन्द्रर्य शास्त्र* पुस्तक में प्रस्तुत किया हैः

> दलित वह है जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है। जिसे कठोर और गंदे काम करने के लिए बाध्य किया गया है। जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतंत्र व्यवसाय करने से मना किया गया और जिस पर सछूतों ने सामाजिक निर्योग्यताओं की संहिता लागू की, वही और वही दलित हैं, और इसके अंतर्गत वही सामाजिक जातियाँ आती हैं, जिन्हें अनुसूचित कहा जाता है।(13)

ओम प्रकाश बाल्मीकि *दलित साहित्य का सौन्द्रर्य शास्त्र* पुस्तक में 'दलित' शब्द के व्यापक अर्थ को परिभाषित करते हुए कहते हैं-

> भारतीय साहित्य में जिसे अस्पृश्य माना गया वह व्यकित ही दलित है। दुर्गम पहाड़ों, वनों के बीच जीवन यापन करने के लिए बाध्य जनजातियाँ और आदिवासी, जरायम पेशा घोषित जातियाँ सभी इस दायरे में आती हैं। सभी वर्गों की स्त्रियाँ दलित हैं। बहुत कम श्रम मूल्यों पर चौबीसों घंटे काम करने वाले श्रमिक, बँधुआ मजदूर, दलित की श्रेणी में आते हैं।(13)

दलित साहित्य अनुभव संघर्ष एवं यथार्थ पुस्तक में ओमप्रकाश बाल्मीकि 'दलित' शब्द का प्रभाव जीवन के विविध पक्षों पर स्वीकार करते हुए कहते हैं -

> भारतीय समाज-व्यवस्था का आधार जाति व्यवस्था बन चुकी है। जिसे आज के सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक, शैक्षणिक, प्रशासनिक क्षेत्रों में ही नहीं बल्कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में देखा जा सकता है।(93)

उपर्युक्त 'दलित' शब्द की व्युत्पति और अर्थ से यह विदित होता है कि विषमतावादी समाज में जाति अथवा वर्ण आधारित व्यवस्था में जो शूद्र है, दबा हुआ है, उपेक्षित तिरस्कृत है अथवा उन्हें जानबूझ कर लूटा गया है। ऐसे मानव समूह को ही 'दलित' कहा जा सकता है। 'दलित' शब्द उस व्यकित के लिए प्रयोग होता है जो समाज व्यवस्था के तहत सबसे निचले पायदान पर है। वर्ण व्यवस्था ने जिसे अछूत या अन्त्यज की श्रेणी में रखा हो वह दलित हैं, जिसका दमन हुआ है, जिसका दलन हुआ, शोषण हुआ, जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू होता है। ऐसे समूह को ही संविधान में अनुसूचित जातियों का दर्जा दिया गया है जो जन्मना अछूत हैं। वह ही दलित हैं।

1.2 विमर्शः अर्थ, परिभाषा और स्वरूप

'विमर्श' शब्द के अर्थ अत्यंत व्यापक हैं, 'विमर्श' शब्द की उत्पति 'मृश' धातु में वि–उपसर्ग तथा 'धंज' प्रत्यय लगाकर हुई है। अतः 'विमर्श' शब्द का व्युत्पति परक अर्थः विचार-विमर्श करना, सोचना, समझना, आलोचना करना है। कालिका प्रसाद के अनुसार *वृहत हिन्दी कोश* में विमर्श के विविध अर्थ प्राप्त होते हैं जैसे "विचार, विवेचन, परीक्षण, समीक्षा, गुण-दोषों का विवेचन, परामर्श, तर्क, ज्ञान, चरम बिन्दु इत्यादि।"(1059) अर्थात किसी भी विषय पर विचार विवेचन करना, उसकी समीक्षा कर गुण दोष प्रस्तुत करना ही 'विमर्श' कहलाता है। *राजपाल हिन्दी शब्दकोश* में हरदेव बाहरी ने 'विमर्श' से अभिप्राय "विचार, विवेचन, परीक्षण, समीक्षा, तर्क" इत्यादि से लिया है।(751) *आधुनिक हिन्दी शब्दकोश* में गोबिन्द चातक ने विमर्श शब्द के निम्न अनुसार अर्थ माने हैं -

> सोच विचार कर तथ्य की वास्तविकता का पता लगाना, किसी विषय पर कुछ सोचना समझना, विचार करना, गुण दोष आदि की आलोचना या मीमांसा करना, विचार विनिमय, सोच-विचार,

परीक्षण, तर्क करना, जाँचना और परखना, तथा किसी से परामर्श या सलाह लेना।(529)

उपरोक्त शब्दकोशों के अनुसार 'विमर्श' शब्द से तात्पर्य सोच विचार करके, गुण दोष का परीक्षण कर जाँचना परखना से लिया गया है। इस संदर्भ में *शब्द सरोकार* पत्रिका में 'विमर्श' सम्बन्धी परिभाषा देते हुए संगम वर्मा कहते हैं--"जिसमें पक्ष–विपक्ष, साम्य-वैषम्य आदि सब और से विचारधारा को छाना जाता है। उसे विमर्श कहते हैं।"(41) अर्थात जिस विषय सम्बन्धी कोई विचार विमर्श, आलोचना अथवा समीक्षा की जाए उसे विमर्श कहते हैं। 'विमर्श' शब्द को परिभाषित करते हुए बजरंग बिहारी तिवारी *हिन्दी दलित साहित्यः एक मूल्यांकन* पुस्तक में लिखते हैं--"विमर्श जीवन–परिस्थितियों को अक्सर पहले से बनाए साँचे में रखकर देखता है।"(39) इस प्रकार 'विमर्श' शब्द को विभिन्न अर्थो के अंतर्गत लिया जा सकता है जैसे बहस, वाद-विवाद, सोच विचार, विचार विमर्श, सलाह मंत्रणा, इत्यादि।

1.3 दलित साहित्यः अर्थ, परिभाषा और स्वरूप

'दलित' शब्द, दबाए गए शोषित, पीड़ित, पताड़ित इत्यादि अर्थों के साथ जब साहित्य से जुड़ता है तो विरोध और नकार की और संकेत करता है। वह नकार या विरोध चाहे व्यवस्था का हो, सामाजिक विसंगतियों का, धार्मिक रूढ़ियों का, आर्थिक विषमता का हो या भाषा प्रांत के अलगाव का हो। दलित साहित्य नकार का साहित्य है जो संघर्ष से उपजा है तथा जिसमें समता स्वतन्त्रता और बन्धुत्व का भाव है अर्थात 'दलित' शब्द 'साहित्य' के साथ जुड़कर एक ऐसी साहित्यक धारा की ओर संकेत करता है, जो मानवीय सरोकारों और संवेदनाओं की यथार्थ अभिव्यकित है।

दलित साहित्य सम्बन्धी अर्थ स्पष्ट करते हुए *दलित साहित्य का सौन्द्रर्य शास्त्र* पुस्तक में ओम प्रकाश बाल्मीकि कहते हैं -

> साहित्य के साथ 'दलित' शब्द जुड़ते ही उसकी व्यापकता और अधिक क्रांति बोधक हो जाती है तथा अर्थ और अधिक व्यंजित होकर साहित्य की भूमिका और सामाजिक उत्तरदायित्वों को और अधिक विश्लेषित करने की क्षमता हासिल कर लेता है। दलित शब्द विरोध की अभिव्यक्ति का प्रतीक बन जाता है तथा मानवीय संवेदनाओं के साथ जुड़कर सामाजिक प्रतिबद्धता स्थापित करता है।(16)

'दलित साहित्य' सम्बन्धी अपने विचारों को दलित चिंतक कंवल भारती ने *दलित विमर्श की भूमिका* पुस्तक में प्रस्तुत किया है-

> दलित साहित्य से अभिप्राय उस साहित्य से है, जिसमें दलितों ने स्वयं अपनी पीड़ा को रूपायित किया है। अपने जीवन-संघर्ष में दलितों ने जिस यथार्थ को भोगा है, दलित साहित्य उसकी अभिव्यक्ति का साहित्य है। यह कला कला के लिए नहीं, बल्कि जीवन और जीजिविषा का साहित्य है। इसलिए कहना न होगा कि वास्तव में दलितों द्वारा लिखा गया साहित्य ही दलित साहित्य की कोटी में आता है। (22)

शरण कुमार लिम्बाले 'दलित साहित्य' को परिभाषित करते हुए *दलित साहित्य का सौन्द्रर्य शास्त्र* पुस्तक में लिखते हैं-

> दलितों का दुःख, परेशानी, गुलामी, अधःपतन और उपहास के साथ ही दरिद्रता का कलात्मक शैली से चित्रण करने वाला साहित्य ही दलित साहित्य है। आह का उदात्त स्वरूप अर्थात दलित साहित्य।(42)

दलित साहित्य का सौन्द्रर्य शास्त्र पुस्तक में 'दलित साहित्य' को परिभाषित करते हुए ओमप्रकाश बाल्मीकि कहते हैं -

> दलित साहित्य जन साहित्य है, यानी मास लिटरेचर। सिर्फ इतना ही नहीं, लिटरेचर ऑफ एक्शन भी है, जो मानवीय मूल्यों की भूमिका पर सामंती मानसिक्ता के विरूद्ध आक्रोश जनित संघर्ष है इसी संघर्ष और विद्रोह से जन्मा है दलित विमर्श।(15)

दलित साहित्य विमर्श पुस्तक में कृष्ण दत्त पालिवाल 'दलित साहित्य' के मूल में जो भावना है उसे परिभाषित करते हुए कहते हैं- "दलित साहित्य की मूल प्रवृति विद्रोह और आक्रोश को माना गया है।"(87)
दलित साहित्य अनुभव, संघर्ष एवं यथार्थ पुस्तक में मोहनदास नैमिशराय तथा ओमप्रकाश बाल्मीकि के 'दलित साहित्य' सम्बन्धी विचारों को प्रस्तुत किया गया है मोहनदास नैमिशराय के अनुसारः "शोषक वर्ग के खिलाफ अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करते हुए समाज में समता, बन्धुत्व तथा मैत्री की स्थापना करना ही दलित साहित्य का उद्देश्य है।"(8) ओमप्रकाश बाल्मीकि के अनुसारः

> दलित साहित्य समाज में समानता, भाईचारा और मानवीय स्वतन्त्रता की स्थापना के लिए प्रतिबद्ध है। उसका मानना है कि मनुष्य ही सर्वोपरि है। इस प्रकृति में जो कुछ भी हमारे सामने है, वह मनुष्य की ही देन है। इसलिए मनुष्य की महत्ता को स्वीकार करते हुए दलित साहित्य मनुष्यता का साहित्य है।(8)

हिन्दी दलित साहित्य की दस्तक पुस्तक में गौतम भाईदास कुँवर 'दलित साहित्य' के स्वरूप को परिभाषित करते हुए कहते हैं -

> अतः दलित साहित्य वर्णवादी, विषमता के विरूद्ध निर्माण होने वाला आक्रोश का साहित्य है। तथाकथित मनुवादी संस्कृति ने जो मानवता हीन सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक, प्रतीकों को स्थापित कर दलित समाज को गुलाम बनाया था उसी गुलामी के विरूद्ध नकार का साहित्य ही दलित साहित्य है। दलित साहित्य में मानवतावादी समाज मूल्य, वेदना, पीड़ा, दुःख, आक्रोश, नकार, संवेदना, स्हानुभूति को चित्रित किया गया है।(65)

विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई 'दलित साहित्य' की परिभाषा से यह स्पष्ट होता है कि दलित साहित्य समाज सापेक्ष है। 'दलित साहित्य' के केन्द्र में मानव मुक्ति है। दलितों की भोगी हुई पीड़ा की अभिव्यक्ति ही 'दलित साहित्य' है। दलित साहित्य की मूल संवेदना के साथ-साथ दलित साहित्य मनुष्य की स्वतन्त्रता, समता और बन्धुत्व की भावना को सर्वोपरि मानता है। वास्तव में दलित साहित्य से अभिप्राय उस साहित्य से है जिसमें दलितों ने स्वयं अपनी पीड़ा को रूपायित किया है, अपने जीवन संघर्ष में दलितों ने जिस यथार्थ को भोगा है। दलित साहित्य उनकी उसी अभिव्यक्ति का साहित्य है। वह कला कला के लिए नहीं बल्कि जीवन और जीजिविषा का साहित्य है। साहित्य के अंतर्गत एक वर्ग विशेष की पीड़ा, विद्रोह को स्पष्ट रूप से सच्चाई के धरातल पर रहते हुए अभिव्यक्त करना ही दलित साहित्य का उद्देश्य है। दलित साहित्य का स्वरूप निर्धारण करने के लिए इस साहित्य की परम्परा और साहित्य में इसकी प्रस्तुति अर्थात इसके ऐतिहासिक परिपेक्ष्य को जानना अति आवश्यक है।

1.4 दलित विमर्श का ऐतिहासिक परिपेक्ष्य

हिन्दी दलित साहित्य के विकास की पृष्ठभूमि तो लगभग सौ वर्ष पहले हीरा डोम की कविताओं में दिख जाती है लेकिन दलित वैचारिकी एवं उसके सिद्धांत का विकास

हज़ारों सालों पहले दिखाई पड़ता है। महात्मा बुद्ध, सिद्धों और नाथों ने हज़ारों सालों पहले जाति प्रथा का विरोध किया था परन्तु दलित वैचारिकी का विकास ई.वी.रामास्वामी पेरियार, महात्मा ज्योतिबा फूले और बाबा साहब अम्बेडकर के दर्शन पर ही संभव हुआ है। डॉ.अम्बेडकर का दर्शन ही आज दलित अस्मिता की पहचान है। यह दर्शन मानवीय संवेदनाओं, समतामूलक समाज की स्थापना, स्वतन्त्रता के अधिकार, आपसी बंधुत्व की भावना और वर्ण व्यवस्था से मुक्त होकर जीवन जीने को सरोकारों का दर्शन है। 'दलित साहित्य' भले ही आधुनिक युग की उपलब्धि है किंतु इसका आश्य यह नहीं है कि दलित साहित्य के रचनाकार पहले नहीं थे। दलित विमर्श का प्रत्यक्ष सम्बन्ध 1970 में चली दलित पैंथर लहर से है, परन्तु आधुनिक युग के इस अस्मिता मूलक विमर्श की जड़े इतिहास में देखने को मिलती हैं। ऐतिहासिक परिपेक्ष्य में दलित विमर्श की पड़ताल के आधार पर हम देखते हैं कि आधुनिक काल से पहले, अगर मध्यकाल और बुद्ध के जमाने की बात छोड़ दी जाय तो वर्ण व्यवस्था तो मनु के समय से ही विद्यमान है, हाँ ये अलग बात है कि दलित सम्बन्धी चिंतन एवं अवधारणा उस समय न के समान थी। उस समय दलित वर्ग से अभिप्राय निम्न जातियों से लिया जाता था। भारतीय समाज व्यवस्था में दलितों की स्थिति सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक हर दृष्टि से हाशिए पर या हाशिए के बाहर की रही है उनका काम समाज–व्यवस्था के ऊपरी हिस्से की आजीवन सेवा करना था। कभी कभार थोड़ी आजादी के साथ और ज्यादातर पूरी गुलामी के साथ। बुद्ध ने वर्ण–व्यवस्था के इस जड़ ढांचे को कुछ ढीला किया। शम्बूक, एकलव्य और कर्ण के साथ जो व्यवहार हुआ वो इसी वर्ण व्यवस्था का ही परिणाम था। वर्ण व्यवस्था के जड़ ढांचे को बुद्ध ने धम्म के धरातल पर ढीला किया। धम्म के बाहर का समाज अपनी रूढ़ियों पर कायम रहा। उन्होंने अपने धम्म में स्त्रियों और दलितों के प्रवेश की स्वीकृति दी, यह बड़ी बात थी।

आदिकाल से लेकर मध्यकाल तक हिन्दी साहित्य में सिद्दों नाथों और निर्गुणियों ने स्वर्ण विशेषाधिकार वाली वर्ण व्यवस्था को, उसका समर्थन करने वाले शास्त्रों को, धर्म व्यवस्था को, बड़ी चुनौती दी और उनके धार्मिक क्रिया कलापों और कर्म काण्डों की खिल्ली उड़ायी। वर्ण व्यवस्था के विरोध के कारण सिद्दों नाथों और निर्गुणियों में अनेक अस्पृश्य दलित साधक और भक्त शामिल हुए लेकिन यह सारा विरोध सामान्यतः विचार और साधना के स्तर पर था, जो कि उनकी वाणी में देखने को मिलता है और यही से ही दलित साहित्य का प्रादुर्भाव होता है, अर्थात इस काल को हम दलित विमर्श की पीठिका भी कह सकते हैं। इन्होंने ही समाज में छुआछूत, धार्मिक अंधविश्वास का खण्डन किया और दलित चेतना की अलख जगाई। सिद्धों के बाद नाथों ने भी दलित लोगों में जागृति का प्रयास किया। जिनका समय लगभग 12 से 14 वीं शताब्दी तक माना गया। यह भी बौद्ध धर्म परम्परा के अनुयायी थे इसलिए इनके साहित्य में पाखण्ड, अस्पृश्यता और सामाजिक अन्याय के विरूद्ध दर्शन होते हैं। सिद्धों नाथों की परम्परा को और भी सशक्त रूप पन्द्रहवी शताब्दी में संत कवियों/निर्गुण कवियों ने दिया। मध्यकाल की समय अवधि में अनेक जातियों और संस्कृतियों के संगम के साथ भारतीयों की वर्ण व्यवस्था कट्टर और मिथ्या आडम्बर में सिक्त होती चली गई और सामाजिक विघटन प्रचंड रूप लेता चला गया। वर्ण व्यवस्था की खाई में अनेक जातियों उप-जातियों का भी अंकुर फूटने लगा था। वर्ण कट्टरता और धर्म में व्याप्त छद्म आचरणों के कारण नए-नए मत और धर्म विकसित होने लगे। वर्णों की गहरी होती खाई के बीच जहां नए मत्त-मतांत्र आस्तित्व में आए, वहीं अनेक जातियों का भी प्रादुर्भाव हुआ जैसे कुम्हार, नाई, धोबी, धुन्ना, चमार, दर्जी, प्रजातियाँ इत्यादि। व्यवसाय के आधार पर नए जाति वर्ग सामने आए। उत्तर भारत के संत रामानंद ने समाज में परिवर्तन लाने का बड़ा कार्य किया। संत कवि मध्ययुगीन काव्य में सहज भक्ति सम्प्रदाय के पोष्क हुए। उस समय नाम जप

मोक्ष प्राप्ति का प्रलोभन बड़ा मद्दगार सिद्ध हुआ। दलित और घृणित समझी जाने वाली जातियों को अपनी बात कहने का अवसर मिला। उनसे जुड़े अनेक भक्तों को अपनी काव्य में प्रतिभा, धर्मानुभूति की क्षमता और पवित्र जीवन यापन के नियम से ही संत पद के साथ समाज में मान-सम्मान की प्राप्ति हुई। भक्ति की नई जागृति से दलित एवं उपेक्षित, जातियों में उत्साह का संचार हुआ और उन्हें तत्कालीन धर्म अधिकारियों, ब्राह्मणों के साथ वाद-विवाद और धार्मिक चर्चा का हौसला हुआ। संतों द्वारा वाणी के रूप में जीवन के विविध पक्षों पर चलाई लेखनी का जिक्र करते हुए डॉ. हरिश्चंद्र वर्मा *हिन्दी साहित्य का इतिहास* पुस्तक में कहते हैं किः-

> संतो की वाणी में समाज के नकारात्मक और साकारात्मक दो पहलू हैं। नकारात्मक पहलू के अंतर्गत उन्होंने, जाति-पाति, छुआछूत, सामाजिक-विषमता, पाखण्ड-अत्याचार, जीव-हिंसा, भोगवाद, अंधविश्वास, आदि मानवतावादी प्रवृतियों के प्रति विद्रोह किया। साकारात्मक पहलू के अंतर्गत उन्होंने प्रेम अहिंसा, सत्य, करूणा आदि शास्वत मूल्यों की प्रतिष्ठा की।(118)

संत रामानंद की इस भक्ति परम्परा को उनके शिष्यों कबीर और रविदास ने आगे बढ़ाया। कबीर (जुलाहा) और रविदास (चमार) एक मुस्लिम समाज के निचले स्तर का और दूसरा हिन्दू समाज के निचले स्तर का। दोनों ही समाज से उपेक्षित, दोनों का गुरू एक, दोनों की आर्थिक परिस्थितियां भी एक। जीवन जीने के लिए अपनी जातीय जीविका को वह त्याग नहीं सके, इसलिए गृहस्थ रहते हुए वे अपनी भक्ति में लीन रहते थे। इन्होंने दब्बे कुचले लोगों के मन में व्याप्त हीनता के विरूद्ध आवाज उठाई। संत कबीर की इसी आलोचनात्मक प्रवृति के कारण कबीर को विद्रोही संत भी क्हा जाता है। उन्होंने जाति व्यवस्था का खुले शब्दों में खण्डन किया। संत रविदास के जाति-पाति सम्बन्धी विचारों को डॉ.सुशील बाला द्वारा संपादित पुस्तक *संत*

साहित्य की वर्तमान परिवेश में प्रासंगिकता में प्रस्तुत किया गया है, संत रविदास भी जाति को मानवीय एकता में बाधा मानते हुए जाति व्यवस्था का खुल कर विरोध करते हुए क्हते हैं किः "जाति-जाति में जाति है ,ज्यों केलन में पात। रैदास न मानुष जुड़ सके, जो लो जाति न जाति।"(94)

पंजाबी साहित्य में दलित विमर्श की शूरूआत 13वीं शताब्दी के अंत में भक्त कवि नामदेव जी से शुरू हुई। भक्ति लहर के संत कवियों ने हिन्दू समाज में प्रचलित जाति व्यवस्था की खुल कर निंदा की। भक्त कवियों ने ब्राह्मणवादी विचाराधारा जो जाति-पाति का समर्थन करती थी का विरोध किया। इनका यह प्रयास साधना अथवा धार्मिक स्तर पर था। पंजाबी साहित्य में मध्यकाल के दौरान तीन प्रकार की काव्य धाराएँ चली। (1) गुरमत्त काव्य धारा(2) सूफी काव्य धारा(3) किस्सा काव्य धारा। पंजाबी साहित्य में दलित विमर्श की पृष्ठभूमि मध्यकालीन पंजाबी साहित्य से मानी जाती है। 15वीं शताब्दी के अंत में पैदा हुई गुरमति काव्य धारा ने जाति–पाति और ऊँच-नीच वाली सामाजिक व्यवस्था को नकारा और उसके स्थान पर बराबरी और मानवतावाद के सिद्धांत को स्थापित करने का प्रयास किया। सिक्ख धर्म के संस्थापक श्री गुरू नानक देव जी ने 'न' कोई हिन्दू और 'न' कोई मुस्लमान' का नारा देते हुए पंजाब में सिक्ख धर्म की स्थापना की। उस समय सिक्खों के प्रथम गुरू श्री गुरू नानक देव जी ने भी पंजाब में तत्कालीन समाज में व्याप्त छुतछात, जात-पात, ऊँच-नीच जैसी कुरीतियों के निवारण और निराकरण का प्रयास किया। उनके इस कथन को सुशीलबाला ने अपनी सम्पादित पुस्तक *संत साहित्य की वर्तमान परिवेश में प्रासंगिकता* में प्रस्तुत किया है जिसमें सिक्ख गुरू सबकों एक ही परम पिता परमात्मा की संतान मानते हुए मानव-मानव में परस्पर भेद को अस्वीकार करते हुए कहते हैं "नीचा अंदरि नीच जाति, नीची हूँ अति नीच। नानक तीन के संगि साथि, वड्डिया सिऊ क्या रीस।"(145) इसके अतिरिक्त सिक्ख गुरूओं ने लंगर प्रथा आरम्भ

करके जातिवाद को समाज की जड़ से खत्म करने का प्रयास किया। श्री गुरू अर्जन देव जी द्वारा गुरू ग्रंथ साहिब जी के संपादन के समय निम्न जाति के भक्तों की वाणी को इसमें स्थान देना और श्री गुरू गोबिंद सिंह जी के द्वारा खालसा पंथ की स्थापना करनी, इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि सिक्ख गुरू इस समस्या से पूरी तरह सुचेत थे कि जब तक जाति-पाति और ऊँच-नीच के भेद-भाव को समाज में से समाप्त नहीं किया जाता तब तक सामाजिक समानता वाले समाज की स्थापना नहीं हो सकती। श्री गुरू ग्रंथ साहब में वर्णित भक्तों (भगतों) में नामदेव, कबीर, रविदास, सेन, प्रमुख हैं। इन भक्तों की वाणी को एकत्रित करने वाले गुरू नानक देव जी ही थे। मध्यकालीन पंजाबी सूफी काव्य धारा के कवियों ने जहाँ अपने काव्य में इस्लामिक पक्ष को बाखूबी चित्रित किया वहीं इस्लामिक कवि शाह हुसैन ने अपने काव्य में जाति-पाति को अपने वर्णित करते हुए क्हा हैं-- "नाओं हुसैन तै जाति जुलाहा, गालीआं देंदीआं ताणीआं वालीआं" सूफी काव्य में भी सूफी कवियों ने समाज में व्याप्त बुराईयों को तथा धार्मिक कर्म काण्डों को अपने काव्य के माध्यम से वाणी दी। पंजाबी भाषा के प्रसिद्ध किस्सा कवियों ने भी कहीं न कहीं अपने काव्य में इस समस्या को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। पंजाबी के प्रसिद्ध किस्सा कवि वारिस शाह के जाति सम्बन्धी विचारों को*दलित सरोकार अतै साहित्य* पुस्तक में डॉ. चरनदीप ने प्रस्तुत किया हैः-

" नहीं चूहड़े दा पुत्तर होए सय्यद,
घोड़े होण न बेटे लेलीआं दे
वारिस शाह फकीर ता नहीं हुन्दै,
पुत्तर जट्टां ते मोचिआं तेलिआं दे।"(87-88)

मध्यकालीन काव्य (गुरबाणी), सूफी काव्य और किस्सा काव्य में पंजाबी भाषा के कवियों ने जाति विमर्श को अपने-अपने काव्य में विभिन्न माध्यमों से प्रस्तुत

किया है अर्थात मध्यकालीन तीनों धाराओं ने सामाजिक वर्ण व्यवस्था (जाति-पाति) को प्रस्तुत किया है। स्पष्ट है कि उपरोक्त वर्णित सामाजिक सरोकार उस समय पूरे भारत में फैल चुकी भक्ति लहर के साथ मिलते हैं। जो कि समाज में जाति-पाति विरोधी थे।

दलित साहित्य के जन्म और विकास का बीज आधुनिक लोकतन्त्र की परिकल्पना से जुड़ा है। भारतीय सुधार आन्दोलनों में दलितों की अमानवीय स्थिति, गुलामी, शोषण की ओर सबसे पहले ध्यान ज्योतिबा फूले का गया। फूले ने दलितों को जागृत करने के लिए साहित्य का सहारा लिया और *गुलामगीरी*, *किसान का कोड़ा*, *त्रिरत्न* आदि रचनाएं लिखी। उनकी ये कृतियां दलितों के उद्धार से जुड़ी थी। संवाद शैली में लिखी इस पुस्तक में फूले ने ब्राह्मणवाद पर तिख्खे शब्दों में व्यंग्य किया है। महात्मा ज्योतिबा फूले की रचनाओं में दलित दर्द की यथार्थ अभिव्यक्ति हुई है। समस्त भारत में अम्बेडकरवादी विचारधारा से पहले ज्योतिबा फूले, हीराडोम, और अछूता नंद इत्यादि ऐसे कवि हैं जिन से आधुनिक दलित साहित्य की शुरूआत मानी जाती है। इन्होंने हिन्दी में इस विमर्श को आगे बढ़ाया। 1914 में *सरस्वती* पत्रिका में छपी 'हीरा डोम' की भोजपुरी कविता 'अछूत की शिकायत' को वर्तमान दलित काव्य धारा की पहली कविता कहा जा सकता है। उत्तर प्रदेश के आदि हिन्दू आंदोलन के प्रवर्तक स्वामी अछूतानंद जो कि 'हरीहर' उपनाम से कविता लिखते थे, प्रथम दलित साहित्यकार स्वीकार किए जाते हैं। स्वामी अछूतानंद की एक कविता 1912 में भी प्रकाशित हुई जिससे पता चलता है कि वो हीराडोम से भी पहले काव्य लिखने लगे थे। *चाँद* पत्रिका का 'अछूत' अंक सन् 1927 में प्रकाशित हुआ। इसी दौरान अम्बेडकर ने भी *बहिष्कृत भारत* पत्र निकाला जिससे दलितों को शिक्षित और संगठित करने का प्रयास किया। वास्तव में दलित साहित्य का सीधा सम्बन्ध बाबा साहब की चिंतन और दृष्टि से है।

डॉ.अम्बेडकर ने दलित विमर्श के लिए संजीवनी का काम किया। ब्राह्मणावादी व्यवस्था के प्रति अम्बेडकर के सामाजिक राजनीतिक और धार्मिक तर्कों से दलितों में जागृति आई अर्थात पहली बार दलित जातियों में चेतना आई।

हिन्दी साहित्य की प्रगतिशील धारा से जुड़े लेखकों ने दलित जीवन के यथार्थ को अपनी रचनाओं का केन्द्र बनाया। इन लेखकों में मुंशी प्रेमचन्द का नाम प्रमुख है। उन्होंने *गोदान* और *कर्मभूमि* उपन्यासों में पहली बार निम्न वर्गों के यथार्थ को प्रस्तुत किया। प्रेमचन्द के अतिरिक्त निराला, अमृतलाल नागर, रांग्य राघव, नागार्जुन इत्यादि प्रगतिशील धारा से जुड़े लेखकों ने हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श को प्रस्तुत किया। मराठी साहित्य से प्रभावित हो कर हिन्दी साहित्य जगत में अम्बेडकरवादी विचारधारा को लेकर चली साहित्यक प्रवृति 1970 से देखने को मिली। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और अंतिम दो दशकों में कई नए विमर्श सामने आए, जिनमें से एक दलित विमर्श भी है। जिसकी रचना विभिन्न भाषाओं के गैर-दलित और दलित साहित्यकारों ने की है। आज दलित विमर्श और लेखन की कई धाराएं हैं--

(1) पहली धारा गैर-दलित लेखकों की है जिनकी लेखनी का आधार स्हानुभूति है।

(2) दूसरी धारा दलितों को सर्वहारा मानने वाले मार्क्सवादी लेखकों की है, जो कि केवल आर्थिक विषमता को ही जीवन का आधार मानते हैं।

(3) तीसरी धारा इन दोनों धाराओं को मुख्य दलित साहित्य धारा न मानने वाले दलित लेखकों की मुख्य धारा है, जिन्होंने दलित जीवन की यातना सही है। जिनकी लेखनी का आधार स्वानुभूति है। जिसके मूल में बुद्ध, फूले, शाहू तथा अम्बेडकरी चिंतन प्रणाली है।

आधुनिक काल में ज्योतिबा फूले की विचारधारा ने दलित साहित्य को गहराई से प्रभावित किया है। उनका स्पष्ट मानना था कि ब्राह्मण इस देश में बाहर से आए और उन्होंने यहाँ के मूल निवासियों को पराजित कर गुलाम बनाया। डॉ.अम्बेडकर ने *मनुस्मृति* का दहन करके ब्राह्मणवादी संस्कृति को चुनौती दी। इन्होंने दलित आंदोलन को तार्किक एवं वैज्ञानिक चेतना से लैश कर दिया। दलितों की मुक्ति, उनकी आजादी और अछूतपन को समाप्त कर एक नए समाज के निर्माण का स्वप्न अम्बेडकर ने देखा। दलित समाज को शिक्षित, संगठित करने का जो संघर्ष डॉ.अम्बेडकर ने किया वो सदियों तक दलित समुदाय के लिए प्रेरणा स्त्रोत का काम करेगा। दलित रचनाकार महात्मा ज्योतिबा फूले और डॉ.अम्बेडकर से प्रेरणा लेते हैं वही उनकी वैचारिकी के केन्द्र में है।

1.5 साहित्य में दलित विमर्श की प्रस्तुति

दलित साहित्य पूरी तरह से अम्बेडकर की विचारधारा एवं दर्शन पर आधारित है जिसकी पृष्ठभूमि में बुद्ध का दर्शन है। इसलिए दलित लेखक हो या गैर-दलित, उनकी रचना में अम्बेडकर एवं बुद्ध की विचारधारा का प्रभाव होना अति आवश्यक है। वास्तव में दलित साहित्य का आधार अम्बेडकरवादी साहित्य को माना जाता है जो कि 1970 के आसपास महाराष्ट्र से आरम्भ हुआ। सही अर्थों में सातवें-आठवें दशक में मराठी भाषा में पहले–पहल दलित चेतना से सम्पन्न साहित्य का लेखन और दलित विमर्श की शुरूआत हुई। आठवें दशक के 'दलित पैंथर्स' मूवमैंट की स्थापना अर्जुन डांगले और जे.वी.पवार ने अमेरीका के ब्लैक मूवमैंट के आधार पर की। इससे जुड़े सारे ही लेखकों का लेखन बहुत उत्तेजक था। इस मराठी भाषी साहित्यिक आंदोलन ने अन्य भाषा-भाषी राज्यों के साहित्य को प्रेरित और प्रोत्साहित किया। नवें दशक में अनेक दलित युवा पढ़ लिखकर नौकरी के साथ

साहित्य के मैदान में उतरे और अम्बेडकर दर्शन से प्रेरणा लेकर दलित विमर्श का साहित्य लिखने लगे। इनमें मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश बाल्मीकि, सूरजपाल चौहान, जयप्रकाश कर्दम, कँवल भारती, श्यौराज सिंह बेचैन आदि के नाम विशेष रूप से लिए जा सकते हैं। हिन्दी साहित्य में इन्होंने पहले-पहल हस्तक्षेप कहानियों के माध्यम से किया, लेकिन हिन्दी पाठकों के मानस को सबसे अधिक आंदोलित करने का काम आत्म-कथाओं ने किया। जिनमें *अपने अपने पिंजरे*, *जूठन*, *तिरस्कृत*, *सन्तप्त*, *मैं भंगी हूँ*, *नागफनी* आदि प्रमुख हैं। धीरे–धीरे दलित साहित्यकारों ने आत्मकथा, कहानी, उपन्यास, कविता, नाटक, आलोचना, सभी क्षेत्रों में प्रभावशाली लेखन किया। हिन्दी साहित्य में अनेक साहित्यकारों ने उपन्यास, कहानियाँ, कविताएँ और आत्मकथाएँ लिखी हैं। महात्मा फूले की आत्मकथा, काव्य और नाटकों में यह विमर्श पहली बार रचनात्मक अनुभव बना। अम्बेडकर युग से पहले 'हीरा डोम' सबसे पहले आदरणीय दलित लेखक माने जाते हैं। अपनी मार्मिक कविता 'अछूत की शिकायत' से उन्होंने पहली बार हिन्दी लेखन में दलित सोच को शामिल किया। यह कविता *सरस्वती* पत्रिका के मुख्य पृष्ठ पर छपी। इसी दौर के दलित लेखकों में हरिहर नाम से रचना करने वाले स्वामी अछूतानंद भी महत्वपूर्ण दलित रचनाकार हैं। इनके ग्रंथों में *राम राज्य*, *न्याय*, *आदिवंश का डंका*, *आदिवंश* आदि प्रमुख हैं। अयौध्यानाथ दण्डी, जनकवि बिहारी लाल हरित, बख्शीदास, स्वामी शंकरानंद, मोती लाल, इत्यादि लेखक दलित साहित्य के सशक्त पक्षधर थे।

हिन्दी दलित कविता में सूरजपाल चौहान की कविता *साजिस* में व्यंग्य को आधार बनाकर एक इन्टरव्यू का सिलसिला प्रस्तुत किया गया है। जिसमें विशेषज्ञ ने शर्मा जाति के युवक से सिगरट का स्पेलिंग पूछा। गुप्ता से पोलेंड का स्पेलिंग पूछा। ठाकुर भवानी से इगलैंड़ का स्पेलिंग पूछा। उनका चयन तुरंत हुआ। रिजर्व सीट के प्रत्यासी से चोकेस्लोवाकिया का स्पेलिंग पूछा। वह उसके वश की बात नहीं थी वह

अयोग्य ठहराया गया। “पहले लिखते है नहीं चले आते हैं नौकरी माँगने” यह विशेषज्ञ की टिप्पणी थी। तत्कालीन दलित समाज की विडम्बना प्रस्तुत कविता में सहज रूप से प्रस्तुत हुई है। ‘मैं ने नहीं’ कविता में कवि अति अभिजात्य कहलाने वालों को देश के तमाम गंदे, गलत, कांडों का दोषी मानते हैं। मासूमों की बलि, मंदिर में बलात्कार हवाला, शेयर घोटाला, विदेशियों को गुप्त सूचनाएं बेचना जैसे कई मामलों में वे अपराधी हैं। दलितों से कवि कहते हैं-

“तुम अनपढ़ होकर भी ज्ञानी

छू सकते हो आकाश जमीं से

कुचक्र चलाकर

कटवा सकते हो अगूँठा

गुरू दक्षिणा के नाम पर।” (22)

दयानंद बटोही दलित चेतना के मशहूर प्रतिभा धनी कवि हैं। वह सहज और व्यापक संवेदना के कवि हैं। उनका दलित चेतना को लेकर लिखा गया काव्य संग्रह *यातना की आंखे* हैं जो कि श्रमिकों के जीवन से जुड़ा हुआ है। डॉ.रामदरश मिश्र *हिन्दी दलित साहित्यःएक मूल्यांकन* पुस्तक में *यातना की आँखे* नामक काव्य संग्रह पर अपने विचार प्रक्ट करते हुए कहते हैं-

> सामान्य जीवन का दर्द तो हैं किन्तु कुछ कविताएं बेहद पसंद आई। रीरते रिश्ते, धरती और धुन, आँख दर्द, ये कविताएं आपके भविष्य के प्रति विश्वास जगाती हैं।”(60-61)

दलितों के दर्द पर विचार करते हुए उनके अन्तरमन की आग पर प्रकाश डालते हुए ‘अंतरमन की आग’ कविता में कवि कहता है कि वास्तव में दलित कविता दर्द और

संघर्ष की कविता है। उनकी कविता में त्रास है। दलितों की जिंदगी की कठिनाईयों एवं बाधाओं पर प्रकाश डालते हुए कवि ने 'आत्म बोध' कविता में दलितों के प्रति स्हानुभूति प्रक्ट की है। 'कवि असंगघोष' ने अपने काव्य में हाशिए पर जीवन जीने बाले भद्र समाज की तथाकथित नैतिकता और उपेक्षा के शिकार लोगों के जीवन संदर्भों को प्रस्तुत किया है। इनकी रचना *धर्म तुम्हें तिलांजलि देता हूँ* में समाज को विकृत बनाने वाली जाति व्यवस्था की निर्रथकता और उसकों तिलांजलि देने की चाह कवि ने व्यकत की है। कवि के अनुसार जाति न तो खेतों में पैदा हुई है और न ही अंदर बाहर रखे गमलों में बोई गई है। सूरजपाल चौहान का काव्य संग्रह *क्यों विश्वास करू* में दलितों के दमन–शमन, उपहास, आशा-अकांक्षा, और विसंगति अथवा सामाजिक व्यवस्था के प्रति नकार विद्यमान है। डॉ.सिन्धु ए. ने दलित कविता सम्बन्धी विचारों को *हिन्दी दलित साहित्यः एक मूल्यांकन* पुस्तक में प्रस्तुत किया है-

> वर्तमान युग की एक सशक्त काव्य धारा है-दलित काव्य धारा, जिसमें प्राचीन मूल्यों को तिरस्कृत कर नवीन मूल्यों की स्थापना की गई है। सामाजिक अन्याय के विरूद्ध विद्रोह एवं आक्रोश दलित कविता में विद्यमान है।(120)

भारतीय दलित साहित्य में कविता का अपना ही एक अलग महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें शोषित और पीड़ित जन समुदाय की आवाज है और इसमें दलित वर्ग की व्यथा, संघर्ष, शोषण और यथार्थ को वाणी दी गई है।

पंजाबी साहित्य के क्षेत्र में दलित कविता ने अपनी विशेष पहचान बनाई है। गुरदास आलम की कविता 'अछूत का ईलाज', 'मजदूर', 'काफ़ले दा गीत', 'आजाद हो गए हां', 'आजादी',चरनदास निड़धक की कविता 'मैं तेरे तो जान वारदी',

'भीम राऊ जी मरना तेरा', 'बागी होणा दस्स गया', चानण गोबिन्दपुरी की कविता 'डॉ.अम्बेडकर जी', और प्रीतम रामदास पुरी की कविता 'मैं ता भीम दीवानी होई', 'हस्ती ए अम्बेडकर', 'भीम दी औलाद हां', प्रमुख दलितवादी कविताएं हैं। लेखक सुजान सिंह पंजाब में पैदा हुए अम्बेडकरवादी साहित्य की ही उपज है। जिसकी जड़ों को बीज रूप में प्रगितवादी और जुझारवादी साहित्य में देखा जा सकता है। सुजान सिंह, संत सिंह सेखों, संतोख सिंह धीर, गुरदयाल सिंह, संतराम उदासी और लाल सिंह दिल, इत्यादि कवियों ने अपनी कविताओं में दलित मनुष्य के जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। आधुनिक पंजाबी कविता में दलित विमर्श को आधार रूप में प्रो. पूरन सिंह, धनी राम चात्रिक और मोहन सिंह ने वाणी दी है। आप प्रगितवादी काव्य धारा के कवि हैं। *दलित दृष्टि* पुस्तक में सरबजीत सिंह ने मोहन सिंह की कविता 'आओं नचिच्ए' जो कि राष्ट्रवाद, मानवतावाद और आदर्शवाद की भावना से परिपूर्ण है को प्रस्तुत किया हैः-

"काले नच्चण, गौरे नच्चण

नच्चण अमीर कंगाल वले

हिन्दू नच्चण, मुस्लिम नच्चण

कम्मी ते चमराल वले"(106)

पंजाबी कविता में दलित पहचान का मुद्दा गुरदास आलम की कविता से आरम्भ होता है। उनके लिए यह दलित मुक्ति का मसला श्रमिक क्षेणी की मुक्ति से जुड़ा मसला है। दलित मानव की पहचान से जूझ रही कविता अस्वीकृति और विद्रोह को वाणी ही नहीं देती बल्कि सामाजिक यथार्थ की विभिन्न परतों के साथ भी संवाद स्थापित करती है क्योंकि इसका पात्र सताया हुआ, दुत्तकारा हुआ, और पतित है। दलित कवियों के काव्य का मसला दलित मानव की मुक्ति का मसला है।

दलित विमर्श का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है कि वह दलित मनुष्य से छीने गए मनुष्य होने के अधिकार को वापिस हासिल करके मानवता की स्थापना करना चाहता है ।

कहानी हिन्दी साहित्य में दलित पृष्ठभूमि की कहानियां अनेक लेखकों ने लिखी हैं। स्वतन्त्रता के बाद हिन्दी में पहली दलित कहानी 'वचनबद्ध' है जो अप्रैल 1975 में *मुक्ति समारिका* पत्रिका में छपी। इस के बाद मौहनदास नैमिशराय की कहानी 'सबसे बड़ा दुख', और 'ओमप्रकाश बाल्मीकि' की कहानी 'अन्धेरी बस्ती' क्रमवार *कथालोक* और *निरणायक भीम* पत्रिका में प्रकाशित हुई। मोहनदास नैमिश्राय ने 'घायल शहर की एक बस्ती' कहानी में मेरठ में हुए हिन्दू मुस्लिम साम्प्रदायिक दंगों के बीच दलितों की उस भयावह त्रासदी को व्यक्त किया है, जिसमें उन्हें एहसास होता है कि वह न हिन्दू है और न ही मुस्लमान। इसी प्रकार प्रेम कपाड़िया की कहानी 'जीवन साथी' में बताया गया है कि उच्च जाति की रेखा दलित जाति के प्रेम नामक युवक से प्यार करती है और उसे अपना जीवन साथी बनाना चाहती है। रेखा प्रेम को अपनी माँ से मिलवाती है। उधर प्रेम स्वयं के अनाथ होने की पीड़ा भी रेखा की माँ के आगे ब्यान करता है, फिर माँ भी रेखा का साथ देती है। इस प्रकार रेखा की प्रेम के साथ सगाई हो जाती है परन्तु रेखा के मामा को यह मंजूर नही होता। जिसकी वजह से रेखा घर से भाग जाती है। परिणाम स्वरूप रेखा के मामा के बदमाशों द्वारा रेखा की हत्या कर दी जाती है और प्रेम भी स्वयं अपने आप को खत्म कर लेता है। इस कहानी में लेखक ने दलित होने की पीड़ा को ही नहीं उठाया बल्कि उनके जीवन संघर्ष को भी दर्शाया है। राजेश कुमार बौद्ध ने 'आतंक' कहानी में ठाकुरों के जिस आतंक को शीघ्रता से सामने रखा है उसका पटाक्षेप भी शीघ्र ही हो जाता है। ठाकुर चमन एक छोटी सी बात को लेकर दलित युवती राखी को यातना स्वरूप बलात्कार से लेकर निर्वस्त्र कर के जलाकर हत्या के अंजाम तक पहुँचा देता है। उसका बदला उसकी देवरानी विमला तीव्र वेग के साथ लेती है। वह ठाकुर का गला घोंट

कर उसके रिवालवर के साथ ही ठाकुर को निढाल कर देती है। उसके अनुसार लाज शर्म तो हमेशा शरीर ढक कर रहने में ही होती है, परन्तु औरत नंगी हो या ढकी हुई हमेशा सबला ही होती है। इस प्रकार यह कहानी दलित संवेदना को व्यक्त करने वाली कहानी है। ओमप्रकाश बाल्मीकि ने 'शवयात्रा' कहानी में दलित जातियों के आपसी भेदभाव को प्रक्ट किया है। प्रस्तुत कहानी में चमारों के गाँव में एक बल्हार परिवार रहता है जो जोहड़ के उस पार बसा हुआ है। परिवार में सुरजा और उसकी पत्नी संतों रहते हैं। इनका लड़का कल्लू रेलवे में फीटर की नौकरी करता है। वह अपने माँ बाप को अपने साथ दिल्ली ले जाना चाहता है परन्तु वह राजी नहीं होते। एक बार संतो बीमार हो जाती है उसे डाक्टर के पास ले जाने के लिए बैलगाड़ी की आवश्यकता होती है परन्तु चमार उसे बैलगाड़ी नहीं देते जिससे उसकी रास्ते में ही मौत हो जाती है। यहाँ तक की उसकी शवयात्रा में भी कोई चमार शामिल नहीं होता। प्रस्तुत कहानी में लेखक ने दलित कही जानेवाली जातियों में जाति के आधार पर आपसी द्वेष को प्रस्तुत किया है।

पंजाबी कहानियों में दलित विमर्श को प्रस्तुत करती कहानियां सुजान सिंह की 'बाग्गा दा राखा', 'प्राहुणा', संत सिंह सेखों की कहानी 'कम्म की चम्म', कुलवंत सिंह विर्क की 'साबण दी चिप्पर', 'तूड़ी दी पंड', 'सांझ', संतोख सिंह धीर की कहानी 'कोई एक स्वार' और गुरदयाल सिंह की 'सैलाब' दलितों की हीन मानसिक्ता पर केंद्रित कहानियाँ हैं। 'सैलाब' कहानी में चमार जाति से सम्बन्धित आत्मा सिंह के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक रूतबे के परिवर्तनों को प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार पंजाबी साहित्य में भी कहानीकारों ने दलित विमर्श की कहानियां लिखीं हैं। सुजान सिंह ने 'बाग्गा दा राखा' कहानी में दलित समाज के तिरस्कार,घोर अमानवी, नीच और शोषकी व्यवहार के दुखांत को प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत कहानी में दलित युवक बारू के साथ सेठ लालू शाह के शोषण और अमानवीय व्यवहार से बारू की

मौत हो जाती है और इसका मार्मिक पक्ष यह है कि ये मौत भूख की वजह से होती है। बारू और उसके परिवार का आत्मसम्मान या मनुष्य होने का एहसास इतना क्षीण हो चुका होता है कि अब उनको साहूकार द्वारा गाली देना आम सी बात लगने लगती है। मोहन भंडारी की कहानी 'गंगाजल' कहानी के नाम के प्रतीक द्वारा सारी ब्राह्मणी जातिवादी धारा को स्पष्ट करती है। उच्च कल्चर के रूप में उभरी यह धारा गंगा/ वेदांत दर्शन/ और संस्कृति युक्त महाजनी सभ्याचार पर अधिक बल देती है। अतरजीत की कहानी 'ठुअहे' में दलित व्यक्तियों द्वारा गाँव से प्लायन कर शहर आकर जाति तिरस्कार से मुक्ति पाने के लिए अपने नाम के साथ उच्च जाति का वर्ण तो धारण कर लिया जाता है परन्तु उन्हें चाह कर भी इस मानसिक जाति द्वन्द्व से छुटकारा नहीं मिल पाता। प्रेमप्रकाश की कहानी 'लक्षमी', नच्छतर की 'हार जित्त', प्रेम गोरखी की कहानी 'वित्थ', नसराली की 'हड्डा रोड़ी', जिंदर की 'सौरी', इसी प्रकार की दलित विमर्श को प्रस्तुत करती कहानियां हैं।

आत्मकथाः हिन्दी साहित्य में साहित्यकारों द्वारा आत्मकथा के माध्यम से भी दलित विमर्श को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। हिन्दी भाषा में पहली दलित आत्मकथा *मैं भंगी हूँ* 'भगवानदास' द्वारा लिखी गई। ओमप्रकाश बाल्मीकि की आत्मकथा *जूठन* हजारों वर्षों से अंधेरे कुहासे में बंद ज्ञान से वंचित, शोषित, पीड़ित, और दलित जाति के लोगों की इच्छाओं अकांक्षाओं का चित्रण करने वाली आत्मकथा है। माता प्रसाद की रचना *झोपड़ी से राजभवन तक*, और मोहनदास नैमिशराय की आत्मकथा *अपने-अपने पिंजरे* आत्मकथा दो भागों में प्रकाशित हुई। डॉ. तुलसीराम की आत्मकथा *मुर्दहिया* में बुद्ध और मार्क्स के बीच जिस आवाजाही की प्रक्रिया दिखाई पड़ती है, उसका विस्तार *मणिकर्णिका* में है। तुलसीराम की आत्मकथा के दोनों हिस्सों के नाम मृत्यु वाचक हैं। जिस भय को वे धर्म की आधारभूत कल्पना मानते हैं। उस भय का सबसे बड़ा रूप मृत्यु है। राजकुमार सिद्धार्थ को बुद्ध बनाने में

इस मृत्यु के भय की भूमिका थी। अपने गाँव की मुर्दहिया के प्रति उनका जो आकर्षण है। वह जीवन के प्रति उसके बौद्ध को प्रभावित भी करता है और विस्तारित भी। बनारस आने पर भी उसे अपने गाँव की मुर्दहिया की याद आती है और वही याद उसे बनारस में मणिकर्णिका के पास ले आती है। *अपने-अपने पिंजरे* आत्मकथा में मोहनदास नैमिशराय ने चमार जाति वालों की सामाजिक आर्थिक स्थिति का आत्मवृत के माध्यम से परिचय दिया है कि चमार जो कि एक निम्नजाति है जिनका सामाजिक पेशा जुते बनाना है। चमारों के जीवन की विडम्बना यह है कि वे जुते बनाते हैं परन्तु वे स्वयं उसे पहन नहीं पाते क्योंकि वह आर्थिक रूप से अत्यंत विपन्न होते हैं तथा उनकी सामाजिक हैसियत इस बात की इज़ाजत नहीं देती। इस प्रकार निर्धनता एवं अपमान से ग्रस्त जीवन जीने के लिए विवश चमारों की स्थिति को मोहनदास ने *हिन्दी दलित साहित्य एक मूल्यांकन* पुस्तक में प्रस्तुत किया हैः

> हम लम्बे समय से अपमान सहते आए थे, पर गुनाहगार न थे हम। हम हारे हुए लोग थे, जिन्हें आर्यों ने जीतकर हाशिए पर डाल दिया था। हमारे पास अंग्रेजों के द्वारा दिए गए तमगे, मैडल, पुरस्कार न थे। हमारे पास था सिर्फ कड़वा अतीत और जख्मी अनुभव। मन और शरीर पर चोट पड़ती तो वे जखम हरे हो जाते। सदियों से गर्दिशों में रहते-रहते हम अपने इतिहास से कट गए थे। अपनी संस्कृति भूल गए थे।(70)

जूठन ओम प्रकाश बाल्मीकि के अदम्य साहस से भरी आत्म-कथा है। इसका *जूठन* शीर्षक भी हिन्दी के यशस्वी साहित्यकार राजेन्द्र यादव ने ही सुझाया था। 'जूठन' का शाब्दिक अर्थ थाली पर छोड़ने वाले खाने का टुकड़ा या अंश होता है। जब कोई व्यकित ऐसे खाने का अंश या टुकड़ा खाता है तो वह जूठन खाने वाला बन जाता है। भारत में सदियों से दलित या अस्पृश्य लोगों को उच्च वर्ग की जूठन खानी पड़ी।

इसलिए आत्मकथा का शीर्षक सदियों से भारत के सामाजिक पिरामिड के सबसे निचले स्तर पर रहने वाले दलित जीवन की असहनीय और अनुभव-दग्ध पीड़ाओं का ध्योतन करने वाला है। *जूठन* के आरंभ में चित्रित डब्बवाली जोहड़ी और चूहड़ों की बस्ती का चित्र दलित जीवन की त्रासदी और उसके यथार्थ को व्यकत करने वाला है। वास्तव में *जूठन* हजारों वर्षों से अंधेरे कुहासे में बंद ज्ञान से वंचित, शोषित, पीड़ित दलितों की इच्छाओं अकांक्षाओं का चित्रण करने वाली आत्मकथा है।

पंजाबी साहित्य के अंतर्गत दलित साहित्य में आत्मकथा अर्थात सवै जीवनीआं भी दलित विमर्श को उभारने में प्रयत्नशील रही हैं। इस श्रेणी में लाल सिंह दिल की सवै-जीवनी *दास्तान*, में जाति-पाति वितकरे को अपने आंगन, स्कूल, नक्सली पार्टी, और पुलिस के जाति अभिमान द्वारा प्रक्ट किया गया है। स्कूल में उसके लिए कोई जगह नहीं बल्कि स्कूल उसकी शिक्षा में रूकावट बनता है। उनकी यह दास्तान सिआसी, सभ्आचारक, और साहित्यिक मुद्दों पर केंद्रित है। लाल सिंह दिल की सवै जीवनी जाति-पाति विषमता को समाज के व्यापक प्रसंग में प्रस्तुत करती है। प्रेम गोरखी की सवै-जीवनी *गैरहाजिर आदमी* में लेखक ने पत्तों से डूने बनाना, सफैदी करना, मजदूरी करना, कारखानों में मजदूरी करना, बागों की चौकीदारी करना, बोरियाँ ढोने का काम करने की अपनी व्यथा को चित्रित किया है। बलवीर माधोपुरी की सवै जीवनी *छांगियां रूक्ख* अति महत्वपूर्ण रचना है। इसमें लेखक ने सारे पंजाब में जाति दर्द से पीड़ित लोगों की व्यथा को प्रस्तुत किया है। जमींदारों द्वारा चमार जाति के लोगों को काम के नाम पर धमकाना, स्कूल में मास्टरों द्वारा इन बच्चों से बगार करवाना, गुरूदुआरे के भाईयों द्वारा विषमता रखना इत्यादि को प्रस्तुत किया है अर्थात जाति विषमता का दर्द, आर्थिक तंगी, गरीबी के कारण परिवारिक कलह की यादों को अपनी इन सवै जीवनीओं में प्रस्तुत किया है। जिंदर की *कुवासी रोटी* सवै जीवनी में जाति-वितकरे को आधार बना कर अव-चेतनी दुःख और जख्मी भावनाओं

का प्रस्तुतिकरण किया गया है। जिसमें युगबोध के द्वारा युग परिवर्तन का प्रयास है। इसमें लेखक ने उच्च वर्ग द्वारा निम्न वर्ग के साथ किए जाने वाले भेदभाव, दुत्कार, अमानवीय व्यवहार दुशवारियों और लाचारियों को प्रस्तुत किया है।

उपन्यासः हिन्दी उपन्यास साहित्य में 'दलित विमर्श' से जुड़े उपन्यास की शुरूआत मोहन दास नैमिशराय के *अपने-अपने पिंजरे* और ओमप्रकाश बाल्मीकि के *जूठन* से मानी जाती है। प्रस्तुत उपन्यासों को इस क्षेत्र की गंभीर उपलब्धि मान सकते हैं। दोनों रचनाएं आत्म-कथात्मक उपन्यासों की श्रेणी में आती हैं। जय प्रकाश कर्दम के उपन्यास *छप्पर* को दलित चेतना का उपन्यास क्हा जा सकता है। दलित समुदाय की अवहेलना, अपमान, नकार, शोषण आदि कई सूक्षम संवेदनाएं इसमें व्यक्त हुई हैं। उपन्यास का नायक चंदन रमिया का पुत्र है। रमिया और सुक्खा सदियों से चली आ रही परम्पराओं को तोड़कर चंदन को शहर में पढ़ने भेजते हैं। गाँव के उच्च वर्ग के लोगों के लिए ये अपमान की बात बन जाती है क्योंकि वह उच्च शिक्षा पर केवल उच्च वर्ग का ही अधिकार मानते हैं परन्तु रमिया और सुक्खा को समझ है कि वह इस शोषण से मुक्ति पढ़लिख कर ही पा सकते हैं। *जस तस भई सवेर* में सत्य प्रकाश ने अशिक्षा के कारण दलित समाज में व्याप्त कई प्रकार के अंध विश्वासों को प्रस्तुत किया है। उपन्यास का नायक हंसा अपने बेटे को बीमारी से मुक्त करवाने के लिए डाक्टरी उपचार न करवा कर उसे बागड़ के देवता जाँहरवीर की पूजा के लिए कर्ज़ लेता है और पोंगे-पंड़ितो के चक्कर में पड़कर उसे खर्च कर देता है। यह सब अज्ञानता, पिछड़ेपन और अशिक्षा के कारण होता है और इसी अज्ञानता और पिछड़ेपन से उभारने का प्रयास सत्य प्रकाश ने *जस तस भई सवेर* उपन्यास के माध्यम से किया है। *यथा प्रस्तावित* उपन्यास में गिरिराज किशोर द्वारा बलेसर नामक दलित व्यकित की मार्मिक कथा को प्रस्तुत किया गया है। उपन्यास में दलित जाति का बलेसर चौथे दर्जे का कर्मचारी है। उसके साथी स्वर्ण जाति के कर्मचारी

उसके साथ अमानवीय और घृणित व्यवहार करते हैं, जिसके परिणाम स्वरूप आखिरकार वह अपना मानसिक संतुलन ही खो बैठता है। उसके मासूम बच्चे को निर्ममता से मार दिया जाता है। उसके विरूद्ध हो रहे षड़यंत्र को जानते समझते हुए भी डायरेकटर उसकी कोई सहायता नहीं करता। अतः उसको नौकरी से निकालने पर उसकी फाईल पर लिखा जाता है 'यथा प्रस्तावित'। *परिशिष्ट* उपन्यास गिरिराज किशोर द्वारा 1984 में लिखा गया। प्रस्तुत उपन्यास में एक होनहार दलित छात्र राम उजागर को सवर्ण छात्रों द्वारा आरोपित किया जाता है। इस घिनौने और अमानवीय कार्य में संस्था के पदाधिकारी और प्रोफेसर भी स्वर्ण छात्रों का साथ देते हैं और परिणाम स्वरूप राम उजागर भी अपना मानसिक संतुलन खो बैठता है। प्रेम कपाड़िया ने उपन्यास *मिट्टी की सौगंध* में दलित एकता की स्थापना हेतु 'न्याय सेना' नामक संस्था स्थापित करने की बात करता है। प्रस्तुत उपन्यास में दलित जाति का एक दरौगा जिसे अम्बेडकर के विचारों का प्रतिनिधित्व करते दिखाया है, के अनुसार 'अगर ठाकुर के जुल्म को खत्म करना है तो हम सब को मिलकर रहना होगा'। प्रस्तुत उपन्यास में ठाकुर मदन सिंह दलित युवती 'शीला' को अपनी हवस का शिकार बनाता है इसके विपरित ठाकुर का लड़का विजेन्द्रर पीडित लड़की से शादी करता है। लेखक ने यहाँ विजेन्द्रर के माध्यम से अंतर्जातीय विवाह द्वारा जातिवाद की समस्या को खत्म करने का रास्ता भी प्रस्तावित किया है। *नर्ककुण्ड में वास* उपन्यास को लेखक जगदीशचन्द्र ने *धरती धन न अपना* की अगली कड़ी के रूप में प्रस्तुत किया है। उपन्यास का नायक 'काली' अपने अन्य दलित साथियों के साथ मरे हुए पशुओं की चर्बी उतारने और फिर धौने का कार्य करता है। दिन भर गंदगी भरे कार्यों को करने वाले इन श्रमिकों के लिए पीने के पानी की व्यवस्था भी ठीक से नहीं की जाती। अशिक्षित होने के कारण भी श्रमिक इस कार्य को करने के लिए विवश हैं।

प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने दलितों के नरकीय जीवन और उस नरक से मुक्ति की छटपटाहट को प्रस्तुत किया है।

आधुनिक पंजाबी नावल के इतिहास में भाई वीर सिंह द्वारा लिखित नावल *सुभाग जी दा सुधार हथ्थी बाबा नौध सिंह* पहला पंजाबी उपन्यास है जिसमें पंजाब की ग्रामीण निम्न वर्गीय जनता का वर्णन किया गया है। नानक सिंह के नावल *चिट्टा लहू* में नानक सिंह ने दलित जातियों के प्रति सुधारवादी दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया है कि किस प्रकार उच्च जाति के लड़कों द्वारा निम्न जाति की लड़कियों से विवाह करके जाति प्रथा का अंत किया जा सकता है परन्तु वर्तमान समय में अंतर्जातीय विवाह एक समस्या बन कर सामने आ रहा है। जसवंत सिंह कंवल का उपन्यास *हाणी* समाज में जाति-पाति की समस्या को प्रक्ट करता है। यह उपन्यास सामाजिक न बराबरी के साथ-साथ आर्थिक समस्या को भी प्रस्तुत करता है। सोहण सिंह शीतल का उपन्यास *युग बदल गया* उपन्यास भी दलित जीवन की सच्चाई को उभारने वाला है। इसमें लेखक ने दलित मजदूर की मानस्किता, दलित मनुष्य के शोषण और दलित औरतों के जिस्मानी शोषण को भी प्रस्तुत किया है।

पंजाबी नावल (उपन्यास) साहित्य में गुरदयाल सिंह के उपन्यास *मड़ी दा दीवा, अन्ने घोड़े दा दान*, दलित वर्ग की सामाजिक समस्याओं को प्रस्तुत करते हैं। करमजीत कुस्सा का नावल *अग्ग दा गीत* में दलित देबू पूरी मेहनत और ईमानदारी से काम करने के बावजूद भी त्रासदी का शिकार होकर अपंग बन जाता है। मालिकों द्वारा उसको उचित मुआवजा न देकर, उससे ज्यादा काम लेने के लिए पाई गई नशे की आदत देबू और उसके पारिवारिक जीवन की तबाही का कारण बन जाती है। मजबूरन उसे अपनी सुन्दर पत्नी को जमींदार की शरण में भेजना पड़ता है और परिणाम स्वरूप वह शारीरिक शोषण का शिकार होती है। पंजाबी नावल में दलित स्त्री के शोषण को भी मुख्य रूप से प्रस्तुत किया गया है। सोहन सिंह शीतल के नावल

युग बदल गया, जसवंत सिह कंवल दा नावल *हाणी*, *बलबीर परवाना* का नावल *बैगाने पिंड दी जूह* इत्यादि दलित अस्मिता के उपन्यास हैं।

1.6 दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि

"21वीं सदी के हिन्दी-पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्शः एक तुलनात्मक अध्ययन(चयनित उपन्यासकारों के संदर्भ में" करने से पूर्व दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि को समझना अति आवश्यक है। दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि का विवेचन करते समय उसके सृजनात्मक मूल्यों पर विचार करना और भी आवश्यक हो जाता है, जो कि स्वानुभूति और स्हानुभूति पर आधारित है।

1.6.1 दलित रचनाकारों द्वारा लिखा साहित्य (स्वानुभूति पर आधारित)

दलित रचनाकारों द्वारा लिखित साहित्य को अम्बेडकरवादी साहित्य भी क्हा गया है। दलित लेखक का अनुभव अत्यंत समृद्ध है। वह भोगा हुआ यथार्थ लिखता है उसके पैर वर्तमान में जड़े अतीत में और नज़र भविष्य पर है। वह समाज से शोषण और सामाजिक विषमता को मिटाना चाहता है। उसने दलित साहित्य के परम्परागत साहित्य के मूल्यों को नकारा है और वह मनोरंजन के लिए नहीं बल्कि सामाजिक बदलाव के लिए लिखता है। दलित लेखकों द्वारा लिखित साहित्य के विषय में शरण कुमार लिम्बाले अपने विचारों को *दलित साहित्य का सौन्द्रर्य शास्त्र* पुस्तक में प्रस्तुत करते हुए कहते हैं-

> दलित साहित्य क्रोध और घृणा का साहित्य है, परन्तु सच तो यह है कि दलित साहित्यकार बगैर किसी लाग लपेट के सच को समाज के समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं। दलित साहित्य का स्वरूप व चिंतन मौलिक है।(34)

वास्तव में दलित साहित्य भारतीय लोकतंत्र और समाज की परिस्थितियों, जरूरतों, समस्याओं, स्वप्नों, अपेक्षाओं और संघर्षों से उपजा साहित्य है और ऐसा साहित्य ही अपने समाज की साहित्यिक आवश्यकताओं को पूरा करता है। वर्तमान दलित साहित्य, साहित्य के धरातल पर सक्रिय है। दलित साहित्य के विषय में प्रो. दया शंकर ने अपने विचार *दलित वैचारिकी और साहित्य* पुस्तक में प्रस्तुत किए हैं-

> हिन्दी में नवें दशक के पहले जो भी दलित साहित्य के नाम पर मिलता है वह सच्चे अर्थों में दलित विमर्श और चेतना का साहित्य नहीं है। नवें दशक में अनेक दलित युवा पढ़ लिख कर नौकरी के साथ साहित्य के मैदान में उतरे और अम्बेडकर दर्शन से प्रेरणा लेकर दलित चेतना का साहित्य लिखने लगे।(14)

अर्थात दलित रचनाकारों द्वारा लिखित साहित्य में ही दलित चेतना की अभिव्यकित हुई है क्योंकि दलित रचनाकारों द्वारा लिखित साहित्य स्वानुभूति पर आधारित है।

1.6.2 गैर-दलित रचनाकारों द्वारा लिखा साहित्य (स्हानुभूति पर आधारित)

हिन्दी तथा पंजाबी साहित्य में गैर-दलित साहित्यकारों द्वारा लिखा गया दलित साहित्य स्हानुभूति पर आधारित साहित्य है। जिसमें उन्होंने दलित समाज की पीड़ा को वाणी देने का प्रयास किया है। यहाँ गैर-दलित लेखक की दलित समाज के प्रति स्हानुभूति के दो पक्ष हैं जिसमें दलित मनुष्य को दो रूपों को प्रस्तुत किया गया है पहला है दीन-हीन असहाय मानव और, दूसरा है शोषित मनुष्य के रूप में। दोनों ही पक्षों में दलितों की गरीबी, शोषण और उनका अछूतपन रहा है जिससे समाज के अन्य वर्गों में इनके प्रति स्हानुभूति पैदा हुई। इसी स्हानुभूति का ही परिणाम है कि आज दलित साहित्य का क्षेत्र अत्यंत विस्तार पा चुका है। 21वीं

सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श से जुड़े विभिन्न पक्षों तथा उनके विकास⁄और परिवर्तन के बिन्दुओं पर अध्ययन किया जाएगा।

तुलनात्मक साहित्य

साहित्य मानव हृदय की भावानओं की अभिव्यक्ति है। इस अभिव्यक्ति को दूर दराज के लोगों तक पहुँचाने का काम साहित्य करता है। साहित्य को आधार बनाकर मनुष्य में दूसरे देशों के साहित्य को जानने की जिज्ञासा ने और साहित्य के सृजनात्मक पक्ष ने तुलनात्मक गतिविधियों के लिए सुदृढ़ कर दिया है। अन्य साहित्य की विविधता और व्यापकता से सम्बन्धित अध्ययन करने के लिए मनुष्य अन्य भाषाओं को सीखने के लिए भी सचेत हो गया, क्योंकि साहित्यिक आदान प्रदान के लिए भाषाई ज्ञान होना आवश्यक है और भाषाई ज्ञान ही तुलनात्मक अध्ययन की आधारभूत आवश्यकता है। तुलनात्मक अध्ययन का आधार भाषाई ज्ञान को मानते हुए डॉ.नगेन्द्र अपने विचार तुलनात्मक साहित्य पुस्तक में प्रस्तुत करते हुए क्हते हैं कि- "तुलनात्मक साहित्य एक प्रकार का अतः साहित्यिक अध्ययन है जो अनेक भाषाओं को आधार मानकर चलता है, जिसका उद्देश्य होता है अनेकता में एकता।" (10)।

1.7 तुलनात्मक अध्ययन अर्थ, परिभाषा और स्वरूप

तुलनात्मक साहित्य अंग्रेजी के 'कम्पैरेटिव लिटरेचर' का हिन्दी अनुवाद है। तुलनात्मक शब्द के मूल में 'तुलना' है जिसके लिए अंग्रेजी में 'कम्पेयर', हिन्दी में 'तुलना',और संस्कृत में 'तुल्य' आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है। 'तुलना' का विशेषण है 'तुलनात्मक'। 'तुलनात्मक साहित्य' एक से अधिक भाषाओं में रचित साहित्य का अध्ययन है और तुलना इस अध्ययन का अंग है। तुलनात्मक साहित्य में विभिन्न भाषाओं में लिखित साहित्यों अथवा उनके संक्षिप्त घटकों की साहित्यिक तुलना होती है। 'तुलनात्मक' शब्द से 'तुलना' की प्रक्रिया जुड़ी हुई है। तुलना करना

मानव की सहज प्रवृति है। वह सहज रूप से ही दो व्यक्तियों की बुद्धि, रूप, रंग, गुण दोष की तुलना करता रहता है। इसमें वस्तुओं को कुछ इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है जिससे उनमें समानता और वैषम्यता का पता चल सके। डॉ. हरदेव बाहरी *राजपाल हिन्दी शब्दकोश* में 'तुलना' शब्द का अर्थ स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि "तुलना अर्थात "तोला जाना, मापित होना, तौल में समान होना, सधकर स्थित होना", अर्थात तुलना को वस्तुओं में गुणों की समानता और असमानता दिखाने वाला दर्शाया गया है। तुलना के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए डॉ. नगेन्द्र *तुलनात्मक साहित्य* पुस्तक में तुलना को परिभाषित करते हुए कहते हैं-

> तुलनात्मक साहित्य जैसा कि उसके नाम से ही स्पष्ट है, साहित्य का तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन प्रस्तुत करना है। यह नाम पद वास्तव में एक प्रकार का न्यून पदीय प्रयोग है और साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन का वाचक है।(10)

इन्द्रनाथ चौधरी तुलनात्मक अध्ययन को परिभाषित करते हुए *तुलनात्मक साहित्यः भारतीय परिपेक्ष्य* पुस्तक में कहते हैं-

> तुलनात्मक शब्द में तुलना की प्रक्रिया जुड़ी है और इसमें वस्तुओं को कुछ इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है, जिससे उसमें साम्य या वैषम्य का पता चल सके।(14)

इस प्रकार तुलनात्मक अध्ययन दो भाषा-भाषी साहित्य के परिवेश और परिस्थितियों का अध्ययन करते हुए दोनों के साम्य और वैष्मय को तटस्थता से प्रस्तुत करता है।

तुलनात्मक अध्ययन के लिए बीसवीं सदी की शुरूआत में 'कम्पैरेटिव लिटरेचर' पद का प्रयोग शुरू हो गया था, वस्तुतःयह एक पदीय शब्द है और इसका अर्थ है साहित्य

का तुलनात्मक अध्ययन। डॉ.राजूरकर *तुलनात्मक अध्ययनः स्वरूप और समस्याएं* पुस्तक में तुलनात्मक अध्ययन के स्वरूप को परिभाषित करते हुए लिखते हैं-

> तुलनात्मक अध्ययन करते समय स्वभाविक अभिरूचि और उत्सुक्ता अनिवार्य है। इसके साथ तटस्थता और ईमानदारी, तुलनीय भाषाओं और साहित्यों का ज्ञान, विषय की मौलिकता, उपयुक्तता एवं संभाव्यता का ज्ञान, तथ्यों की उपलब्धियों की उच्चतर आलोचना एवं मूल्यांकन की योग्यता इसमें अनिवार्य है।(22)

तुलनात्मक साहित्य के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कहा जा सकता है कि तुलनात्मक अध्ययन में मानवीय अध्ययन और कलात्मक उत्कर्ष के इसी सीमा विस्तार को समझने का प्रयास किया जाता है। जिसमें तुलनात्मक शोध अंततः सैद्धांतिक शोध में परिवर्तित हो जाता है। जैसा कि शब्द से ही पता चलता है कि दो रचनाओं, लेखकों, काव्यांदोलनों या किन्ही अन्य साहित्यिक पक्षों को लेकर एक ही भाषा अथवा दो भाषाओं के स्तर पर किया जाने वाला शोध है।

1.8 तुलनात्मक अध्ययनः ऐतिहासिक परिपेक्ष्य

तुलनात्मक साहित्य का अध्ययन एक महत्वपूर्ण शाखा है। दो संस्कृतियों में सम्पर्क स्थापित करने वाला यह सिद्धांत विदेश में सांस्कृतिक अध्ययन के नाम से जाना जाता है। तुलनात्मक शब्द का प्रयोग सबसे पहले मैथ्यु आर्नल्ड ने सन् 1848 ई.में किया था परन्तु तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन की दिशा में सर्वप्रथम ध्यानाकर्षण करने वाले विद्वान एवं दार्शनिक गेटे हैं। गेटे ने सन् 1975 में जर्मन शब्द वरगलोचैंड के समानांतर अंग्रेजी शब्द कम्पैरेटिव, तथा वैलत लितरेतर के समक्ष विश्व साहित्य का प्रयोग किया। बीसवीं सदी की शुरूआत में कम्पैरेटिव लिटरेचर शब्द का प्रयोग शुरू हो गया था, जिसका अर्थ है साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन।

साहित्य के संदर्भ में तुलनात्मक विधि का प्रयोग साहित्य के प्रभाव को समझने के लिए किया गया है। तुलनात्मक साहित्य अध्ययन के स्थापन व प्रसार के लिए दो प्रमुख सम्प्रदाय माने गए हैं। पहला पैरिस-जर्मन स्कूल, जिसके प्रवर्तक टिगहेम और यू.वीसटेन थे तथा दूसरा अमरीका स्कूल जिसके प्रवर्तकों में हेनरी रेमाक, रेने वैलेक, हैरी लीवीन, आसटिन वारेन, डेविड मलोन और एस. एस. पराअर इत्यादि विद्वानों के नाम प्रमुख हैं।

पैरिस जर्मन स्कूल

पेरिस जर्मन स्कूल के अंतर्गत फ्रांसीसी विद्वानों की पहली पीढ़ी तथ्यात्मक सम्पर्कों और दस्तावेजों के विश्लेषण पर ज्यादा बल देती है। इसके विपरीत आधुनिक पीढ़ी के आलोचक पीशवाज तथा रूसों ने व्यवहारिक तथा ठोस आलोचनात्मक दृष्टि की सहायता से तुलनात्मक साहित्य के क्षेत्र में साम्य या वैष्मय तुलना तथा प्रभाव के सूत्रों के अध्ययन का प्रसार करते हुए संस्लेषणात्मक दृष्टि को स्वीकार किया और सूक्ष्म साहित्यिक मूल्यों की पहचान कराने वाली अपनी टिपणियों को अध्ययन के नए प्रतिमानों के रूप में विकसित किया। एतियमब्ल, ज्याँन तथा पीशवाज और रूसों का योगदान इसमें महत्वपूर्ण रहा। वास्तव में पैरिस-जर्मन स्कूल के विद्वानों की दृष्टि वैज्ञानिक है। उनके मूल उद्देश्यों के अनुसार तुलनात्मक साहित्य एक साहित्यिक अनुशीलन है, जिसका सम्बन्ध ठोस यथार्थ से है और इस दृष्टि से पेरिस जर्मन स्कूल के अनुसार तुलनात्मक साहित्य विविध साहित्यों के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन है और वह साहित्येतिहास की एक शाखा है। पेरिस जर्मन स्कूल के विद्वान साहित्यिक इतिहास के तत्त्वों को अधिक महत्व देते हैं।

अमरीकी स्कूल

शिक्षा के क्षेत्र में तुलनात्मक साहित्य का प्रवेश सर्वप्रथम अमरीका के विश्वविद्यालयों में बीसवीं शताबदी में हुआ। सर्वप्रथम 'कारनेल विश्वविद्यालय' में तुलनात्मक साहित्य के स्वतन्त्र विभाग की स्थापना हुई। तुलनात्मक साहित्य के क्षेत्र में अमरीकी स्कूल साहित्येतिहास की सामान्य संरचना में जहाँ ज्ञान के दूसरे क्षेत्रों के साथ साहित्य के सम्बन्ध का अध्ययन करता है वहीं दूसरी और साहित्यलोचन को तुलनात्मक अध्ययन का महत्वपूर्ण अंग स्वीकार करता है। साहित्य के इतिहास के लिए तथ्यों का चयन भी अपने आप में एक आलोचनात्मक क्रिया है तथा मूल्यांकन परक भी। रेने वैलेक, हैरी लेविन, डेविड मेलोन आदि विद्वान सादृश्यता, मोटिफ, शैली पक्ष, विधा, साहित्यिक आन्दोलन तथा परम्परा की तुलनात्मक छानबीन के द्वारा साहित्यिक कृतियों के कलात्मक स्वरूप को उद्घाटित करते हुए मानते हैं कि साहित्य की तुलना ज्ञान के दूसरे क्षेत्रों के साथ संभव है। इसलिए वह तुलनात्मक साहित्य का विषय भी है। इस प्रकार तुलनात्मक साहित्य के स्वरूप को दोनों सम्प्रदायों फ्रांसीसी–जर्मन, तथा अमरीकी स्कूल के विद्वानों ने अपने-अपने ढंग से व्याख्यायित किया है परन्तु दोनों ही विद्वान तुलनात्मक साहित्य को साहित्यिक समस्याओं का अध्ययन मानते हैं जहाँ एक से अधिक साहित्यों का प्रयोग किया जाता है।

तुलनात्मक अध्ययन भारतीय परिपेक्ष्य में

भारतीय साहित्य में तुलनात्मक अध्ययन काफी प्राचीन काल से चला आ रहा है जैसे संस्कृत में कालिदास और दण्डी की तुलना, हिन्दी में सूर और तुलसी, देव और बिहारी की तुलना इत्यादि तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत हुए हैं। इस प्रकार भारतीय परिपेक्ष्य में तुलनात्मक अध्ययन से तात्पर्य विभिन्न भाषाओं के साहित्य में साम्य-वैषम्य प्रकट करने के विचार से उनकी तुलना मात्र नहीं है बल्कि साहित्य

विशेष को पृष्ठभूमि प्रदान करने वाली सांस्कृतिक प्रवृतियों के संघान द्वारा अपने परिपेक्ष्य को व्यापक बनाना है। ज्ञान के अन्य तुलनात्मक विषयों में भी यही सत्य है। तुलनात्मक साहित्य के संदर्भ में डा.मनमोहन सहगल *शोधतंत्र की रूपरेखा* पुस्तक में लिखते हैं-

> तुलनात्मक साहित्य शोध से हमारा तात्पर्य उन सभी शोध विषयों से हैं,जो दो भाषाओं, दो लेखकों, दो विधाओं, दो कालों, अथवा दो परिवेशों को अध्ययन सामग्री बनाकर दोनों में एक-एक सामान्तर तोल अथवा एक दूसरे पर प्रभाव की छाप का निष्कर्ष प्रस्तुत करते हैं। (35)

मनमोहन सहगल ने तुलनात्मक अध्ययन के लिए 'तुलना' को आधार मानते हुए कहा है कि किन्ही भी दो विषयों में तुलनात्मक अध्ययन का आधार तुलना ही है। सहगल के अनुसारः-

> किसी भी क्षेत्र में तुलनात्मक अध्ययन में तुलना कम, अंतर अथवा प्रभाव अधिक होता है। यदि तुलना हो भी तो वह अलग-अलग अध्यायों में व्याखया रूप में होती है न कि तुला के दो पल्लों पर टिका हुआ मूल्यांकन।(35)

इस प्रकार तुलनात्मक अध्ययन के ऐतिहासिक परिपेक्ष्य को देखने से ज्ञात होता है कि तुलनात्मक अध्ययन भारत में काफी प्राचीन समय से चला आ रहा है। तुलनात्मक अध्ययन के विकास में पैरिस जर्मन स्कूल तथा अमरीकी स्कूल ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

1.9 तुलनात्मक अध्ययनः विधियां

तुलनात्मक साहित्य का क्षेत्र इतना व्यापक है कि वह कला, दर्शन, धर्मशास्त्र, मनोविज्ञान, इतिहास तथा समाज विज्ञान आदि को अपने में समेट लेता है। अतः साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन साहित्य के विभिन्न क्षेत्रों में संभव है। तुलनात्मक अध्ययन के लिए डॉ.मनमोहन सहगल ने *शोधतंत्र की रूपरेखा* पुस्तक में निम्नलिखित विधियाँ स्वीकार की हैं-

1 दो भाषाएँ –एक विधा।

2 एक ही भाषा में दो विधाओं अथवा प्रवृतियों का अध्ययन।

3 एक ही भाषा साहित्य में दो कालों की तुलना।

4 एक ही भाषा साहित्य में दो लेखक या दो कृतियाँ।

5 दो भाषाओं के साहित्य में एक काल विशेष।

6 दो भाषाओं के एक ही विधा पर लिखने वाले दो लेखक।

7 दो भाषाओं की एक साहित्यिक प्रणाली।

8 दो भाषाओं के काव्य शास्त्र की तुलना

9 दो भाषाओं में भाषा वैज्ञानिक अथवा व्याकरण सम्बन्धी किसी अंग का तुलनात्मक अध्ययन।

1.10 तुलनात्मक अध्ययनः क्षेत्र

तुलनात्मक अनुसंधान के क्षेत्रों को विद्वानों ने व्यापक माना है। ‘तुलना’ के हर विषय का क्षेत्र अलग-अलग होता है। उसके अंतरंग और बहिरंग पक्ष होते हैं जो कि उस क्षेत्र की परिधि की तरफ संकेत करते हैं। विषय के अनुसार तुलनात्मक शोध के

अनेक रूप हो सकते हैं। अतः साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन साहित्य के विभिन्न क्षेत्रों में संभव है परन्तु तुलना का क्षेत्र चुनते समय समानताओं-असमानताओं, साम्य-वैषम्य को ध्यान में रखना अति आवश्यक है तभी तुलनात्मक अध्ययन में सफलता प्राप्त होगी। तुलनात्मक अध्ययन के निम्न क्षेत्र हो सकते हैं-

1साहित्येतिहास –आधारित।

2काव्यशास्त्रीय आलोचना।

3मनोविज्ञान- आधारित।

4समाजशास्त्र- आधारित।

5 सौन्द्रर्यशास्त्र-आधारित।

6दर्शनशास्त्र- आधारित।

7शैली विज्ञान-आधारित।

8 काव्य-तत्त्व आधारित।

1.11 तुलनात्मक अध्ययनः तत्त्व

तुलनात्मक अध्ययन करने के लिए विद्वानों ने कुछ तत्त्वों का निर्धारण किया हैं जिन्हे तुलनात्मक अध्ययन के तत्त्व, घटक अथवा दिशाएँ भी क्हा जा सकता है किसी भी क्षेत्र में तुलना करने के लिए इन तत्त्वों को अति आवश्यक माना जाता है। जिनके आधार पर शोधार्थी निश्चित लक्ष्य को प्राप्त करता है। तुलनात्मक अध्ययन के घटक अथवा दिशाएँ इस प्रकार हैं--

1 तद्रूपताः- तद्रूपता का अर्थ है बिल्कुल उसी के जैसा, एक ही जैसा। इस प्रकार के तुलनात्मक अध्ययन में किन्ही दो रचनाओं के भावपक्ष और शिल्प पक्ष जैसेः-पात्र, संवाद अथवा कथोपक्थन, विचार, शिल्प भाषा शैली, विषय वस्तु, इत्यादि का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है।

2 समानताः- समानता को तुलनात्मक अध्ययन में तुलना का तत्त्व स्वीकार किया गया है। इसके अंतर्गत किन्ही दो कृतियों की समान पक्षों के आधार पर तुलना की जाती है तुलना में समानता और एक रूपता को अधिक बल मिलना चाहिए।

3 असमानताः- तुलनात्मक अध्ययन में असमानता अर्थात विषमता को तत्त्व बना कर दो भाषाओं अथवा दो विधाओं की तुलना करते हुए विषयवस्तु, पात्र, विचार, शिल्प, संवाद, भाषा आदि की दृष्टि से अध्ययन किया जाता है।

4 व्यतिरेकताः- तुलनात्मक अध्ययन में व्यतिरेकता अर्थात विरोधाभास की स्थिति को तत्त्व रूप में ग्रहण करते हुए दो कृतियों अथवा दो भाषाओं के साहित्य के अध्ययन में जहाँ अस्पष्टता की स्थिति पैदा होती है, वहां दो विरोधी वस्तुओं की तुलना करके उनके स्वरूप को स्पष्ट किया जाता है ताकि उनके बीच का अंतर स्पष्ट हो सके। इस प्रकार तुलनात्मक अध्ययन में तद्रूपता, समानता, असमानता और व्यतिरेकता को तुलनात्मक शोध के तत्त्व और दिशाएं स्वीकार किया गया है।

1.12 तुलनात्मक अध्ययनः आवश्यकता/महत्त्व

पिछले कुछ वर्षो से तुलनात्मक अध्ययन एक नए साहित्यिक अनुशासन के रूप में बड़ी तेजी से विकसित हो रहा है, जिसे हम वर्तमान युग की मांग कह सकते हैं क्योंकि भाषा और साहित्य की विविधता के कारण तुलनात्मक अध्ययन द्वारा विभिन्न संस्कृतियों, राजनीतियों, परिस्थितियों इत्यादि का ज्ञान हमारे साहित्य का वैश्विक संदर्भ भी है। आज का विश्व तेजी से सिमट कर एक गलोबल विलेज का रूप

धारण कर चुका है। ऐसी स्थिति में तुलनात्मक अध्ययन एक अति महत्वपूर्ण आवश्यकता बनकर उभर रहा है। जिससे की हमारा दृष्ठिकोण और भी ज्यादा व्यापक होगा और हमें अन्य भाषाओं और संस्कृतियों को भी जानने का अवसर मिलेगा। तुलनात्मक अध्ययन से लेखकों के विचारों का कई भाषाओं में आदान प्रदान हो जाता है। तुलनात्मक अध्ययन से भाषिक भेद कम होगा और राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ बनाने में बल मिलेगा। विश्व साहित्य को भी जानने और समझने में तुलनात्मक अध्ययन की भूमिका महत्वपूर्ण है। तुलनात्मक अध्ययन हमारा साहित्यिक और सांस्कृतिक विस्तार करता है। साहित्य के क्षेत्र में वैचारिक, सांस्कृतिक आदान प्रदान के लिए तुलनात्मक अध्ययन महत्वपूर्ण सिद्ध हो गया है। वास्तव में तुलनात्मक अध्ययन सांस्कृतिक सार प्रदान करता है। इस अध्ययन से दूसरे भाषा के साहित्य द्वारा समाज तथा साहित्य की विशेषताओं का पता चलता है। तुलनात्मक अध्ययन की आवश्यकता को स्पष्ट करते हुए आचार्य सुन्दर रेड्डी के विचारों को राजकमल बौरा *तुलनात्मक अध्ययनः स्वरूप और समस्याएं* पुस्तक में लिखते हैं किः-

> तुलनात्मक अध्ययन मानव के सीमित ज्ञान क्षेत्र का विकास और विस्तार है। देश की एकता और राष्ट्रीय जीवन की एकता के लिए विभिन्न भारतीय भाषाओं एवं साहित्यों का तुलनात्मक अध्ययन आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है।(2)

अर्थात तुलनात्मक अध्ययन से विभिन्न राष्ट्र, राज्य दो अथवा दो से अधिक संस्कृतियों में आदान प्रदान की संभावनाएं है। *तुलनात्मक अध्ययन स्वरूप और स्मसयाएं* पुस्तक में राजकमल बौरा ने तुलनात्मक अध्ययन के महत्व पर लिखा है कि “इस तुलना के द्वारा कला सृजन की प्रक्रिया को समझने में भी सहायता मिल सकती है।”(30) इस प्रकार कहा जा सकता है कि विभिन्न भाषाओं के साहित्यों के

तुलनात्मक अध्ययन से अलग-अलग सांस्कृतिक, परिवेश, युगीन परिस्थितयाँ समाज को विकासोन्मुखी दिशा में अग्रसर करती हैं।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर निष्कर्षतःकहा जा सकता है कि 'दलित' शब्द दबाए गए, शोषित, पीड़ित, पताड़ित अर्थों के साथ जब साहित्य से जुड़ता है तो विरोध और नकार की और संकेत करता है। वह नकार या विरोध चाहे व्यवस्था का हो, सामाजिक विसंगतियों या धार्मिक रूढ़ियो, आर्थिक विषमताओं का हो या भाषा प्रान्त के अलगाव का हो या साहित्यिक परम्पराओं, मानदण्डों, या सौन्द्रर्यशास्त्र का हो। दलित साहित्य नकार का साहित्य है जो विद्रोह से उपजा है तथा जिसमें समता स्वतंत्रता और बन्धुत्व का भाव है, और वर्ण व्यवस्था से उपजे जातिवाद का विरोध है। साहित्य के साथ 'दलित' शब्द जुड़ते ही उसकी व्यापक्ता और अधिक क्रांतिबोधक हो जाती है। 'दलित' शब्द विरोध और अभिव्यक्ति का प्रतीक बन जाता है। अर्थ और अधिक व्यंजनात्मक होकर साहित्य की भूमिका और सामाजिक उत्तरदायित्वों को और अधिक विश्लेषित करने की क्षमता हासिल कर लेता है तथा मानवीय संवेदनाओं से जुड़कर सामाजिक प्रतिबद्धता स्थापित करता है।

आज दलित साहित्य चर्चा के क्रेन्द में है। वैसे तो दलित साहित्य का इतिहास बहुत पुराना है। हिन्दी-पंजाबी साहित्य में सिद्ध कवियों, भक्त कवियों, की रचनाओं में दलित विमर्श के सूत्र बीज रूप में माने जाते हैं परन्तु यह आज एक जवलंत विषय बन चुका है जिसकी मूल प्रेरणा अम्बेडकर दर्शन को माना जाता है। सातवें दशक में दलित पैंथर आंदोलन के दौरान बड़ी संख्या में दलित लेखक शिक्षित होकर नौकरी के साथ साहित्य के कार्यक्षेत्र में उतरे। उन्होंने अपने संघर्ष और जद्दोजहद से हिन्दी-पंजाबी दलित साहित्य की भूमि तैयार की। दलित साहित्य जहाँ प्रारम्भिक दौर में कवियों तक सीमित था, वहीं आज इससे जुड़ी अनेक विधाओं में काम हो रहा है।

इस प्रकार दलित विमर्श का अर्थ, दलित साहित्य की परम्परा और साहित्य में उसकी प्रस्तुति और दलित विमर्श की वैचारिक पृष्ठभूमि को देखने से पता चलता है कि वास्तव में दलित आंदोलन सामाजिक,आर्थिक,राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक मुश्किलों, भेद-भाव और बुराईयों के खिलाफ एक विद्रोह के रुप में सामने आया। इस आंदोलन में आत्म निर्भरता, आत्म सम्मान, की तीव्र अभिलाषा, स्वतन्त्रता, सामाजिक इन्साफ, तथा बराबरता, प्रेम और भाईचारक एकता है। भाईचारक एकता, बराबरी, न्याय की स्थापना तथा ब्रह्मणवाद का विरोध, दोनों एक ही बिन्दु के साकारात्मक और नाकारात्मक पक्ष है क्योंकि दलित साहित्य का मुख्य विषय मानवीय संवेदना के साथ साथ मानवीय कल्याण का उद्भव और विकास भी है। इसी विकास क्रम को 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों के तुलनात्मक अध्ययन द्वारा प्रस्तुत करने के लिए दलित जीवन के विविध आयामों को आधार बनाया गया है जो कि आगे व्यवहारिक पक्ष के अंतर्गत प्रस्तुत किया जाएगा।

अध्याय 2

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्शः एक तुलनात्मक अध्ययनः सामाजिक आयाम

साहित्य और समाज का घनिष्ठ सम्बन्ध है। इन दोनों का निर्माण मानव ने किया है। दोनों के निर्माण का एक ही स्तोत्र होने के कारण इनमें परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध होना स्वाभाविक है। वास्तव में समाज की भावनाएँ ही लेखनी बद्ध होकर साहित्य की संज्ञा प्राप्त करती हैं। साहित्य मानव जीवन की व्याख्या है जिसमें जीवन के विविध पक्षों/आयामों का चित्रण होता है। सामाजिक आयाम अपने व्यापक अर्थ में मानवीय सम्बन्धों, क्रियाओं उनकी परिस्थितियों और परिणामों का अध्ययन होता है। इसमें सामाजिक जीवन के वह सभी कार्य आ जाते हैं, जो परिवार, विवाह, शिक्षा, इत्यादि सामाजिक संस्थाओं में बटकर चलते हैं। सामाजिक आयाम के अंतर्गत, पारिवारिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, तथा सांस्कृतिक आदि सभी क्रिया कलापों का समावेश होता है। दलित विमर्श के अंतर्गत हिन्दी और पंजाबी भाषाओं में उपन्यास के क्षेत्र में दलित लेखन की शुरूआत स्त्तर के दशक में हुई। हिन्दी तथा पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित लेखकों के द्वारा लिखित कई उपन्यास हमारे सामने है, जिसमें दलित जीवन से जुड़े विभिन्न पक्ष उभर कर सामने आए हैं। दलित समाज से आश्रय उन लोगों से है जो संविधान की धारा 341(1)तथा(2) के अंतर्गत अनुसूचित जाति की क्षेणी में रखे गए हैं। देश में दलित जातियों की जनसंख्या करीब साढ़े दस करोड़ है जो कि सम्पूर्ण आबादी का 16.6% है। प्रस्तुत अध्याय के अंतर्गत चयनित उपन्यासकारों के उपन्यासों में चित्रित दलित समाज के सामाजिक जीवन से जुड़े बिन्दुओं को तुलना का आधार बनाया गया है।

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श तुलनात्मक अध्ययन (चयनित उपन्यासकारों के संदर्भ में', विषय पर शोध कार्य करते हुए सामाजिक आयाम के अंतर्गत दलित समाज में शिक्षा की स्थिति, दलित नारी की स्थिति, दलित तथा गैर-दलित जातियों में जाति आधारित भेदभाव, गंदगी भरा

वातावरण, दलित जातियों में विवाह प्रथा तथा पीढ़ीगत अंतराल को तुलना का आधार बनाया गया है। वर्णित बिन्दुओं की तुलना करते हुए दलित जीवन के सामाजिक पक्ष में हुए विकास और परिवर्तन की स्थिति को भी प्रस्तुत करने का प्रयास है।

2.1 दलित जातियों में शिक्षा की स्थिति

शिक्षा व्यक्ति और समाज की उन्नति का प्रबल साधन है। वास्तव में शिक्षा के समान कोई अन्य नेत्र नहीं है। शिक्षा के द्वारा अज्ञानता का अंधकार दूर होता है। शिक्षा के माध्यम से मनुष्य अपनी सांस्कृतिक विरासत तथा हक्क के प्रति जागरूक होता है। शिक्षा मानव जीवन का आवश्यक अंग है। व्यक्ति के सर्वांगीण विकास का दायित्व शिक्षा पर ही निर्भर करता है परन्तु प्राचीन काल में दलित जातियों को शिक्षा ग्रहण करने से वंचित रखा जाता था। दलित जातियों में शिक्षा सम्बन्धी विचारों को गौतम भाईदास कुँवर ने *हिन्दी दलित साहित्य की दस्तक* पुस्तक में प्रस्तुत किया हैः

> शिक्षा ही उन्नति का मार्ग है। सभी समस्याओं का एक मात्र उपाय शिक्षा ही है परन्तु मनुस्मृति ने दलितों को शिक्षा ग्रहण करने से वंचित रखा। दलितों को पढ़ना-लिखना नहीं चाहिए। अगर वे पढ़ते हैं तो वह कार्य धर्मशास्त्र के विरूद्ध है और पाप है। जो दलित पढ़ने लिखने का प्रयास करता था उसे मारा जाता था, उसकी हत्या की जाती थी।(56)

समय के साथ-साथ परिस्थितियों में परिवर्तन होने से दलित जातियां शिक्षा के प्रति जागरूक हुई हैं इसका कारण सरकार द्वारा समय-समय पर चलाई गई योजनाएँ हैं ताकि दलित जातियों में शिक्षा का प्रसार और प्रचार हो सके, परन्तु कहीं न कहीं आज फिर भी दलित जातियों में कमशिक्षा अथवा अशिक्षा की स्थिति बनी हुई है।

दलित जातियों में कम शिक्षा, अशिक्षा को कारणों को सुखदेव थोरात ने *भारत में दलित* पुस्तक में प्रस्तुत किया हैः

> अनुसूचित जातियों का शैक्षिक विकास सरकार के रूझान का एक प्रमुख क्षेत्र है। अनुसूचित जातियों की शैक्षिक समस्याओं के केन्द्र में कम साक्षरता दर, प्राथमिक,माध्यमिक और उच्च स्तर पर पढ़ाई छोड़ने वालों की दर, कम गुणवत्ता की शिक्षा और अत्यधिक भेदभाव पूर्ण और अपवर्जनात्मक प्रथाओं का आस्तित्व है, जो कभी-कभी अनुसूचित जातियों को शिक्षा से पूरी तरह वंचित कर देते हैं।(5)

इक्कीसवीं सदी के हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित उपन्यासकारों ने दलित समाज में कम शिक्षा, अशिक्षा की स्थिति को अपनी लेखनी के माध्यम से प्रस्तुत किया है। हिन्दी उपन्यास *दगैल* में गैर-दलित लेखक रूपसिंह चन्देल ने दलित युवती सुनीता और उसके परिवार के माध्यम से शहरी क्षेत्रों में रहने वाली दलित जातियों में अशिक्षा अथवा कमशिक्षा की स्थिति को प्रस्तुत किया हैः

> सुनीता बीस साल की सुन्दर युवती थी....वह पाँचवी तक पढ़ी थी। छठवीं में गयी कि पढ़ाई छोड़नी पड़ी थी। पिता ऑटो चलाता था किराए पर, लेकिन दो दिन चलाता और तीन दिन घर में पड़ा रहता है। शाराब का आदि। अपनी कमाई फूंक देने के बाद पत्नी से रूपए मांगता ....सुनीता का छोटा भाई ही पढ़ रहा था।(98)

वर्तमान समय में दलित परिवारों की आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण दलित परिवारों के बच्चे अशिक्षा अथवा कम शिक्षा की समस्या से जूझ रहे हैं अर्थात दलित जातियों के अविभावक शिक्षा के नाम पर बच्चों को केवल आधारभूत शिक्षा ही दे पाते हैं और जैसे ही उनके बच्चे कमाने योग्य होते हैं उन्हें पारिवारिक निर्धनता अथवा

विपरीत पारिवारिक हालातों के चलते धन कमाने के लिए अपनी शिक्षा अधूरी छोड़नी पड़ती है। *मगहर की सुबह* उपन्यास में गैर-दलित लेखिका वंदना देव शुक्ल ने ग्रामीण दलित परिवारों में कम शिक्षा की समस्या को दलित स्त्री पात्र मैना के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> गाँव के सरकारी स्कूल में मैना गरीब बच्चों के साथ सात ज़मात तक पढ़ तो आई थी। बापू ने क्हा भी था चलो मोड़ी दो आखर पढ़ ली, दुख बीमारी में दो आखर लिख तो भेजेगी 'आड़े बखत काम आने' की बात कहकर और वही आड़ा बखत अब सामने खड़ा था मुँह बाए। लेकिन मैना को तो पता नहीं था कि नौकरी क्या होती है। पैसा कैसे और कहां से आता है।(58)

वर्तमान समय में दलित समाज में ऐसे परिवारों की संख्या काफी है जिनके बच्चे थोड़ा बहुत ही पढ़ पाते हैं। अर्थाभाव के कारण उन्हें अपनी पढ़ाई बीच में ही छोड़नी पड़ती है। शिक्षा के प्रभाव से दलित जातियों में आई जागरूकता तथा शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात शहरी तथा ग्रामीण दलित समाज में हुए विकास और परिवर्तन की स्थिति को उपन्यास *मगहर की सुबह* में लेखिका वंदनादेव शुक्ल ने प्रस्तुत किया हैः

> अब धीरे-धीरे मैना को पढ़े लिखे होने का महत्व समझ आ रहा था। दुकानदार या अन्य कोई उसे ठग नहीं सकते थे। सारे हिसाब-किताब वो स्वयं रखती.....यहां तक कि कभी-कभी जेठ बंशीलाल बीजों, मजदूरों आदि का हिसाब-किताब उसी से कराते।(96)

आलोच्य उपन्यास में दलित ग्रामीण युवती मैना की स्वर्ण जाति के मंदबुद्धि राजो से मोल की शादी होने और उसके बाद राजो की मृत्यु होने पर उसके जीवन संघर्ष को प्रस्तुत किया गया है। इतनी मुशकिलों के बाद भी दलित युवती मैना न केवल स्वयं

को शिक्षित करती है बल्कि पूरे गाँव की तरक्की और विकास के लिए भी प्रयास करती है। दलित परिवारों की मुक्ति का एकमात्र रास्ता शिक्षित होना है। प्रस्तुत उपन्यास में मैना के माध्यम से दलित परिवारों को शिक्षित होकर आर्थिक और बौद्धिक दृष्टि से सक्षम होने का संदेश दिया गया है। पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में दलित समाज में शिक्षा की स्थिति तथा शिक्षा के क्षेत्र में हुए विकास और परिवर्तन की स्थिति को बलदेव सिंह ने पंजाबी उपन्यास *अन्नदाता* में दलित पात्र केवल के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> चमिआरा दे सारे घरां विच वी एह बड़े फ़खर वाली गल्ल समझी जांदी है कि केवल बहुते जट्टा दे बच्चियाँ नालों ज्यादा पड़िआ होईया है। इन्नां दे अपने घरां दे मुण्डे वी बहुता पढ़ लिख नहीं सके। कोई पंज पढ़ के हट्ट गया जा दसवीं विच्चों फेल हो के अपने कम लग्ग गया। केवल दे कई हाणी तां जट्टा दे सीरी रले होए हन। कोई शहर जा के दिहाड़ी करन लगा है कोई अपने पिओ (पिता) जा भरा नाल जुत्तियाँ सिऊण लग्गा है, ते कोई ताणीआं दे ताणिआं-पेटिआं विच्च उलझ गया है।(81)

प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में दलित जातियों में शिक्षा के प्रति जागरूकता को प्रस्तुत किया है कि अब दलित जातियों के लोग भी शिक्षा ग्रहण करना अपने लिए सम्मान और हक्क समझते हैं। वह भी समाज में शिक्षित होकर अपना मान-सम्मान बनाना चाहते हैं। पंजाबी उपन्यास *मुक्ति* में गैर-दलित लेखक एस.एस.कालड़ा ने पंजाब में दलित जातियों में निम्न माने जाने वाले सैंसी समाज में शिक्षा के प्रति जागरूकता को दलित पात्र कंती और बल्लू के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> कंतिए अपने तां इथ्थे मुण्डिया नू वी नहीं पढ़ाऊदें, कुड़ीआ नू किथ्थे पढ़ाऊणा ए। इत्थे तां जवाक जरा कु वड्डा होईया, एक अध्ध रोटी खवां, मोढ़े बगलीआं पा तौर दिन्दे ने विचारे शाम नू मुड़दे ने। राहां विच्च ही मंग डंग विचारे दिल नू झुलका दे लेंदे हन। पर आपा ता अपनी लाडों नू इस तरां नही जाण देना। आपा ता इस नू पढ़ावागें। हो सकिआं ता पढ़ावागें वी अंग्रेजी स्कूल विच्च। पढ़ लिख के नौकरी लग जाऊ इसदी जून सुधर जाऊ। आपा ता ठूठे खाई जांदे आ खाई जावांगे।(83)

पंजाब में दलित जातियों में निम्न कहे जाने वाला सैंसी समाज, जो कि कागज कचरा इत्यादि इक्टठा कर उसे बेच कर अपना जीवन यापन करते हैं। गरीबी और निर्धनता के कारण ये लोग अपने बच्चों को शिक्षा देना तो दूर की बात है उसके बारे में सोच भी नहीं सकते थे, लेकिन अब वह भी शिक्षा के प्रति जागरूक हो चुके हैं। आलोच्य उपन्यास में लेखक ने दलित जातियों में शिक्षा ग्रहण करने के प्रति आई जागरूकता को प्रस्तुत किया है कि मां-बाप आप बेशक अनपढ़ हैं, परन्तु अपने बच्चों को शिक्षित करके उनके लिए अच्छे भविष्य की कामना जरूर करते हैं जो कि दलित जातियो की सोच में शिक्षा के प्रति आए बदलाव को प्रस्तुत करता है। पंजाबी दलित उपन्यासकार देशराज काली ने पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में दलित जातियों में शिक्षा की स्थिति को *परणेश्वरी* उपन्यास में दलित पात्र नंजू के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

> नंजू ने हिसाब लगाऊणा कीवें सिखिआ इह ता किसे नू खबर नहीं......औहने इक दिन धार लिया कि हिसाब लाऊणा सीखणा है। डीखा लिया ते मिट्टी च हिसाब लाऊणा सीखदा रिहा। पहाड़े याद करदा रिहा, उन्नी देर सुता तक नहीं जद तक हिसाब लगाऊणा नहीं सिक्ख लिया। इवें ही औहने गुरमुखी पढ़नी सिख लई सी। (23)

अर्थात ग्रामीण क्षेत्रों में भी दलित जातियों के लोग शिक्षा के प्रति जागरूक हो रहे हैं बेशक इसके लिए ये लोग किसी शैक्षिक संस्था में दाखिला न लेकर खुद ही प्रयास करते हैं। पंजाबी दलित उपन्यासकार अज़ीज सरोए ने उपन्यास *हनेरी रात दे जुगनू* में पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में शैक्षिक दृष्टि से हुए विकास और परिवर्तन को दलित युवक प्रताप के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> आखिर सरकार नू यूनीअन दे दबाअ हेठ झुकणा पिआ। सरकार ने ई.टी.टी दीआं खाली पईयां पोस्टां पक्के तौर ते भरन का फैंसला कीत्ता। इस्तिहार ज़ारी हो गया सी। समूह सिखिआर्थीआं दी चोण हो गई सी। प्रताप दे चंगे दिन शूरू हो गए सन। संघर्ष विच्चों गुजरदिआं हीण भावना दा शिकार हुन्दिआं, अखबार वंडदिआं, आपणी पढ़ाई जारी रखदिआं...... विहड़े विच्च उसदी बल्ले-बल्ले हो गई। बई विसाखे दा मुण्डा प्रताप माछटर बण गया।(135)

आलोच्य उपन्यास में दलित समाज में व्याप्त निर्धनता के साथ अपने आस्तित्व को तलाशते निर्धन युवकों की व्यथा और उनके संघर्ष को प्रस्तुत किया गया है। भारत के विभिन्न क्षेत्रों में शिक्षा के प्रभाव से दलित समाज में वर्तमान समय में आए विकास और परिवर्तन की स्थिति को दलित उपन्यासकार कैलाशचन्द्र चौहान ने *विद्रोह* उपन्यास में दलित युवक विक्रम के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> एक समय था जब दलितों के बच्चों को स्कूल में पढ़ने की इजाजत नहीं थी। इजाजत मिली तो उन्हें गैर-दलित बच्चों से दूर बैठाया जाता था। स्कूल के बच्चे उनसे अच्छा व्यवहार नहीं करते थे लेकिन आज यह हो रहा था कि बाल्मीकि मंदिर में चलने वाले सेंटर में...गैर-दलित भी अपने बच्चों को पढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं।(61)

आलोच्य उपन्यास का पात्र विक्रम एक दलित युवक है वह इंजीनियरिंग की शिक्षा को पूरा करके सरकारी इंजीनियर बनता है और दलित जातियों के बच्चों को शिक्षित करने के लिए मुफ्त टयूशन सेंटर चलाता है ताकि दलित जातियों के बच्चे शिक्षित हो सके। इस प्रकार शिक्षा के प्रति जागरूकता के चलते दलित जातियों में बदलाव की स्थिति देखी जा सकती है। शिक्षा के महत्व को दलित समाज समझ चुका है जिसके चलते दलित समाज के शिक्षित लोग समाज सेवी संस्थाएं बना कर समाज सेवा के लिए लगातार आगे आ रहे हैं। लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने *भंवर* उपन्यास में दलित जातियों में शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में आए बदलाव को दलित पात्र कुंवरपाल के परिवार के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> उसके बाद वे पहले नेहा से, फिर बीना से और फिर सबसे छोटी ममता से मिले। नेहा बी.ए अंतिम वर्ष में थी। बीना बी. ए. प्रथम वर्ष में, ममता बाहरवी में बादल स्कूल जाता नहीं था। लोकेश को बड़ा आश्चर्य हुआ कि इतने बच्चे पढ़ते हुए सभी मैनेज कैसे करते हैं।(108)

दलित जातियों में शिक्षित होकर उच्च पदों पर कार्य करने की दौड़ में लड़कियां भी अब पीछे नहीं हैं। प्रस्तुत उपन्यास में दलित पात्र कुंवरपाल की बेटियां पूजा, नेहा, बीना के माध्यम से दलित समाज में शिक्षा के प्रति आए परिवर्तन को प्रस्तुत किया गया है। शिक्षा के महत्व को समझने पर अब गरीब निर्धन दलित व्यकित भी अपने बच्चों को शिक्षा देने का प्रयास करता है। दलित समाज परम्परागत ढंग से जीवन जी रहा था। गरीबी अर्थाभाव, भूख, अशिक्षा, अंध विश्वास, भौतिक सुविधा का अभाव उनके जीवन के अंग माने जाते थे। बाबा साहब ने दलित समाज को शिक्षित बनने, संगठित बनने और संघर्ष करने का जो नारा लगाया था उसके परिणाम स्वरूप दलित समाज में चेतना जागृत हुई है। दलित समाज शिक्षित और जागरूक हुआ और अपने अधिकारों की बात करने लगा।

हिन्दी और पंजाबी के आलोच्य उपन्यासों में वर्णित शिक्षा की स्थिति की तुलना करते हुए क्हा जा सकता है कि हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित लेखकों ने पंजाब तथा भारत के अन्य शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में दलित जातियों में शिक्षा की स्थिति और उसमें हुए विकास और परिवर्तन को प्रस्तुत किया है। हिन्दी उपन्यास*दगैल* तथा *मगहर की सुबह* में दलित जातियों में कम शिक्षा की समस्या को प्रस्तुत किया गया है वहीं दलित समाज में शिक्षा के प्रभाव से विकास और परिवर्तन की स्थिति को *मगहर की सुबह, विद्रोह, भंवर* इत्यादि उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है। पंजाब में दलित जातियों में शिक्षा के क्षेत्र में आए विकास और परिवर्तन को *पंडोरी प्रोहितां, मुक्ति, परणेश्वरी* तथा *हनेरी रात दे जुगनू* उपन्यास में देखा जा सकता है जबकि *तर्पण* तथा *कानपुर टू कालापानी* उपन्यास में लेखक ने दलित परिवारों में शिक्षा के विषय पर अपनी लेखनी कम चलाई है।

2.2 दलित स्त्रियों की स्थिति

चिरकाल से ही नारी को सम्मान का दर्जा दिया जाता रहा है परन्तु पुरूष प्रधान समाज होने के कारण उसे सीमित अधिकार क्षेत्र ही प्राप्त था। पुरूषों द्वारा स्त्रियों पर अत्याचार भी किया जाता था परन्तु अपने आस्तित्व को बचाती हुई नारी आज शिक्षित होकर जीवन के हर क्षेत्र में आगे आ रही है, जैसे-जैसे नारी की मानसिकता परिष्कृत होती गई, वैसे-वैसे साहित्य में भी नारी जागृति का स्वर मुखरित होता गया है। वर्तमान समय में जहाँ एक ओर साहित्यकारों ने आम आदमी के स्वर,उसकी पीड़ा, त्रासदी को अपने साहित्य में उकेरा है वहीं दलित समाज में नारी की स्थिति को प्रस्तुत करते हुए वर्तमान समय में दलित औरत की स्थिति में आए विकास और परिवर्तन को भी प्रस्तुत किया है।

प्रस्तुत उपन्यास *मगहर की सुबह* में गैर-दलित लेखिका वंदनादेव शुक्ल ने दलित समाज की ग्रामीण अशिक्षित औरतों की दयनीय सामाजिक स्थिति को दलित युवती मैना और उसकी मां के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> जीवन के उस विशाल आकाश पर अधूरे चाँद की मानिंद अधर लटक रही थी गोया। किसे याद करे...अपने उस मंदबुद्धि पति को जो ब्याह का मतलब भी नहीं जानता था। अपने बचपन को जो इतने अभावों में भी खुश होने की संध निकाल लेता था। स्मृतियों की उस धुंध में अम्मा की कौंध सबसे चमकीली थी। अम्मा जो बच्ची की उमर में लड़की और लड़की की उमर में औरत बना दी गई थीं। उस रात वो सो नहीं पाई। (27)

ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में दलित जाति की स्त्रियों को हर प्रकार के शोषण को भाग्य मानते हुए स्वीकार करना पड़ता है। जिसका मूल कारण अज्ञानता और अशिक्षा है। नारी शोषण युगों से चली आ रही कुप्रवृति है। जिसमें दलित नारी सब से अधिक शोषण का पात्र बनी हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों में अशिक्षित दलित औरतों की बदहाली और शारीरिक शोषण का जिक्र हिन्दी के गैर-दलित लेखक शिवमूर्ति द्वारा*तर्पण* उपन्यास में प्रस्तुत किया गया हैः

> “अरे नाहीं मालकिन।” लवंगी ने आवाज धीमी कर ली ताकि रसोई में काम करती कैलासी न सुन पाए..“ का हमें मालूम नहीं, अपने चन्दर महाराज साल भर से ओकरे पीछे घूम रहे हैं। बाग-बगैचा, खेत खेतारी, नदी नारे पीछे-पीछे। (21)

प्रस्तुत उपन्यास में दलित युवती रजपतिया पर धर्मू पंडित का लड़का चन्दर बलात्कार करने का असफल प्रयास करता है और चन्दर का परिवार सब कुछ जानते

हुए भी अनजान बना रहता है। *दगैल* उपन्यास में गैर-दलित लेखक रूपसिंह चन्देल ने दलित समाज की कम शिक्षित दलित औरतों के शारीरिक शोषण की स्थिति को दलित स्त्री पात्र सुनीता के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> “तुम कितनी अच्छी हो सुनी” और विक्रांत अपने पर नियंत्रण खो बैठा। नीचे का दरवाजा वह मजबूती से बंद करके आया था। सुनीता ने विरोध किया लेकिन उसका विरोध शक्ति हीन था। विक्रांत ने उसे गोद में उठा लिया और बैड पर ले गया। सुनीता के विरोध की सारी कोशिशें बेकार हुईं। सुनीता ने कभी कल्पना भी नहीं की थी जो कुछ देर पहले घटित हो चुका था। वह बिलख कर रोती रही। विक्रांत ने उसे गोद में उठा लिया और उसके गाल चूमते हुए बोला “तुम्हें दुखी नहीं होना चाहिए सुनी। जीवन में यह भी उतना ही जरूरी है...जितना भोजन...तुम छोटी नहीं हो....समझदार हो...मैं तुम्हारी नौकरी के लिए दिन- रात एक किए हुए हूँ...दुनियाँ का नियम है...इस हाथ से लेना उस हाथ से देना। इसे सहज रूप में लो....जिन्दगी रोने के लिए नहीं है। प्रसन्न भाव से आनंद लूटने के लिए है।(111)

दलित समाज की अशिक्षित औरतों को आर्थिक अभावग्रस्तता के कारण घर परिवार चलाने के लिए स्वर्ण जाति के अमीर घरों में साफ-सफाई का कार्य करना पड़ता है, क्योंकि कमशिक्षा, अशिक्षा के कारण उन्हें और कोई काम धन्धा नहीं मिलता। इसलिए घरों में साफ-सफाई का कार्य करना पड़ता है, जहाँ पर दलित जातियों की औरतों की आर्थिक अभावग्रस्तता का फायदा उठाकर कुछ स्वर्ण जाति के लोग इनका शारीरिक शोषण करते हैं। आलोच्य उपन्यास का स्वर्ण युवक विक्रांत अपने घर में साफ-सफाई का कार्य करने वाली दलित युवती सुनीता का शारीरिक शोषण करता है और इसे वह सामाजिक व्यवहार की संज्ञा देता है। पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में दलित

औरतों की स्थिति को पंजाबी लेखकों ने प्रस्तुत किया है। पंजाबी उपन्यासकार निंदर गिल्ल ने *पंडोरी प्रोहितां* उपन्यास में पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में दलित औरतों के शारीरिक शोषण की समस्या को गाँव के गैर-दलित लड़के और दलित जाति की लड़कियों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> ऐह जट्टा दी मुण्डीर वाधा नौजवान सभा दे बहाने हरीजनां दे वेहड़े ऐवें आऊदां, जिवे किसे वेले व्यपार दे बहाने अंग्रेजां दी ईस्ट ईड़िया कम्पनी भारत आई सी ते मगरों राजभाग ते काबज हो बैठी सी। अंग्रेजां दी भारत दे कच्चे माल ते अक्ख होण वांग ईहना दी हरीजनां दीआ कच्चीआं कुआरीआं कुड़ीआं ते अक्ख है। अंग्रेजां द्वारा भारती कच्चे माल नू वलैत ले जा के फेर उत्थे उस दा पक्का माल बणा मुड़ भारती मंडी विच्च सुटण वांग इह जट्ट जमींदार हरीजनां दीआ कुड़ीआँ नू घरों कढ्ढ के ऊनां नू वरगला वरत खजल-खुआर कर मुड़ घरां नू मोड़ दिन्दे हन ।(8)

अर्थात स्वर्ण युवक दलित लड़कियों को बहका फुसला कर उन्हें भोगते हैं और उनकी इज्जत को खराब करते हैं और फिर उन्हें वापिस लौटा देते हैं। गैर-दलित जातियों के पुरषों के द्वारा अशिक्षित दलित औरतों को तरह-तरह के मकड़जालों में फसा कर अथवा उन्हें बहला फुसला कर उनका शारीरिक शोषण करने की समस्या को पंजाबी उपन्यास *मुक्ति* में लेखक एस.एस. कालड़ा ने प्रस्तुत किया हैः

> कंती ने नीवी पा लई। औह कुछ न बोली, पंडित ने कमरे दी अंदरों कुंडी ला दित्ती ते कंती नू कलावे विच्च ले के कहण लग्गा 'कंती डरो मत्त आप मेरी आत्मा को खुश करोंगे मैं दिल से आपकी बेटी का क्रिया क्रम करूगां। उसकी आत्मा को हमेशा के लिए मुक्ति मिल जाएगी। वह

> प्रमात्मा के चरणों में जा बिराजेगी.....इह कह कि पंडित ने कंती नू बैड पर सुट्ट लिया अतै औह कंती दे शरीर नाल छेड़-छाड़ करन लग्गा।(110)

हिन्दी के दलित उपन्यासकार विपिन बिहारी ने *हमलावर* उपन्यास में भारत के अन्य ग्रामीण क्षेत्रों में अशिक्षित दलित औरतों की शारीरिक शोषण की समस्या को प्रस्तुत किया हैः

> टोले द्वारा बलात्कार की रिपोर्ट कहीं नहीं की गई। न थाना गए न कहीं और किसी जगह हल्ला गुदाल भी किए तो थोड़ी देर के लिए ही। कहीं ये भी तो नहीं कि सह गए चुपचाप? क्या कर लेते, बलात्कार क्या नई घटना है, ऐसी घटनाएँ तो अक्सर घट जाती थी। गर्व करते था खासकर अगड़ा(उच्च जाति वाले) कि दलितों की औरतें उनके द्वारा भोगी जाती हैं और कोई कुछ नहीं बोलता।(153)

भारत के कई ग्रामीण क्षेत्रों में दलित औरतों के लिए अत्याचार और उत्पीड़न, शारीरिक शोषण कोई नई समस्या नहीं है। उनके साथ ऐसी घटनाएँ होना आम बात माना जाता है। इस प्रकार गैर-दलितों जातियों द्वारा दलित जातियों के परिवार की बहू- बेटियों को भी बेईज्जत किया जाता है जिसे वह अपने लिए फ़ख्र की बात समझते है। जहाँ गैर-दलित जातियों द्वारा दलित जातियों की औरतों का उत्पीड़न किया जाता है वहाँ दलित जाति के पुरूषों और औरतों के द्वारा भी दलित परिवारों की बहुओं का उत्पीड़न किया जाता है जिसका कारण पारिवारिक होता है। दलित जातियों में औलाद लड़की हो या लड़का इसके लिए भी औरत को ही कसूरवार मान कर उसका उत्पीड़न किया जाता है। दलित परिवारों में औरतों की इस स्थिति को

दलित लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने*भंवर* उपन्यास में दलित स्त्री पात्र राधा के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> बताओ बीबी जी क्या लड़का लड़की होना मेरे हाथ में है? अगर मेरे हाथ होता तो मैं इतनी लड़कियों को जन्म क्यों देती? और क्यों सास-ननद और पड़ौस की अन्य औरतों के इतने ताने सुनती...तीसरी लड़की के जन्म के बाद राधा ने अपना यह दुःखड़ा पुष्पा के आगे बयां किया।(34)

पंजाब में दलित ग्रामीण अशिक्षित औरतों की स्थिति को पंजाबी दलित उपन्यासकार अज़ीज सरोए ने उपन्यास *हनेरी रात दे जुगनू* में ग्रामीण क्षेत्रों में जम्मीदारों के घरों और खेतों में काम करने वाली दलित औरतों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> सिर ते कपड़ा लपेट के ते कच्छ च भांडे लै के मर्द आपणे कम्म धंदिआ लई जमींदारा दे खेता वल्ल नू चल पैंदे अतै औरतां गोहा-कूड़ा करन लई सवेर हुन्दिया ही अग्ग बुझाऊ यंत्र वांग घरों चल पैंदिआ....टहिले दे घर वाली जंगीरों वी कम्म तो नई सी खड़दी। उसदी ढुई(कमर) विच्च कुब्ब है।..उसनू ता विआह शादिआं दे कम्मा तो ही विहल नहीं सी मिलदी।(20-21)

ग्रामीण क्षेत्रों की औरतें घरेलु काम काज के साथ-साथ गाँव के जट्ट जमींदारों के घरों में साफ-सफाई का काम भी करती हैं। बेशक वह अनपढ़ हैं, परन्तु पारिवारिक जिम्मेदारी में वह पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिला कर कार्य करती हैं फिर चाहे वह कार्य सफाई हो या खेतों में मजदूरी करना। वर्तमान समय में भारत के शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में औरतों की बदलती स्थिति तथा शिक्षा के कारण हुए परिवर्तन को

दलित उपन्यासकार कैलाशचन्द्र चौहान ने *भंवर* उपन्यास में दलित पात्र कुँवरपाल की बेटी पूजा के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> पूजा ने आई. ए. एस की परीक्षा पास की थी, तभी से उसके लिए अच्छे घरों से रिश्ते आने लगे थे, जिसकी संख्या उसकी नियुक्ति के बाद कई गुणा बढ़ गई। उन रिश्तों में कुछ तो उसकी बिरादरी से बाहर के भी थे। अपने आप को ऊँची बिरादरी का कहने वाले भी रिश्ता लेकर आ रहे थे।(109)

कुँवरपाल स्वयं अशिक्षित है परन्तु वह अपनी बेटियों को उच्च शिक्षा देने का प्रयास करता है जिसमें वह सफल भी होता है। वर्तमान समय में शिक्षित होकर जहाँ भारतीय नारी आज जीवन के हर क्षेत्र में परचम लहरा रही है वहीं दलित परिवारों की लड़किया भी शिक्षित होकर उच्च पदों को प्राप्त कर अपनी प्रतिभा साबित कर रही हैं। *विद्रोह* उपन्यास में लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने दलित परिवारों की अनपढ़ स्त्रियों में आई चेतना को दलित स्त्री पात्र फूलों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> फूलों पहले तो हिचकचाई। फिर सभलते हुए बोली “मुझे तो विक्रम ने समझाया में समझ गई, इसके बापू की मौत भी अंध-विश्वास के कारण हुई थी। इसके बापू की क्यों मेरे दो बच्चे इसी अंध-विश्वास के कारण मरे थे।(89)

बेशक कई दलित परिवारों की औरतें अशिक्षित हैं, परन्तु उनके परिवारों के सदस्यों के शिक्षित हो जाने से समाज में उनकी स्थिति में भी बदलाव आया है। अशिक्षित नारियां भी अंध विश्वास से मुक्त होकर वर्तमान स्थिति को समझकर आगे बढ़ रही हैं फूलों जो कि एक अनपढ़ स्त्री है और बच्चों के शिक्षित होने से वह भी जीवन के प्रति अपने सामाजिक दृष्टिकोण को बदल चुकी है।

प्रस्तुत बिन्दु के अंतर्गत चयनित उपन्यासों में दलित नारी की स्थिति की तुलना करते हुए क्हा जा सकता है कि दोनों भाषाओं के चयनित उपन्यासकारों ने दलित औरतों की दयनीय स्थिति को प्रस्तुत किया है। दलित समाज में कमशिक्षित नारी की स्थिति को हिन्दी की गैर-दलित उपन्यासकार वंदनादेव शुक्ल ने *मगहर की सुबह,* रूप सिंह चन्देल ने *दगैल* उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है। इसके विपरीत दलित समाज में अशिक्षित नारी की स्थिति को शिवमूर्ति ने *तर्पण*, उपन्यास में प्रस्तुत किया है। हिन्दी के दलित उपन्यासकार विपिन बिहारी ने *हमलावर*, और कैलाशचन्द्र ने*भंवर* उपन्यासों में अशिक्षित औरतों की स्थिति का वर्णन किया है। पंजाब में दलित समाज की अशिक्षित औरतों की स्थिति को गैर-दलित लेखक निंदर गिल्ल ने *पंडोरी प्रोहितां* तथा एस.एस कालड़ा ने *मुक्ति* तथा अज़ीज सरोए ने *हनेरी रात दे जुगनू* उपन्यास में प्रस्तुत किया है। दलित जातियों में शिक्षा के प्रभाव से औरतों की स्थिति में हुए विकास और परिवर्तन को हिन्दी उपन्यासकारों में वंदना देव शुक्ल ने *मगहर की सुबह,* कैलाशचन्द्र चौहान ने *विद्रोह* तथा *भंवर* उपन्यास में प्रस्तुत किया है। पंजाबी लेखकों ने दलित औरत की स्थिति में हुए विकास और परिवर्तन को प्रस्तुत नहीं किया।

2.3 जाति आधारित भेदभाव

भारतीय समाज अनेक जातियों और उप-जातियों में बँटा हुआ है। यह विभाजन जन्म के आधार पर किया गया है। जन्म के आधार पर कर्म निर्धारित होते हैं और उसके अनुसार जाति। जातिप्रथा के कारण मानव की मानवीयता में बदलाव आया है। इन्सान-इन्सान के साथ पशुवत व्यवहार करता है। भारतीय संविधान में दलितोत्थान के उद्देश्य से की गई व्यवस्था एवं जनमानस को इसके लिए तैयार करने का श्रेय बाबा साहब अम्बेडकर जी को ही जाता है। समाज में वर्ण व्यवस्था अथवा जाति व्यवस्था के अनुसार दलित जातियों के प्रति छुआछूत की समस्या की दयनीय स्थिति के

निवारण के लिए बाबा साहब अम्बेडकर ने संविधान में अस्पृश्यता सम्बन्धी अनुच्छेद 17 में स्पष्ट प्राविधान कर छुआछूत का अंत करा दिया। संविधान के अनुच्छेद 17 को *दलितोत्थान* पुस्तक में जे. बी. सिन्हां ने प्रस्तुत किया हैः

> अस्पृश्यता का अंत किया जाता है और उसका किसी भी रूप से आचरण निषिद्ध किया जाता है। अस्पृश्यता से उपजी किसी निर्योग्यता को लागू करना अपराध होगा जो कि विधि के अनुसार दण्डनीय होगा।(24)

इस अनुच्छेद का उद्देश्य अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को संविधानिक संरक्षण प्रदान करना था परन्तु भारतीय समाज में कई वर्षों से जाति नाम का एक ऐसा ज़हरीला बीज बोया गया है, जिसका परिणाम आज हम इक्कीसवीं शतावदी में भी भोग रहे हैं। दलित जातियों के साथ गैर-दलित जातियों के द्वारा सामाजिक भेदभाव आज भी किया जाता है। जातिवाद का प्रभाव आज जहाँ जीवन के हर पक्ष पर दिखाई दे रहा है वहीं साहित्य का क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं है और जाति आधारित लिखे गए इस साहित्य को ही दलित साहित्य के नाम से जाना जाता है। समाज में वर्ण एवं जाति व्यवस्था के स्वरुप को गौतम भाईदास कुँवर *हिन्दी दलित साहित्य की दस्तक पुस्तक* में परिभाषित करते हुए कहते हैं

> भारतीय समाज व्यवस्था वर्ण एवं जाति पर आधारित है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैष्णव, एवं शुद्र अतिशूद्र इन वर्णों में पूरा समाज विभक्त था। इन्हीं वर्णों के आधार पर कर्म थे। अतः ब्राह्मण ज्ञानार्जन करते थे, साधना-तपस्या करना उनका काम था। क्षत्रिय शक्तिशाली न होते हुए भी देश की रक्षा करना उनका कर्म था तथा वैष्णव व्यापारी थे परन्तु

> शुद्रों तथा अतिशुद्रों के पास किसी प्रकार का काम नहीं था। उनका कर्म उपर्युकत तीनों वर्णों की सेवा करना था।(55)

इस प्रकार वर्ण व्यवस्था के आधार पर बनाई गई दलित जातियां जो कि समाज के अन्य वर्गों की सेवा करती थीं, को घृणा की दृष्टि से देखा जाता था और उन्हें समाज में रहने की भी इजाजत नहीं थी और यह दलित जातियां गाँव के बाहर रहती थीं। इन जातियों के समाज के अन्य वर्गों के साथ सम्बन्ध अच्छे नहीं थे। प्रस्तुत बिन्दु के अंतर्गत गैर-दलित तथा दलित जातियों के मध्य सम्बन्धों को तथा दलित जातियों में आपसी सम्बन्धों को तुलना का आधार बनाया गया है।

2.3.1 गैर-दलित जातियों का दलित जातियों से भेदभाव

मनुष्य के लिए जाति वह पिंजरा है जिसमें उसे जीवन पर्यंत कैदी होकर रहना पड़ता है। उसमें वह अचानक आ फँसता नहीं बल्कि जन्म ही उसमें लेता है। जाति व्यक्ति के जीवन को दायराबद्ध कर लेती है। जिसे चाहकर भी व्यकित मुक्त नहीं हो पाता। व्यक्ति का सामाजिक अधिकार यहीं तक है कि वह धर्म को बदल सकता है, पर जाति नहीं। सामाजिक जीवन के हर पड़ाव में जाति उसके सामने एक प्रश्नचिन्ह बनकर उपस्थित हो जाती है। जाति व्यवस्था के कारण दलित वर्ग गाँव के बाहर रह कर उपेक्षित, तिरस्कृत जीवन व्यतीत करता है। दलित जातियों की स्थिति में सुधार लाने की दृष्टि से भारतीय संविधान द्वारा दलित जातियों से भेदभाव खत्म करने सम्बन्धी कानून पारित किया गया। संविधान के अनुच्छेद 15 को *दलितोत्थान* पुस्तक में जे. बी. सिन्हां परिभाषित करते हुए कहते हैं किः

> भारतीय संविधान के अनुच्छेद15(1) के अनुसार राज्य किसी नागरिक के विरूद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर कोई भेदभाव नहीं करेगा। 15(2) के अनुसार

> दुकानों सार्वजनिक भोजनालयों होटलों तथा सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों में प्रवेश वर्जित नहीं होगा। 15(3) के अनुसार साधारण जनता के उपयोग के बारे में कोई भी निर्योग्यता प्रतिबंध या शर्त नहीं होगी।(24)

परन्तु इसके बावजूद भी गैर-दलित तथा दलित जातियों में और दलितों में जातिवाद के कारण ऊँच-नीच की समस्या आम देखी जा सकती है। चयनित उपन्यासकारों ने भारत के ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में जातिवाद की समस्या को आलोच्य उपन्यासों के माध्यम से प्रस्तुत किया है।आलोच्य उपन्यास *मगहर की सुबह* में गैर-दलित लेखिका वंदनादेव शुक्ल ने जातिवाद की समस्या को गैर-दलित जाति के ससूर मिसिर और उसकी दलित जाति की पुत्र वधू मैना के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> अब भुकतो, साली को कौन कहेगा कि बामन खानदान में ब्याही है।...इसका बाप भी दलित था और दगा करके हम बड़कुलों के खानदान में ब्याह दी छोरी...हाँ हम दलितों के खानदान की छोरी है नीच पापी जानवर की खाल उदेड़ कर जूता बनाने वारे, दरिद्रर नीच चमरा की बिटिया।(110)

इस प्रकार जाति के नाम पर अपनी बहू को नीच दिखाने वाले स्वर्ण पुरूष मिसिर द्वारा बहू मैना को जाति का ताअना दिया जाता है और इस दौरान वह यह भी भूल जाते हैं कि इस दलित युवती मैना को वह गरीबी और निर्धनता के कारण धोखे से खरीद कर लाए हैं। अपने मंद बुद्धि बेटे रज्जों की शादी करवाने के लिए यही नहीं घर में हर काम के बिगड़ने पर मैना को ही जिम्मेदार ठहराया जाता है और उसे नीच जाति का ताआना दिया जाता है। दलित जाति के लोग भी इसे अपना भाग्य मानकर स्वीकार भी करते हैं। वर्तमान समय में ग्रामीण क्षेत्रों में गैर-दलित तथा दलित

जातियों के मध्य जातिवाद की समस्या को *तर्पण* उपन्यास में गैर-दलित लेखक शिवमूर्ति ने घर्मू पण्डित तथा दलित पात्र प्यारे के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> शुद्रों चमारों का राज आ गया इसलिए पहले जैसा दबदबा तो अब क्या कायम रहेगा लेकिन पैलगी आशीश तक बंद कर दिया सालों ने, बिना कोई तवजजों दिए मुँह उठाए सामने चले आते हैं।(23)

गैर-दलित जातियां दलित जातियों को अपने से ऊँचा उठते हुए नहीं देख सकती। इसलिए इनके द्वारा झुक कर प्रणाम न करने पर स्वर्ण जाति के लोगों को इनका यह व्यवहार खटकने लगता है। गैर-दलित तथा दलित जातियों में जाति सम्बन्धी भेदभाव की समस्या को गैर-दलित लेखक रूपसिंह चन्देल ने *दगैल* उपन्यास में स्वर्ण युवक नवीन तथा साफ-सफाई का कार्य करने वाली दलित युवती वीना के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> पच्चीस छब्बीस साल की वह युवती उसके निवास से डेढ किलोमीटर दूर बाल्मीकि बस्ती में रहती थी। उसकी जाति के विषय में सुनकर नवीन का ब्राह्मणत्व जाग्रत हो उठा था, लेकिन लड़की की साफ-सफाई, सुन्दरता और बातचीत के ढंग से उसने उस विचार को एक ओर झटक दिया। शहर में रहकर गाँव की दकियानूसी सोच...काम नहीं चलेगा नवीन।(37)

बेशक यह लोग जातिवादी संकीर्णता के कारण दलित जातियों को अपने से नीचा मानते हैं और उन पर अत्याचार भी करते हैं परन्तु जैसे ही दलित जातियों की सुन्दर कन्याओं को देखते हैं तो इनका जातिवादी दंश तेल लेने चला जाता है अर्थात अपने फायदे के चलते स्वर्ण जाति के लोग जातिवाद को भूल जाते हैं परन्तु जैसे ही उनका मकसद पूरा होता है, जातिवादी भावना फिर से प्रबल हो जाती है। गैर-दलित तथा

दलित जातियों में जाति आधारित अस्पृश्यता के चलते यदि कोई स्वर्ण जाति का व्यकित दलित जातियों से जाति को न मानने की बात करता भी है तो दलित जातियों के लिए यह आश्चर्य की बात बन जाती है क्योंकि हज़ारों सालों से गुलाम जातियां अभी भी इस मानसिक्ता को नहीं छोड़ पाई हैं। लेखक रूप सिंह चन्देल ने उपन्यास *कानपुर टू कालापानी* में जातिवाद से प्रभावित दलित जातियों की स्थिति को गैर-दलित पात्र सरजू और दलित युवती के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> हमने मना नहीं किया। लेकिन तुम जानते हो कि ऊंची जात वालों की गंदगी हम साफ करते हैं और वो लोग हमें रोटी टपकाकर देते हैं। सालन देने की कटोरी अलग....हमसे छू जाते हैं तो सीधा गंगा स्नान के लिए दौड़ जाते हैं और बिराम्हनों का तो कुछ पूछों ही नहीं....चुल्लू बांधो...पानी पियो। कोऊ देख नहीं रहा है। जल्दी से आपना रास्ता पकड़ो। किसी ऊंची जाति वाले ने देख लिया तो हम लोगों की शामत आ जाएगी।(29)

प्रस्तुत उपन्यास में स्वर्ण जाति के युवक सरजू को प्यास लगने पर जब वह अपरिचित दलित युवती से दलितों के कुएँ से पानी पिलाने का आग्रह करता है तो दलित युवती को आश्चर्य भी होता है और डर भी लगता है कि यदि ठाकुर होकर वह लड़का दलितों के कुएँ से पानी पी लेगा तो इसका हरजाना दलितों को ही भुगतना पड़ेगा अर्थात परिस्थितियाँ चाहे जो भी हो परन्तु दोषी दलित जाति के व्यक्ति को ही माना जाता है। पंजाब के गैर-दलित तथा दलित लेखकों ने भी पंजाब में गैर-दलित तथा दलित जातियों के मध्य जातिवाद की समस्या को प्रस्तुत किया है। पंजाब में गैर-दलित तथा दलित जातियों में जातिवाद की समस्या को एस.एस.कालड़ा ने *मुक्ति* उपन्यास में स्वर्ण पात्र पुलिस कर्मी और दलित स्त्री पात्र लाडो और उसकी मां कंती के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> तुहाडे कित्थों आए? एह ता पुन्न दान दे पैसे हन। दान पुन्न दे पैसिआं ते ब्राह्मणा दा पंडिता दा हक्क हुन्दा है, कम्मी कमीणिआं दा नहीं। मैं वीं पण्डिता दा मुण्डा हां। इह कहन्दे होए सपाटे ने पल्ली ते पए सारे पैसिआं ते झपटा मार मुठ्ठ भर लई।(12)

जातिवाद एक ऐसा रोग है जो चाह कर भी समाज से समाप्त नहीं किया जा सकता। कंती और उसकी बेटी लाडो द्वारा गंगा नदी में दान के पैसे इक्टठे करने पर जातिवाद को आधार बनाकर पुलिस कर्मी उनसे वह पैसे छीन लेता है और वह इन दान किए गए पैसों पर ब्राह्मण जाति का हक्क बताता है। जातिवाद के कारण पण्डित लोग दान किए गए पैसों पर अपना हक्क मानते हैं जबकि उन पैसों की आवश्यकता गरीब अर्थात निर्धन लोगों को ज्यादा होती है। वह लोग जो दो वक्त के खाने का इन्तजाम भी मुश्किल से कर पाते हैं। पंजाबी लेखक बलदेव सिंह ने *अन्नदाता* उपन्यास में पंजाब में गैर-दलित तथा दलित जातियों के मध्य जातिवादी भेदभाव की समस्या को स्वर्ण जाति के पात्र रूप सिंह तथा उसके बेटे प्रकाश के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> रूप सिंह कलपदा रहिंदा, प्रकाश नू अंदर वड़ के समझाऊदां वी सी। प्रकाश बेटे अपणी कौम दी इन्नां नाल यारी नहीं पाल सक्दी। आपा ता इन्ना नाल वणज व्यापर करना हुन्दा। इन्ना नू करजाई बणा के सारी उम्र आसामी बनाऊणा हुन्दा। इन्ना नाल अपणी भाईवाली नी पै सकदी।(42)

इस प्रकार गैर-दलित जातियां अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए ही दलित जातियों से थोड़ा बहुत सम्बन्ध रखती हैं ताकि उनका स्वार्थ पूरा हो सके। जातिवादी छुआछूत के कारण यह लोग दलित जातियों के लोगों द्वारा उनके घरों में काम करने पर उन्हें चाय पानी के लिए अलग बर्तन देते हैं। जिसे वह अपने बरतनों में नहीं रखते। पंजाबी

गैर-दलित लेखक बलदेव सिंह ने आलोच्य उपन्यास *अन्नदाता* उपन्यास में पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों के गैर-दलित परिवारों में दलित जातियों के साथ जाति आधारित छुआछूत की समस्या को दलित पात्र रूलदू के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> दिन चड़े ही रूलदू आया। आऊदें ही उसने दलान दी कंध विच्च बणे आले विच्चों आपणा कप्प चुक्क के विहड़े विच ले आया अतै चाय लई इंतजार करन लग्गा। चाय बनण नू समा लग रिहा सी.....रूलदु ने कप्प चक्क के फेर आले विच्च रख दीत्ता ....अतै बाहर निकल गया।(19)

अर्थात जातिवाद के चलते ये लोग निम्न जाति के लोगों को बात–बात पर नीचता का ताअना मारते हैं और अपनी श्रेष्ठता इनसे ऊच्च सिद्ध करने का प्रयास करने लगते हैं। पंजाबी लेखक निंदर गिल्ल ने *पंडोरी प्रोहितां* उपन्यास में पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में जाति आधारित छुआछूत की समस्या को दलित पात्र करतार सिंह के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> असल विच्च पंडित करतारा ते उस वर्ग दे होर दलित पंडित हिन्दू पंडितां वरगै सन। सिक्खी नू ता औहना ने अर्ध तौर ते ही अपणाईया सी ।....दलितां विच्च औह पंडित इस लई बण गए सन, क्योंकि एक ता उच्च जाति दे ब्राह्मण पंडित भिट्ट छुआछूत मनदे सन।(103)

हिन्दी उपन्यासकार विपिन बिहारी ने *हमलावर* उपन्यास में भारत के अन्य ग्रामीण क्षेत्रों में गैर-दलित तथा दलित जातियों के मध्य जातिवाद की समस्या का वर्णन दलित टोलों के माध्यम से किया हैः

> अगड़ा पिछड़ा एक दिशा में है और दुसांध चमरौटा फल्गु की दिशा में। जब फल्गु में बाढ़ आई तो क्या लोग अलग-अलग जत्थे में भागे होंगे

> इस तरफ बसने के लिए या ......उसी समय अचानक बाढ़ आई थी जो जीम चुके थे और ये हरिजन पीछे।(11)

जातिवाद के कारण समाज के हर कार्य में अग्रणी रहने का हक्क सिर्फ और सिर्फ स्वर्ण जातियों को ही मिला है। दलितों को हर कार्य में पीछे ही रखा जाता है। ज्यादातर दलित बस्तियां शहरों, नगरों, कस्बों, अर्थात रिहाईशी स्थानों के बाहर होने के पीछे यही मानसिक्ता कार्य करती है। भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में जाति संकीर्णता शहरी क्षेत्रों की तुलना में कुछ ज्यादा प्रबल देखी जा सकती है। यही कारण है कि दलित जाति के लोग अपने पुशतैनी गाँवों को छोड़कर शहर की तरफ प्लायन करते हैं और जातिवादी घृणा से बचने के लिए निम्न जाति के लोग शहरों में स्वर्ण जातियों के मध्य जाति छुपा कर रहते हैं क्योंकि दलित जातियों के पढ़ने लिखने और उच्च पदों पर कार्य करने के बाद भी स्वर्ण जाति के लोग दलित जाति के लोगों को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। भले ही दलित जाति का व्यकित कितना ही योग्य क्यों न हो और अपने परम्परागत निम्न व्यवसाय को कितना ही पहले क्यों न छोड़ चुका हो फिर भी उसकी श्रेष्ठता जन्म के आधार पर ही मानी जाएगी अर्थात नीच जाति में जन्म लेने के कारण उसे नीच समझा जाता है और उसके गुणों के अनुरूप उसे सामाजिक सम्मान प्रदान करने से वंचित रखा जाता है। कैलाशचन्द्र चौहान ने *भंवर* उपन्यास में दलित जातियों द्वारा शहरों में जाति छुपा कर रहने की समस्या को दलित पात्र पुष्पा और लोकेश के व्कतवय के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> पुष्पा यह बात ठीक है कि हम लोग यहाँ अपनी जाति छुपा कर रह रहे हैं लेकिन तुम अपनी मूल जाति न भूलों। आज मुझे अनुभव हो रहा है कि जाति दुनियाँ का सबसे बड़ा सत्य है, जो मरने तक पीछा नहीं छोड़ती। बच्चों की शादी के समय यह और भी भयंकर रूप से सामने आती है।(93)

प्रशासनिक क्षेत्रों में गैर-दलित तथा दलित जातियों के शिक्षित लोगों के मध्य जातिवादी समस्या को आम देखा जा सकता है। दलित जाति के शिक्षित लोगों को प्रशासनिक क्षेत्रों में गैर-दलित जातियों द्वारा जातिगत भेदभाव को झेलते दिखाया गया है। शिक्षित होने के बाद भी दलित जाति की सामाजिक स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं आता। जाति से नीच होने के कारण उन्हें जातिवादी ताअने की पीड़ा को झेलना ही पड़ता है। जातिवादी ताअने की पीड़ा को झेलते शिक्षित दलित समाज की स्थिति का वर्णन कैलाशचन्द्र चौहान ने *विद्रोह* उपन्यास में दलित पात्र पन्नाराम गौतम जो कि पेशे से सरकारी विभाग में जे.ई के पद पर कार्यरत है के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> देख लो मिश्रा जी, इनके दिमाग में एस.सी.ओ. के प्रति कितना गंद भरा हुआ है। आप खुद बताओ शराब क्या एस.सी.ही पीते हैं? ये खुद नहीं पीते? इनके देवी देवता तक मदिरा पान करते हैं। बदनाम तुम लोगों ने एस.सीओ. को कर रखा है। पन्ना राम फिर तैश में आ गए।(33)

जातिवाद के कारण दलित जातियों के लोगों को शहरों कस्बों तथा गाँवों के भीतर बस्तियां बना कर रहना पड़ता है। ग्रामीण क्षेत्रों में यह लोग जट्ट जमींदारों के घरों में सीरी पाली का कार्य करके जीवन यापन करते हैं। पंजाब में सिक्ख धर्म के प्रभाव के कारण गैर-दलित तथा दलित जातियों में जातिवादी संकीर्णता को भारत के अन्य क्षेत्रों के मुकाबले कहीं न कहीं कुछ कम देखा जा सकता है। पंजाबी दलित उपन्यासकार अज़ीज सरोए ने उपन्यास *हनेरी रात दे जुगनू* में पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में जातिवाद की स्थिति को प्रस्तुत किया हैः

> करतार सिंह दी घरवाली बलजीत कौर वी खुले अतै दानी सुभाअ दी मालिक सी। अठ्ठ दस एकड़ जिहड़ी हिस्से बहिंदी आई है...कणक दी चिंता खत्म हो जाणी सी। बल्लियाँ चुग के फीस जोगे पैसे ता प्रताप ने खुद ही जोड़ लए सन। नौवी पास करन तो बाद अज्ज पहले दिन स्कूल जा रिहा सी। (24)

गैर-दलित तथा दलित जातियों के मध्य जातिवाद को आधार बनाकर पंजाब में जाति आधारित कार्य के विभाजन की समस्या को प्रस्तुत किया गया है। लेखक ने जाति को सामाजिक संकीर्णता और मानसिक बीमारी का सूचक मानते हुए इसे सामाजिक संरचना का एक बड़ा दोष माना है। पंजाबी दलित उपन्यासकार देशराज काली के उपन्यास *शांतिपर्व* में गैर-दलित तथा दलित जाति के आपसी सरोकारों को प्रस्तुत किया हैः

> हुण उसने वक्त पाईया होईया है वैसै तौबा ही, औह दरअसल जट्टी आ चामड़िए....बहूते चमार इट्टा थपदे सन। कूड़ा चूहड़े इक्टठा कर लेंदे सन। गोहा कूड़ा उन्ना इक्टठा करके दे देना। गोहे कुड़े विच्च बनाऊणीआं ओग नानकसरी इट्ट।(31-32)

अर्थात गैर-दलित और दलित जातियों को मध्य जाति एक अहम मुद्दा है जिसका अब तक कोई हल्ल नहीं निकल पाया है। वर्तमान समय में हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में जातिवाद से प्रभावित ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में दलित समाज की दयनीय स्थिति को दोनों भाषाओं के गैर-दलित तथा दलित उपन्यासकारों ने प्रस्तुत किया है। गैर-दलित तथा दलित जातियों के मध्य जातिवाद की समस्या की तुलना करते हुए क्हा जा सकता है कि गैर-दलित जातियों का दलित जातियों से भेदभाव की समस्या को हिन्दी के गैर-दलित उपन्यासकार वंदनादेव शुक्ल ने *मगहर की सुबह* में लेखक

रूप सिंह चन्देल ने *दगैल तथा कानपुर टू कालापानी* में शिवमूर्ति ने *तर्पण* उपन्यास में प्रस्तुत की है। पंजाबी के गैर-दलित उपन्यासकार निंदर गिल्ल *ने पंडोरी प्रोहितां* राम स्वरूप अणखी ने *सलफास*, बलदेव सिंह ने *अन्नदाता* तथा एस.एस कालड़ा ने *मुक्ति* उपन्यास में गैर-दलित तथा दलित जातियों के मध्य जातिवादी संकीर्णता को प्रस्तुत किया है। हिन्दी के दलित उपन्यासकार कैलाशचन्द्र चौहान ने अपने उपन्यास *विद्रोह तथा भंवर* में विपिन बिहारी *ने हमलावर* तथा *मरोड़* उपन्यास में गैर-दलित तथा दलित जातियों के मध्य जातिवादी संकीर्णता की स्थिति को प्रस्तुत किया है। पंजाबी के दलित लेखक देशराज काली ने *परणेश्वरी और शांतिपर्व* उपन्यास में गैर-दलित तथा दलित जातियों के मध्य जातिवादी समस्या को प्रस्तुत किया है। पंजाब में जातिवाद सम्बन्धी विकास और परिवर्तन की स्थिति को पंजाबी के दलित उपन्यासकार अज़ीज सरोए ने *केही वगै हवा* तथा *हनेरी रात दे जुगनू* में प्रस्तुत किया है। लेखक ने गैर-दलित तथा दलित जातियों के मध्य जाति आधारित सम्बन्धों में संकीर्णता की स्थिति को बहूत कम दिखाया है जबकि लेखक ने गैर-दलित जातियों और दलित जातियों के मध्य मधूर सम्बन्धों को प्रस्तुत किया है। इस प्रकार दोनों ही भाषाओं के लेखकों ने गैर-दलित तथा दलित जातियों के मध्य जातिगत भेदभाव की समस्या को प्रस्तुत किया है।

2.3.2 दलित जातियों में आपसी भेदभाव

भारतीय सामाजिक व्यवस्था का एक कलंक है, जाति व्यवस्था। भारतीय साहित्य में प्राचीन समय से संत कवियों ने इस व्यवस्था के विरूद्ध आक्रोश व्यक्त किया था ताकि जातिवाद रूपी इस कलंक को समाप्त किया जा सके, परन्तु फिर भी जातिवाद की समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई है। पहले यह समस्या गैर-दलित तथा दलित जातियों के मध्य देखी जाती थी परन्तु वर्तमान समय में आज का दलित

समुदाय भी इससे अछूता नहीं है। पंजाबी तथा हिन्दी के चयनित उपन्यासकारों ने दलित समुदायों में व्याप्त अंदरूनी भेदभाव और ऊँच-नीच की परिस्थितियों को प्रमाणिकता के साथ प्रस्तुत किया है। पंजाबी के गैर-दलित साहित्यकार निंदर गिल्ल ने *पंडोरी प्रोहितां* उपन्यास में दलित जातियों में व्याप्त जातिगत भेदभाव की समस्या को दलित पात्र करतारे के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> अण सरदे नू साधारण मजहबी सिक्खां विच्च रिश्ता कित्ता सी औह वी रिश्ता लिया सी, दित्ता नहीं सी। बाल्मीकिआं नाल ता ऊक्का ही नहीं कोई रिश्तेदारी पाई सी। बेशक बाल्मीकि पिंड दा ही क्यों न होवे, मल्ल मूत्र चुक्कण वाला वी न होवे।(37)

दलित जातियों में व्यापत जातिवाद के चलते उच्च दलित जातियां निम्न दलित जातियों के साथ भेदभाव करती है और उनसे किसी भी प्रकार की रिश्तेदारी नहीं करतीं। दलित जातियों में जातिगत भेदभाव की समस्या को दलित साहित्यकार कैलाशचन्द्र चौहान ने *भंवर* उपन्यास में दलित पात्र पुष्पा तथा सुधाकर के माध्यम से पढ़े लिखे शिक्षित दलित समाज के मध्य जातिवाद की समस्या पर प्रकाश डाला हैः

> पुष्पा बात सुधाकर की भी ठीक है लेकिन यह भी बताओं कि हम दलित तो हैं लेकिन बाल्मीकि. अंकल जी यह समझ में नहीं आता कि हम दलित भी ब्राह्मणवादी सोच से बाहर क्यों नहीं निकल पा रहे हैं। हम दलित है क्या इससे ही पता नहीं चलता कि हम सब एक है मैं भी दलित आप भी दलित…"लेकिन बेटा सभी ब्राह्मणवादी सोच से बाहर निकले तब ही न, अच्छा बताओं आप दलितों में से कौन से दलित हो?" चलों बताए देता हूँ हमें चमार कहा जाता है।(95)

आलोच्य उपन्यास भंवर के पात्र अनामिका तथा सुधाकर दोनों ही दलित समुदाय से हैं लेकिन दलित समाज में भी हिन्दु समाज की तरह अन्य जातियाँ विराजमान हैं। जिसके चलते दलित समाज में जातिगत भेदभाव देखने को मिलता है। उपन्यास *भंवर* में लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने दलित समाज में व्यापत जातिवाद की समस्या को दलित पात्र लोकेश और सुधाकर के व्कतवय के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> ठीक है तेरी बात दलित भी जाति ही है। हम उसी में आते हैं लेकिन उसके बाद हमारे साथ जो चस्पा है ना बाल्मीकि, खटीक, धोबी, चमार, धानक आदि और कई उपजातियाँ है, यह छूटने वाली नहीं है। हम चाहे तब भी नहीं समझे.....जब वो जातिवाद नहीं छोड़ती तो हम क्यों छोड़े....सुधाकर के अंदर जैसे सबपा के प्रति काफी गुस्सा भरा हुआ था।(163)

वर्तमान समय में दलित समाज में भी कई उपजातियाँ बन गई हैं जिसके कारण दलित समाज में जातिवाद एक बड़ी समस्या बन गया है। इस प्रकार दलित जातियों में व्याप्त जातिवाद की तुलना करते हुए क्हा जा सकता है कि सामाजिक आयाम के इस बिन्दु की तरफ सभी लेखकों की दृष्टि नहीं गई है। पंजाबी के गैर-दलित लेखक निंदर गिल्ल ने *पंडोरी प्रोहितां* और हिन्दी लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने *भंवर* तथा *विद्रोह* उपन्यास में दलित जातियों में जातिवाद की समस्या को प्रस्तुत किया है। इसके विपरित पंजाबी लेखक रामस्वरूप अणखी ने *सलफास*, बलदेव सिंह ने *अन्नदाता*, एस एस कालड़ा ने *मुक्ति*, देशराज काली ने *परणेश्वरी* तथा *शांतिपर्व*, अज़ीज सरोए ने *हनेरी रात दे जुगनू* तथा *केही वगै हवा* उपन्यास में दलित जातियों के मध्य जाति आधारित आपसी सरोकारों को प्रस्तुत नहीं किया है। हिन्दी लेखिका वंदना देव शुक्ल ने *मगहर की सुबह*, रूप सिंह चन्देल ने *दगैल* तथा *कानपुर टू कालापानी* में तथा शिव मूर्ति ने *तर्पण* में विपिन बिहारी ने *हमलावर* तथा *मरोड़*

उपन्यास में दलित जातियों के मध्य जाति आधारित आपसी सरोकारों को कम ही प्रस्तुत किया है।

2.4 गंदगी भरा वातावरण

जातिगत भेद-भाव के कारण दलित जातियों को शुरू से ही गाँव अथवा नगर से बाहर बस्तियां बनाकर रहना पड़ता था जहाँ पर लगभग सभी सुविधाओं का आभाव होता था और यही नहीं सुविधाओं से हीन होने के कारण उनके चारों और का वातावरण भी गंदगी भरा होता था अर्थात दलित जातियों की स्थिति शुरू से अच्छी नहीं थी। वर्तमान समय में भी दलित परिवारों की दयनीय स्थिति अर्थात गंदगी भरे रहन-सहन को भी हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित उपन्यासकारों ने आलोच्य उपन्यासों में प्रस्तुत किया है। हिन्दी उपन्यासकार वंदनादेव शुक्ल ने *मगहर की सुबह* उपन्यास में दलित समाज के गंदगी भरे माहौल में रहने की विवशता को प्रस्तुत किया हैः

> मैना जब भी गांव में दरिद्रता और बदहाली देखती, दलितों को नर्कतुल्य जीवन ढोते हुए देखती तो उसका अपना गाँव आँखों के आगे खदबदाने लगता, कीड़े मकौड़े व अवारा पशुओं के साथ उन्हीं की ही तरह जीते इन्सान और तो और जिन्हें सामान्य मौत मरना भी नहीं आता था। मैना को लगता है कि जैसे ये सब उसके वजूद के हिस्से ही हैं। जो उसी से टूट कर गिर और बिखर रहे हैं।(97)

हिन्दी के गैर-दलित उपन्यासकार रूप सिंह चन्देल ने *कानपुर टू कालापानी* उपन्यास में दलित समाज की बस्तियों के आस-पास के गंदगी भरे वातावरण की समस्या को उन्नाव शहर की बाल्मीकि बस्ती के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> उन्नाव से बाहर निकलते ही उसे एक छोटी-सी बस्ती मिली बस्ती के बाहर एक तलैया थी, जिसमें सूअर लोट रहे थे। पास ही कुछ कुत्ते लेटे अर्द्ध निद्रा में दिखाई दिए उसे। एक घर के बाहर मुर्गों का बाड़ा बना हुआ था...एक जगह खड़ा होकर उसने चारों ओर नजरें घुमाई यह देखने के लिए कि वहां कोई कुआं था या नहीं। बस्ती की बायी ओर उसे एक कुंआ दिखा, जिसकी जगत से हटकर एक गड्ढे में भरे पानी में भी दो सूअर उलट – पलट रहे थे।(28)

आलोच्य उपन्यास में लेखक ने लखनऊ के नजदीक उन्नाव शहर की एक दलित बस्ती के गंदगी भरे वातावरण का वर्णन किया है। उपन्यास *दगैल* में लेखक रूपसिंह चन्देल ने दलित बस्ती के गंदगी भरे वातावरण की समस्या को गैर-दलित पात्र विक्रांत और वनीता के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> कभी इसी मोहल्ले से सटे चन्द्रवाल गाँव के बीच से निकले? कभी मलकागंज के अंदर गए? पुरानी सब्जी मंडी के साथ की कॉलोनी देखी? चन्द्रवाल रोड की दूसरी ओर की बसती जो कोल्हापुर रोड के सामने, जहाँ संकरी गलियाँ हैं...गए? नहीं न लेकिन मैं घूमी हूँ वहाँ। चन्द्रवाल गाँव में बजबजाते काले कीचड़ में सूअरों को लोटते देखा और कोल्हापुर रोड के सामने की कॉलोनी में साक्षात नर्क...मकान, ऐसे कि जिनमें शायद ही कभी सूरज की रोशनी पहुँचती हो. छोटे मकान, जिनमें केवल सूअरों को ही रखा जा सकता है, लेकिन वहाँ इंसान रहते हैं..इंसान जिनके बल पर सरकारे बनती हैं, व्यापार चलते हैं। सरकारों के बनाने में वे वोट रूपी खाद का काम करते हैं और व्यापार में उनके अथक श्रम का योगदान होता है और यह भी जान लें कि शराब की खासी खपत इन बस्तियों में होती है।(92)

दलित समाज न चाहते हुए भी गंदगी भरे इन स्थानों पर रहने के लिए विवश है क्योंकि इनके पास इसके अतिरिक्त अन्य कोई विक्लप नहीं होता। दलित जातियों को हमेशा से ही जातिवादी घृणा का सामना करना पड़ता है और यह घृणा आज की देन नहीं बल्कि सदियों पुरानी है। सदियों से दलित समाज को हर सुविधा से वंचित रखा गया है। पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में दलित जातियों की सामाजिक स्थिति अर्थात गंदगी भरे वातावरण की समस्या को पंजाबी के गैर-दलित उपन्यासकार निंदर गिल्ल ने *पंडोरी प्रोहितां* उपन्यास में दलित पात्र पण्डित करतारे के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> औह सोचदा सी वेदां शास्त्रां विच्च तां सानू नीवां दिखाया ही गया है। पिंड वालिया ने वी पिंड वसाऊण वेले सानू नीवें थां वसा के नीवां ही दिखाया है। औह सोचदा पिंड विच्च हड़्ड़ भावें मींह दा आवे, भावे जवानी दा, पाणी ते वीरज वहिन्दा औहना वल्ल ही है।(91-92)

पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में दलित बस्तियों के आसपास गंदगी भरे वातावरण तथा उस वातावरण में दलित जातियों के रहने की विवशता को *अन्नदाता* उपन्यास में लेखक बलदेव सिंह ने प्रस्तुत किया हैः

> चमिआरा दे इनां घरां दी वक्खी नाल खहिंदा बदबू मारदा एक छप्पड़ है। छप्पड़ दे कंडे लूण ला के टंगीआ कच्चीआं खल्ला दी सड़ांद सारे पिंड दे वातावरण विच्च अजीब जिही तिखी गंध घोलदी रहिन्दी है। पिंड दे सूग मन्नण वाले लोका नू जदों एद्धर दी लंघणा पैंदा है तां औह सहज ही अपने नक्क ऊपर कपड़ा जा हत्थ रक्ख के लघदे हन।(81)

दलित जातियों द्वारा आजीविका कमाने के लिए किए जाने वाले कार्य के कारण भी दलित जातियां गंदगी भरे वातावरण में रहने को विवश हैं। समाज में जातिवाद की

समस्या के चलते दलित जातियों के रहने के स्थान शहरों तथा कस्बों के बाहर दयनीय स्थिति में देखे जा सकते हैं। पंजाबी उपन्यासकार अज़ीज सरोए ने *हनेरी रात दे जुगनू* उपन्यास में दलित जातियों की गंदगी भरे वातावरण में रहने की विवशता और दयनीय सामाजिक स्थिति को प्रस्तुत किया हैः

> पच्छम वल्ल इक्क निक्की ते वक्खरी जिही बस्ती दे रूप विच्च मजहबी सिक्खा दे घर हन। बस्ती दे बिल्कुल बीच्चकार पिल्लियां इट्टा दी बणी होई एक छोटी जिही चौकड़ी है । चौकड़ी ऊपर एक मट्टी बणी होई है। इह मट्टी सरों दे तेल अतै धुएँ नाल थिन्दी होई है। मट्टी दे बिल्कुल जड़ विच्च दस फूट्ट लम्बा बांस जिहड़ा की रंग बिरंगीआं चुन्नियाँ दुपट्टियां, मौर दे खम्बा नाल सिंगारिआ पिआ है ।..बे तरतीब घर, ते सप्प वांग वल्ल खांदिआं गलीआं...।(20)

पंजाबी भाषा के लेखकों ने पंजाब में जहाँ दलित जातियों को गंदगी भरे वातावरण में जीवन व्यतीत करने के लिए विवश दिखाया है वहीं पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में दलित जातियों की सामाजिक स्थिति में हुए सुधार अथवा परिवर्तन की स्थिति को पंजाबी उपन्यास *सलफास* के लेखक रामस्वरूप अणखी ने विस्वेदार जसवंत सिंह के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> दुनिया बहूत बदलगी जसवंत सिंहा। कदे चमिआरा दे विहड़े जा के देखी। अद्धे चमिआर ता नए मुण्ड़े ने जिहड़े पिंड छड्डगे। शहरी जा वसे उत्थे नौकरिआं ते ने आपणी, ते जा कई होर कीत्ते कम्म करदे ने आपणा। ऐथे पिंड आलिया दे खुले-खुले घर ने, मैं इक दिन जूती दा मेच देण गया सी। निगाह मारी हरेक घर मैस खड़ी है। सीरी पाली आला कम्म ता हुण कोई कोई करदा।(394)

भारतीय संविधान में समय-समय पर दलित जातियों का उत्थान करने के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं जिसके परिणाम स्वरुप वर्तमान समय में शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में दलित समाज की स्थिति में काफी सुधार हुआ है। हिन्दी के दलित उपन्यासकार कैलाशचन्द्र चौहान ने *भंवर* उपन्यास में शिक्षित दलित वर्ग के लोगों की सामाजिक स्थिति में हुए बदलाव का चित्रण दलित पात्र कुँवरपाल के गाँव के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> गाँव में बहुत कुछ बदल चुका था। शहर के नजदीक होने के कारण उसमें चमक दमक काफी बढ़ गई थी। मकान कोठियों में बदल चुके थे। कच्चे मकान पक्के हो चुके थे। लेकिन शांति का घर कोठी में नहीं बदला। केवल पक्का हुआ। पन्द्रह फूट की गली के दोनों तरफ पक्के मकान थे। गांव शहर में बदल जाने के बावजूद उसे देखकर साफ लगता कि यह किसी समय का गांव ही है। अब भी जगह-जगह गांव के निशान मौजूद थे।(50)

संविधान द्वारा दिए गए विशेष प्रावधानों तथा शिक्षा के परिणाम स्वरूप दलित जातियों की स्थिति में कुछ परिवर्तन और बदलाव अवश्य आया है। दलित लेखक विपिन बिहारी ने *मरोड़* उपन्यास में दलित पात्र कपिलदेव के माध्यम से पढ़े लिखे शिक्षित तथा आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न दलित परिवारों की सामाजिक स्थिति का वर्णन किया हैः

> थाने से हटकर कपिल देव का घर। कपिलदेव दलित। बहूत ही कम समय में एक रईस का दर्जा हासिल कर लिया। चूंकि वह दलित थे तो उनकी रईसी बहुत कम समय में आस पास के लोगों के बीच चर्च में आ गई थी। खासकर स्वर्ण मानी जाने वाली जातियों में।(29)

वर्तमान समय में दलित समाज के लोग शिक्षित होकर उच्च पदों पर कार्य कर रहे हैं जो कि उनकी स्थिति में हुए बदलाव और परिवर्तन को दर्शाता है।

इस प्रकार सामाजिक आयाम के बिन्दु गंदगी भरे वातावरण की समस्या और वर्तमान समय में उनकी स्थिति में आए बदलाव एवं परिवर्तन की स्थिति की तुलना करते हुए क्हा जा सकता है कि दलित जातियों की गंदगी भरे वातावरण में रहने की विविशता को हिन्दी के गैर-दलित उपन्यासकार वंदनादेव शुक्ल ने *मगहर की सुबह* में शिवमूर्ति ने *तर्पण* तथा रूपसिंह चन्देल ने *कानपुर टू काला पानी* और *दगैल* उपन्यास में प्रस्तुत किया है। पंजाबी के गैर-दलित उपन्यासकार निंदर गिल्ल ने *पंडोरी प्रोहितां* उपन्यास में ग्रामीण क्षेत्रों में दलित जातियों के गंदगी भरे वातावरण का वर्णन करते हुए दलित समाज की वहाँ रहने की मजबूरी को प्रस्तुत किया है। दलित पंजाबी उपन्यासकार अज़ीज सरोए ने *हनेरी रात दे जुगनू* उपन्यास में दलित समुदायों की दयनीय स्थिति तथा दलित बस्तियों के गंदगी भरे वातावरण को प्रस्तुत किया है। हिन्दी के दलित उपन्यासकार विपिन बिहारी ने *हमलावर* उपन्यास में दलित समाज के गंदगी भरे वातावरण तथा उससे मुक्ति के प्रयासों को प्रस्तुत करते हुए परिवर्तन की स्थिति को दर्शाया है। पंजाबी गैर-दलित लेखक रामस्वरूप अणखी ने *सलफास* और हिन्दी लेखक विपिन बिहारी ने *हमलावर* ,*मरोड़* तथा कैलाश चन्द्र ने *भंवर* और *विद्रोह* उपन्यास में दलित समाज में हुए बदलाव और परिवर्तन की स्थिति को प्रस्तुत किया है।

2.5 दलित जातियों में विवाह प्रथा

सामाजिक संगठन या व्यवस्था के एक प्रमुख आधार के रूप में विवाह संस्था का महत्व अत्यधिक है। भारतीय संस्कृति में विवाह जीवन का प्रवेश द्वार माना जाता है। यह एक सामाजिक समझौता है जो स्त्री पुरूष के यौन सम्बन्धों को स्वीकृति प्रदान

करने के लिए किया जाता है। इस प्रकार विवाह दाम्पत्य सूत्र में आबर्द्ध होने की एक प्रथा है। स्त्री पुरूष द्वारा पारिवारिक जीवन जीने के लिए विवाह जरूरी है, विवाह के अनेक सामाजिक उद्देश्य होते हैं। 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित उपन्यासकारों ने दलित जातियों में विवाह सम्बन्धी विभिन्न आयामों को अंतर्जातीय विवाह और अनमेल विवाह के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

अन्तर्जातीय विवाह

किसी जाति विशेष द्वारा अपनी जाति में युवक अथवा युवती से शादी न करके किसी दूसरी जाति में शादी विवाह करने को अंतर्जातीय विवाह कहते हैं। समाज में जातिवाद की समस्या को समाप्त करने के लिए अन्तर्जातीय विवाह पर बल दिया गया है। दलित जातियों की सामाजिक स्थिति को सुधारने के लिए अन्तर्जातीय विवाह को एक विकल्प के रूप में देखा गया है जबकि इसकी वास्तविक सच्चाई कुछ और ही है। दलित जातियों में अंतर्जातीय विवाह सम्बन्धी बाबा साहब अम्बेडकर के विचारों को *हिन्दी दलित साहित्य की दस्तक* पुस्तक में गौतम भाईदास कुँवर ने प्रस्तुत किया हैः

> अन्तर्जातीय विवाह से जाति–व्यवस्था समाप्त हो सकती है, यह डॉ. बाबा साहब का कथन यथोचित है परन्तु अपने फायदे के लिए स्वर्ण लड़कियाँ पढ़े लिखे, उच्च पदस्थ दलित युवकों से अपना सम्बन्ध जोड़कर अन्तर्जातीय विवाह करती हैं लेकिन स्वर्ण युवक सुन्दर दलित युवतियों को अपने दिखाऊ प्रेम जाल में फँसाते हैं। शारीरिक वासना की भूख मिटाते हैं और विवाह न करते हुए उन्हें ठुकरा देते हैं (57)

अर्थात कुछ लोग अन्तर्जातीय विवाह के माध्यम से न केवल दलित जाति के लोगों का गलत फायदा उठाते हैं बल्कि पहले उन्हें अपने प्रेम जाल में फंसाते हैं फिर उनका

शोषण भी करते हैं, परन्तु अंतर्जातीय विवाह का आधार सदैव प्रेम नहीं रहा। कई बार अंतर्जातीय विवाह के कुछ आर्थिक कारण भी होते हैं। आर्थिक कारणों से अंतर्जातीय विवाह की समस्या को गैर-दलित उपन्यासकार वंदनादेव शुक्ल ने *मगहर की सुबह* उपन्यास में दलित स्त्री पात्र मैना तथा स्वर्ण युवक राजो के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> एक ओर सम्बन्धों की मर्यादा और दूसरी तरफ इच्छाओं की विवशता...किसका साथ दे वो? अब मैना उनकी संपति है। जिसे उन्होंने बकायदा पाँच हजार रूपए में खरीदा है। एक हलकी सी लकीर यह भी कौंध गई मन में।(33)

इस प्रकार स्वर्ण जाति के मिश्र निर्धन परिवार की दलित लड़की मैना को पाँच हजार रूपए आर्थिक मदद देने के झांसे में लेकर उसकी शादी अपने मंदबुद्धि बेटे राजो से करवा देते हैं। इसके पीछे उनकी मंशा जातिवाद को समाप्त करने की नहीं बल्कि अपने मंदबुद्धि बेटे राजो की शादी करवाना और अपना स्वार्थ साधना है। दलित लेखक विपिन बिहारी ने *मरोड़* उपन्यास में अंतर्जातीय विवाह की सच्चाई को स्वर्ण युवती अम्बरा और दलित युवक प्रणव के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> मरदे, लड़का भी ठीक-ठाक है। कहीं से नहीं लगता कि वह दलित का लड़का है, आना-जाना था उनका। हम सब भी उनके पास आए गए। घर द्वार एक नंबर का है। इसलिए ही केस-मुकदमा नहीं किए, लेकिन हवा ऐसी बनाई कि हम सब नाराज हैं उनसे और कुछ भी कर सकते हैं लेकिन ऐसा न करना था न किए और बिरादरी वाले भी यह न समझे कि हमारी सहमति से अम्बरा एक दलित के साथ चली गई। छोटी बिरादरी में हमारी बेटियां जाएंगी तब ही तो हमारी पूछ होगी,

> अच्छे खासे घर में हमारी बेटियां जाए तो बुराई ही क्या है? वहां पर भी हमारी बिरादरी शीर्ष पर रहेगी। सिद्धि शर्मा ने गूढ़ता समझाई थी अपने चचेरे भाई को। अम्बरा चली ही गई तो हम क्या कर सकते थे....लेकिन वह गई तो सोच समझ कर ही गई होगी। इसका हमें अफसोस नहीं है। उसका फैसला बिल्कुल सही निकला।(131)

स्वर्ण जाति की युवती अम्बरा के परिवार द्वारा इसलिए दोनों के घर से भागने पर कोई कार्यवाही नहीं की जाती क्योंकि प्रणब दलित जाति से होते हुए भी साधन सम्पन्न और अमीर है। इसलिए अम्बरा के पिता रिद्धि शर्मा इस शादी की विरोधता का दिखावा तो करते हैं, परन्तु समाज के डर से। इस प्रकार आलोच्य उपन्यास में लेखक विपिन बिहारी ने गैर-दलित परिवारों की लड़कियों द्वारा उच्च दलित परिवारों के लड़को के साथ शादी करने की सच्चाई को प्रस्तुत किया है कि ये लोग अपनी जाति की श्रेष्ठता बनाए रखने हेतु भी दलित परिवारों में लड़कियों द्वारा शादी करने को सही मानते हैं और यदि ऐसी शादियों के लिए विरोध किए भी जाते हैं, तो सिर्फ खाना पूर्ति और दिखावे के लिए। *मरोड़* उपन्यास में दलित लेखक विपिन बिहारी ने इस व्कतवय को सिद्धि शर्मा तथा उसकी पत्नी प्रभा देवी के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> मैं तुम्हारी हर बात मानने के लिए तैयार हूँ लेकिन कूद-फांद भी करना जरूरी है। न करू तो लोग यहीं कहेंगें कि जान बूझ कर अपनी बेटी को एक दलित के साथ भगा दिया मैंने। बिरादरी ऐसा न समझे इसलिए ही यह सब करना पड़ रहा है। नहीं तो अम्बरा ने कुछ गलत नहीं किया है। मैं भी मानता हूँ। सिद्धि शर्मा की लाचारगी उजागर हो गई थी (68)

दलित तथा गैर-दलित जातियों में अन्तर्जातीय वैवाहिक सम्बन्धों की सच्चाई को कैलाशचन्द्र चौहान ने *विद्रोह* उपन्यास में गैर-दलित पात्र प्रमोद गुप्ता की बेटी पूजा के माध्यम से इस प्रकार प्रस्तुत किया हैः

> गैर-दलित जो खुद को जाति से ऊँचा मानते हैं। वे दलितों से शादी क्यों नहीं करते? क्योंकि उच्च जाति का होने का घमण्ड यहाँ भी काम करता है। गाँव हो या शहर गैर-दलित हमेशा दलित महिलाओं से यौन संबंध बनाते हैं ...लेकिन लड़कियों के लिए वह छूट नहीं है। वह दलितों के साथ शादी भी नहीं कर सकती।(33)

इस प्रकार उच्च जाति के लोग दलित जातियों की लड़कियों से मौज मस्ती तो कर सकते हैं परन्तु उनके साथ शादी नहीं। जहाँ पर कुछ गैर-दलित जाति के लोग अन्तर्जातीय विवाह के माध्यम से दलित जातियों से किसी प्रकार का फायदा लेना चाहते हैं, वहीं कुछ पढ़े लिखे स्वर्ण जाति के लोग इस सोच से ऊपर ऊठकर अपनी भावनाओं को महत्व देने के लिए भी अन्तर्जातीय विवाह करते हैं। अंतर्जातीय विवाह से जुडी परिवर्तन की स्थिति को *विद्रोह* उपन्यास में कैलाश चन्द्र चौहान ने स्वर्ण पात्र प्रमोद गुप्ता की बेटी पूजा के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> लेकिन समाज के डर से कब तक हम यू ही जीऐंगें...हमारी भी तो अपनी जिंदगी है। पहले लड़कियों को कौन पढ़ाता था, किसी ने तो पहली शुरूआत की होगी। इस शादी के लिए आपको पहली शुरूआत भी नहीं करनी। कितने ही गैर-दलित लड़के लड़कियों ने शादी की है।(37)

इस प्रकार गैर-दलित लेखिका वंदना देव शुक्ल ने *मगहर की सुबह* उपन्यास में अंतर्जातीय विवाह की समस्या को प्रस्तुत किया है। दलित हिन्दी उपन्यासकार

विपिन बिहारी ने *मरोड़* और कैलाश चन्द्र ने *विद्रोह* उपन्यास में जहाँ दलितों और गैर-दलितों के मध्य अन्तर्जातीय विवाह के पीछे की सोड़ी मानसिकता दिखाई है वहीं कैलाश चन्द्र ने *विद्रोह* उपन्यास में उच्च जाति के द्वारा निम्न जाति के पढ़े लिखे बच्चों से अन्तर्जातीय विवाह करके जातिवादी संकीर्णता को समाप्त करके परिवर्तन की स्थिति को प्रस्तुत किया है। इसके विपरीत शिवमूर्ति ने *तर्पण*, रूप सिंह चन्देल ने *दगैल* तथा *कानपुर टू कालपानी* उपन्यासों में लेखक ने इस पक्ष पर लेखनी नहीं चलाई। पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित लेखकों की रचनाओं में भी यह पक्ष अछूता ही रहा है।

अनमेल विवाह

सामाजिक व्यवस्था का एक भयंकर दोष अनमेल विवाह रहा है। जिसके कारण नारी जाति का अत्यधिक शोषण हुआ। स्त्रियों की इच्छा अनिच्छा का कोई मूल्य नहीं है। मूल्य है तो 'अर्थ' का, जिसके चलते कन्याओं को अनमेल विवाह की भेंट चढ़ाया जाता है। निर्धन परिवारों की आर्थिक विवशता ने अनमेल विवाह जैसी समस्या के लिए मार्ग प्रशस्त किया है। *मगहर की सुबह* उपन्यास में वंदनादेव शुक्ल ने निर्धन दलित समाज की युवती मैना के जीवन को आधार बनाते हुए अनमेल विवाह की समस्या से प्रभावित दलित औरतों की स्थिति को प्रस्तुत किया हैः

> अम्मा के पैरों के नीचे से जमीन खिसक गई कुछ देर हक्का बक्का देखती रही मैना को। जो अपराध बोध से सिर झुकाए खड़ी थी....अम्मा की आँखे बहने लगी, बाप का इन्तजार भी न हो सका.....काहे मिनिया के बापू...केतना समझाए कि बिटिया का घर देख आओ खुदही, पर कभी मानी मेरी? समधी से रकम लेय कर्जा तो पटा दिओ...पर मोड़ी का सोचू कुछ.......बापू को समझ में नहीं आ रहा था कुछ, अम्मा ने हुलस-हुलस कर बताई सारी बात, तो वो भी सदमे में आ

> गया।.....उसी वक्त मैना ने आँसुओं को गाँठ लगा ली....नसीब को पल्लू में खोंस लिया। (30)

इस प्रकार आर्थिक तंगी के चलते दलित समाज के अत्यधिक निर्धन परिवार ऋणग्रस्तता से छुटकारा पाने के लिए अपनी बेटियों के मोल के रिश्ते कर देते हैं, जिसमें वे लोग न तो वर का घर देखते हैं और न वर को। जिसके परिणाम स्वरूप इन लोगों में अनमेल विवाह की समस्या देखने को मिलती है। दलित युवती मैना की शादी स्वर्ण जाति के मंदबुद्धि युवक राजो से होने से उसका पूरा जीवन ही खराब हो जाता है।

प्रस्तुत विमर्श के अंतर्गत दलित जातियों में अनमेल विवाह की समस्या को *मगहर की सुबह* उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है। हिन्दी और पंजाबी के अन्य चयनित उपन्यासों में अनमेल विवाह की समस्या को प्रस्तुत नहीं किया गया।

2.6 पीढ़ीगत अंतराल

परिवर्तन प्रकृति का नियम है परन्तु कभी-कभी परिवर्तन पुरानी तथा नयी पीढ़ी के मध्य में संघर्ष एवं तनाव का कारण भी बनते हैं। समय बदलने के साथ-साथ समाज में युवा पीढ़ी के लोगों की मानस्किता में भी परिवर्तन होता है और वह अपने वर्ग के लिए संघर्ष करने के लिए भी आगे आते हैं। 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी के दलित तथा गैर-दलित लेखकों ने अपनी रचनाओं में नवीन तथा पुरानी पीढ़ी के मध्य आए इस वैचारिक अंतराल को बाखूबी प्रस्तुत किया है। गैर-दलित लेखिका वंदनादेव शुक्ल ने *मगहर की सुबह* उपन्यास में पीढ़ीगत अंतराल को युवा दलित मजदूरों द्वारा शोषण के खिलाफ आवाज उठाने के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> दलित युवा कुछ तो शहर चले गए थे और वहां मजदूरी या रिकशा खीचने, सागभाजी का ठेला लगाने, बूट पालिश जैसे काम करने लगे थे

> और जो गाँव में बचे थे वे गाँव के ठाकुर ब्राह्मणों के खेतों में मजदूरी करके अपना जीवन यापन कर रहे थे।(87)

युवा पीढ़ियों की सोच में आई जागरूकता के कारण शोषण से बचाने के लिए दलित समाज की नई पीढ़ी के युवाओं के द्वारा पुरानी पीढ़ी के लोगों को पुस्तैनी काम धंधा छोड़ कर नए कार्य करने के लिए प्रेरित किया जाता है। पंजाब में दलित समाज में शिक्षित युवाओं की सोच मे आए परिवर्तन अर्थात पीढ़ीगत अंतराल को पंजाबी उपन्यासकार निंदर गिल्ल ने *पंडोरी प्रोहितां* उपन्यास में नौजवान सभा के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> प्रगतिशील दे प्रभाव अधीन मसीं हजारां साला दा दलित गैर-दलित जट्ट हरीजनां दा पाड़ा खासकर पिंडा विच्च घटणा शूरू हो गया सी। लोक इक्टठे बैठण लगे सन। खासकर नौजवान सभावा दे बहाने रोटी दी सांझ तकरीबन पै ही गई सी। (89)

वर्तमान समय में ग्रामीण क्षेत्रों में नौजवान सभाओं के आस्तित्व में आने से लोगों की मानस्किता में भी बदलाव आ आया है जो लोग पहले इक्टठे नहीं बैठते थे वह अब एक साथ बैठ कर भोजन करते हैं, ये सब बदली मानस्किता अर्थात पीढ़ीगत अंतराल के कारण ही संभव हो पाया है। जिससे गैर-दलित जातियों में दलित जातियों के प्रति जातिवादी संकीर्णता में भी कमी आई है। दलित लेखक विपिन बिहारी ने *मरोड़* उपन्यास में दलित पात्र प्रणब की माता चिंता देवी के माध्यम से भी वर्तमान युवा पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी के मध्य अंतर को स्पष्ट किया हैः

> आज के बच्चे भी कम खुराफाती नहीं होते। कहाँ हम थे सुविधाहीन और कहां वह, पैदा होते ही दूध की उल्टियां शूरू कर दी। अब हमारी

> और उनकी सोच बुद्धि में तो फर्क पड़ेगा ही। वह आज के समय का हौनहार है ।(152)

दलित पीढ़ी के लोग पहले सुविधा हीन जीवन व्यतीत करते थे परन्तु अब जन्म से ही उनके पास सारी सुविधाएँ होती है। जिसके कारण वह जन्म से ही चुस्त होते हैं। कैलाशचन्द्र चौहान ने *विद्रोह* उपन्यास में जाति को लेकर आए परिवर्तन अर्थात पीढ़ीगत अंतराल को पढ़ लिख कर शिक्षित हुए दलित युवक विक्रम और उसकी पत्नी गैर-दलित युवती प्रियंका के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> इतना पढ़ने के बाद भी तुम नीच जाति के ही रह गये। मैं ऊँच नीच मानती ही नहीं. "जब तुम अपनी बिरादरी वाला काम ही नहीं करते तो तुम कैसे उस जाति के रह गए? प्रियंका समझने की कोशिश करो। यहां जात कर्म से नहीं, कुल से मानी जाती है। मैं ऐसा नहीं मानती, साहित्य पढ़ कर मैंने जान लिया है कि जातिवाद हमारे समाज का दुश्मन है। (79-80)

आलोच्य उपन्यास की गैर-दलित पात्र प्रियंका के अनुसार पढ़लिख कर इन्सान की कोई जाति नहीं रह जाती अर्थात पढ़ने लिखने के बाद वह उच्च श्रेणी में आने का हकदार हो जाता है। प्रियंका का यह व्कतवय वर्तमान समय में शिक्षित पीढ़ियों की सोच में आए परिवर्तन की ओर संकेत करता है।*भंवर* उपन्यास में दलित लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने दलित पात्र सुधाकर, लोकेश तथा पुष्पा के पढ़े लिखे होने से युवा पीढ़ी की सोच में आए वैचारिक अंतराल को प्रस्तुत किया हैः

> वो बात छोड़ो लेकिन सच्चाई यह है कि हम लोग दलित हैं। शादी ब्याह से जीवन भर का रिश्ता जुड़ता है इसलिए इसमें झूठ नहीं चल

> सकता। बात तो आपकी ठीक है। नहीं भी बताते तो भी मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता....जातिवाद इन्सानियत के लिए कलंक है।(94)

पढ़-लिख कर शिक्षित होकर दलित जातियों के लोगों में जातिवाद के प्रति दृष्टिकोण में आए बदलाव को पीढ़ीगत अंतराल के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। पंजाबी दलित उपन्यासकार अज़ीज सरोए ने अपने उपन्यास *हनेरी रात दे जुगनू* में शिक्षित होकर अपने हक्कों के लिए जागृत हुए दलित समाज के युवकों की सोच में आए परिवर्तन अर्थात पीढ़ीगत अंतराल को दलित पात्र पाली और प्रताप के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> नव जागृति कमेटी दा बैनर दूरों ही दिखाई दिन्दा सी। मशाल बाली गई। बाली गई मशाल पाली दे हत्थ विच्च फड़ाई गई। प्रताप सारा करैडिट पाली नू ही देणा चाहुंदा सी। शोषण अतै थुड़ी आर्थिकता दा शिकार होईया पाली दब्बे कुच्ले लोकां दा आगू बण के उभरिया। उस दी मेहनत अतै प्रताप दी अगवाई सदका ही सब इक्टठे होए सन। बैनर नू पूरे इक्टठ च ऊपर चकदा होईया पाली काफले दी आगवाई कर रिहा सी।(139)

प्रस्तुत विमर्श के अंतर्गत पीढ़ीगत अंतराल बिन्दु की तुलना करते हुए क्हा जा सकता है कि दोनों ही भाषाओं के लेखकों ने शिक्षित युवा पीढ़ी के माध्यम से दलित जातियों में आए विकास और परिवर्तन को प्रस्तुत किया है। जिसका वर्णन *मगहर की सुबह, मुक्ति, पंडोरी प्रोहितां, मरोड़, हमलावर, विद्रोह* तथा *हनेरी रात दे जुगनू* उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है जबकि *तर्पण, अन्नदाता*, *सलफास*, *परणेश्वरी*, *शांतिपर्व*, तथा *केही वगै हवा* उपन्यासों में इस विषय पर कोई चर्चा नहीं की।

इस प्रकार निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि दलित विमर्श तुलनात्मक अध्ययन के अंतर्गत चयनित रचनाकारों ने दलित जीवन के सामाजिक पक्ष से जुड़े विभिन्न बिन्दुओं पर अपनी लेखनी चलाई है। दलित समाज में शिक्षा की स्थिति के माध्यम से दलित समाज में व्यापत अशिक्षा और कम शिक्षा की समस्या तथा इसमें आए परिवर्तन को लेखकों ने प्रस्तुत किया है। दलित समाज में नारी की स्थिति तथा उसमें हुए विकास और परिवर्तन को भी लेखकों ने प्रस्तुत किया है। दलित समाज में जातिवाद की समस्या बहुत विकराल रूप धारण कर चुकी है फिर चाहे वह गैर-दलित अथवा दलित जातियों में जातिवाद हो, या फिर दलित जातियों में आपसी जातिवाद की समस्या हो। दोनों ही भाषाओं के लेखकों ने इस तरफ ध्यान दिया है। दलित जातियों के आसपास के गंदगी भरे वातावरण और दलित समाज की उसमें जीवन जीने की विवशता का भी वर्णन प्रस्तुत पक्ष के अंतर्गत किया गया है। सामाजिक आयाम के अंतर्गत दलित जातियों में विवाह से जुड़े पक्ष अंतर्जातीय विवाह तथा अनमेल विवाह से जुड़ी समस्याओं तथा परिवर्तन की स्थिति को पीढ़ीगत अंतराल के माध्यम से दोनों ही भाषाओं के लेखकों ने प्रस्तुत किया है।

अध्याय 3

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्शः एक तुलनात्मक अध्ययनः राजनीतिक आयाम

'राजनीति' समाज का एक महत्वपूर्ण प्रधान अंग है। समाज की प्रगति के लिए उसे शांति पूर्वक चलाने के लिए, निर्बल और सबल को समान अधिकार देने के लिए और कानून व्यवस्था कायम रखने के लिए राजनीतिक व्यवस्था बनाई गई है। समाज में रहते हुए प्रत्येक व्यकित को राजनीति प्रभावित करती है। समाज में रहते हुए मनुष्य जब व्यवस्थागत कार्य करता है तो वह सीधे तौर पर राजनीति से जुड़ जाता है। राज्य व्यवस्था के संचालन के लिए जिन नीति-नियमों का पालन किया जाता है। वह नीति-नियम ही राजनीति कहलाते हैं। राजनीति शब्द का अर्थ अत्यंत व्यापक और विस्तृत है। असल में राजनीति का अर्थ होता है राज्य की वह नीति जिसके अनुसार प्रजा का शासन पालन तथा अन्य लोगों से व्यवहार होता है। राजनीति का प्रभाव प्रत्येक युग में और प्रत्येक क्षेत्र में रहता है। ऐसी स्थिति में साहित्य और राजनीति का असर एक दूसरे पर होने से नहीं रोका जा सकता। साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। इसलिए राजनीति को साहित्य से अलग करके नहीं देखा जा सकता। राजनीति और साहित्यकार के संबंधों को परिभाषित करते हुए कुलवंत सिंह ने डॉ. एस रवीन्द्रनाथ के विचारों को *गुरदयाल सिंह और नागार्जुन के उपन्यास सामाजिक यथार्थ के परिपेक्ष्य में* पुस्तक में प्रस्तुत करते हुए कहा है किः

> राजनीति वर्तमान जीवन के महत्वपूर्ण कारकों में से एक है, अपने आप को जिम्मेदार समझने वाला कोई भी व्यकित राजनीति से अपने आप को अलग करके सोच नहीं सकता क्योंकि जिस समाज में देश में व्यकित पैदा और बड़ा होता है जिस मुल्क में वह अपनी जिंदगी बसर कर रहा है, उस समाज, देश या मुल्क से व्यापक रूप से जुड़े हुए तत्व उससे सम्बन्धित होते हैं। राजनीति किसी देश के वर्तमान व भविष्य के नियामक और निर्णायक तत्वों में से एक है और इसी कारण कोई भी

> संवेदनशील और सृजनशील व्यकित इसको नजर अंदाज नहीं कर सकता। देश की राजनीति को स्थापित करने में परोक्ष ही सही लेखकीय दायित्व काफी महत्वपूर्ण है । (84)

वास्तव में साहित्यकार सामाजिक प्राणी होते हुए राजनीति के प्रभाव से नहीं बच पाता। राजनीति समाज का विशिष्ट पहलू है, जो विभिन्न कोणों से समाज को प्रभावित करता है। वर्तमान जीवन प्रत्येक पग पर राजनीति से प्रभावित है अतः कहा जा सकता है कि राजनीति जीवन के लगभग हर क्षेत्र से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ी रहती है। *नरेश मेहता के काव्य का सांस्कृतिक मूल्यांकन* पुस्तक में राजनीति को परिभाषित करते हुए सुनीता कुमारी लिखती हैं-

> आधुनिक युग में राजनीति सामाजिक चेतना का महत्वपूर्ण अंग है। समाज की विविध कार्य प्रणालियों को संचारू ढंग से चलाने में इसका विशिष्ट योगदान होता है। वह व्यक्तियों पर उन्हीं नियमों, कर्तव्यों और बंधनों को लागू करती है जिससे शासन को व्यवस्थित रूप से संचालित किया जा सके।(15)

अर्थात राजनीति वह शक्ति है जिस पर किसी देश की प्रगति और विकास निर्भर करता है। प्रत्येक समाज में अव्यवस्था पर नियंत्रण पाने, कानून व्यवस्था बनाए रखने, व्यवस्था भंग करने वालों को उचित दंड देने तथा नागरिक के अधिकारों को सुरक्षित करने के लिए जो नियम लागू होते हैं। इसी व्यवस्था का नाम ही राजनीति है।

दलित समाज और राजनीतिः दलित विमर्श के मूल में दलित समाज है। दलित समाज में राजनीति एक विशेष मुद्दा है। राजनीति में दलित समाज को एक बड़े वोट बैंक के रूप में देखा जाता है। इससे ज्यादा दलित समाज की राजनीति में भागीदारी

नहीं है। दलित समाज और राजनीति को परिभाषित करते हुए *दलित राजनीति और नेता* पुस्तक में लेखक एस.एस गौतम लिखते हैं-

> भारत में आबादी के अनुसार दलित वर्ग का काफी बड़ा वर्ग जो कुल आबादी का लगभग 16.6 प्रतीशत से भी ज्यादा है। सदियों से यह वर्ग सभी क्षेत्रों में सर्वाधिक शोषित, उत्पीड़ित और उपेक्षित रहा है और आज भी है। लोकतंत्र और चुनाव ऐसी प्रक्रिया है जो विभिन्न राजनीतिक पार्टियों को देश की राजनीति की वांगडोर सौंपती है और जनता के कल्याण एवं विकास सम्वन्धी नीतियां/कार्यक्रम बनाने तथा लागू करने का अवसर देती है। आज़ादी से अब तक विभिन्न राजनैतिक दल दलित वर्ग को केवल एक वोट बैंक के रूप में प्रयोग करते रहे हैं और उन्होंने दलित वर्ग की मूल समस्याओं को समझने तथा उनके उचित हल्ल ढूढने की आवश्यकता नहीं समझी। वे उसके लिए सरकारी नौकरियों में थोड़ा बहुत आरक्षण एवं आर्थिक उत्थान सम्बन्धी हल्की फुल्की योजनाएँ बनाकर लुभाते रहे, ताकि वह उनके वोट बैंक बने रहे।(10)

दलित जातियों की स्थिति में जो थोड़ा बहुत परिवर्तन हुआ है वह बाबा साहब के प्रयत्नों के कारण ही हुआ है। बाबा साहब के प्रयासों से ही राजनीति के क्षेत्र में दलित जातियों की उपस्थिति को दर्ज किया जाने लगा है। *दलित राजनीति और नेता* पुस्तक में एस.एस गौतम दलित राजनीति के स्वरूप को प्रस्तुत करते हुए कहते हैं--

> आज का दलित समाज जहाँ भी है उसे बाबा साहब की देन समझता है चूंकि बाबा साहब ने जीवन के सभी क्षेत्रों में मील के खम्बे गाड़े है। आज इन्हीं खम्बों के सहारे दलित समाज अपना जीवन संवार रहा है।

> बाबा साहब ने अपनी राजनीतिक गतिविधियों के माध्यम से दलित समाज की राजनीतिक उपस्थिति को प्रस्तुत किया।(19)

अर्थात राजनीति में दलित जातियों की भूमिका बनाने का श्रेय बाबा साहब को जाता है। भारतीय संविधान के प्रारूप सभा के अध्यक्ष की हैसियत से बाबा साहब को अवसर मिला, और वो दलितों के भाग्य परिवर्तन की दिशा में कार्य कर सके। जे.बी.सिन्हां *सामाजिक न्याय एवं दलितोत्थान की योजनाएँ* पुस्तक में दलित जातियों की राजनीति में भागीदारी की स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहते हैं-

> राज्यविधान सभाओं में अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित करने के लिए विधान सभा क्षेत्रों का सीमांकन कर आबादी के अनुसार उसे अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित किया गया है(27-28)

जे. बी. सिन्हां की पुस्तक *सामाजिक न्याय एवं दलितोत्थान की योजनाएँ* के अनुसार

> संविधान के अनुच्छेद 38 में राज्य के नीति निर्देशक तत्वों का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि राज्य, लोक कल्याण की अभिवृद्धि के लिए सामाजिक व्यवस्था बनायेगा तथा असमानता को कम करने के प्रयास करेगा। अतः राज्य द्वारा ऐसी जातियों तथा जनजातियों को अधिसूचित किया गया जिन्हें संरक्षण देने की विशेष आवश्यकता थी। ऐसी जातियों का स्तर ऊँचा उठाने के लिए लोकसभा तथा राज्य सभाओं में उन्हें प्रतिनिधित्व देने एवं शिक्षा के क्षेत्र तथा लोक सेवाओं में उन्हें आरक्षण देने की व्यवस्था की गई। (27)

संविधान के अनुच्छेद 46 में दलित जातियों के लिए निम्न प्रकार व्यवस्था की गई है

> राज्य जनता के दुर्बल वर्गों के विशिष्ट तथा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन जातियों के शिक्षा और धर्म सम्बन्धी हितों की विशेष सावधानी से अभिवृद्धि करेगा और सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से उनकी रक्षा करेगा।(27)

बाबा साहब ने इस दायित्व को बहुत ही अच्छे तथा सुनियोजित ढंग से पूर्ण किया, परन्तु इसके बावजूद भी दलित समाज के हित्त के लिए बनाई गई योजनाओं का लाभ दलित समाज को नहीं मिल पाया।

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में व्यंजित दलित विमर्श के राजनीतिक पक्ष के अंतर्गत दलित जीवन की राजनीति से जुड़े बिन्दु जिनमें अवसरवादी और स्वार्थी राजनीति, जाति आधारित राजनीति, दलित जीवन में व्याप्त दफतरशाही और अफ़सरशाही, प्रशासनिक भ्रष्टाचार से प्रभावित दलित समाज और आरक्षण की व्यवस्था की तुलना करते हुए दलित समाज के राजनीतिक क्षेत्र में हुए विकास और परिवर्तन को तुलना का आधार बनाया गया है।

3.1 अवसरवादी और स्वार्थी राजनीति

राजनीति में औहदे अर्थात पद का विशेष महत्व होता है जो किसी भी नेता/ अधिकारी को देश अथवा समाज की सेवा करने हेतु प्राप्त हुआ है परन्तु वर्तमान समय में धीरे-धीरे यह विचार लुप्त होता जा रहा है और राजनीति अब केवल अवसर की राजनीति मात्र ही बन कर रह गई है। जिससे सबसे ज्यादा प्रभावित दलित समाज है। राजनेता लोग अपने चुनाव क्षेत्र अधीन आते शहर, गाँव या कस्बे में चुनाव के समय आते हैं और लोगों के साथ बड़े-बड़े वायदे करते हैं और वह वायदे चुनाव जीत जाने के बाद पता नहीं क्हां गायब हो जाते हैं। अवसरवादी राजनीति से प्रभावित दलित समाज की स्थिति का वर्णन हिन्दी उपन्यास *मगहर की सुबह* में गैर-दलित

लेखिका वंदनादेव शुक्ल ने दलित पात्र मैना और स्वार्थी नेता की बातचीत के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> ए लड़की रूक ....उसे लगा कोई उसे आवाज दे रहा है। मैना ने पीछे मुड़कर देखा। एक बड़े नेता मंच से सीढ़ियों पर से उतर रहे थे। उनके साथ भीड़ का एक जत्था था....नेता जी ने मिश्री घुले स्वर में संजू के गाल पर थपकी देते हुए क्हा! क्हां रहती है ? “उद्योग नगर में”..मैना ने डरते सहमते हुए उत्तर दिया। अच्छा-अच्छा उसने धन्य हो जाने की मुद्रा में हाथ जोड़ कर प्रणाम किया। देखो! हमारी पार्टी तुम जैसी महिलाओं के लिए नई योजनाएँ कई नई योजनाएँ शूरू कर रही है। घर बैठे ही तुम उद्योग कर सकती हो....। मैना उसकी ओर सहमी सी देख रही थी। कैमरे के लैंस से भीड़, नेताजी मैना और सुबकते हुए संजू की तस्वीरे धड़ाधड़ कैद हो रही थीं जिन्हें कुछ देर बाद दूरदर्शन की स्क्रीन पर चमकना था और कल सुबह अखबार की सुर्खियां बनना था, मैना जैसे लोग यह सब नहीं जानते ...कभी आऐंगे बेटी तुम्हारे नगर में...जानती हो न ठप्पा कहाँ लगाना है ?..नेता जी हाथ जोड़ कर चमचों में घिरे और गायब हो गए....(70)

प्रस्तुत उपन्यास में ग्रामीण दलित कम शिक्षित युवती मैना के साथ एक स्वार्थी नेता के वक्तव्य को प्रस्तुत किया गया है। मैना को देखकर मंत्री साहब उसे रोकते हैं और अपने चुनावी प्रचार के मंतव से उसके सामने अपनी पार्टी के बड़े बड़े वायदे दोहराने लगते हैं जबकि मैना को कुछ भी समझ में नहीं आता, कि क्या हो रहा है परन्तु नेता के इस प्रयास से उन्हें(नेता जी को) मीडिया पर सुर्खीयां बटोरने का मौका जरूर मिल गया। अकसर नेता लोग चुनावों का समय नजदीक आने पर निम्न जाति के लोगों को लुभावने प्रलोभन देने लगते हैं ताकि किसी प्रकार से उनकी वोट को बटोर सके और

अपना स्वार्थ सिद्ध कर सके ऐसे समय में इनका ज्यादा ध्यान दलित बस्तियों की तरफ रहता है। वास्तव में इन्हें गरीब जनता के दुखों से कोई लेना देना नहीं होता बल्कि यह तो अपने लाभ के अवसरों को तलाशते हैं। राजनीति में नेताओं की स्वार्थी प्रवृति को *मगहर की सुबह* उपन्यास में प्रस्तुत किया गया हैः

> चलिए आज ये सौगंध खाए हम। (तालियां) गरीबी की रेखा के नीचे हज़ारो लाखों तड़प रहें हैं। नर्क भोग रहे हैं....हमारी पार्टी उन गरीबों के हाथ बनेगी। काम देगी उन्हें...उनकों भोजन और कपड़ा उपलब्ध करायेगी..उनके बच्चों को शिक्षा और रोजगार देगी...ये हम आपसे वादा करते हैं। आज इस मंच पर खड़े होकर...आप हज़ारों लोग जो इस बखत यहाँ मौजूद हैं, गवाह है हम पर विश्वास के, हम पर भरोसा किये हैं आप लोग....इस भरोसे को भाईओं किसी भी कीमत पर टूटने नहीं देंगे। चाहे हमें इस धरती माता पर अपने प्राण ही क्यू न निछावर करने पड़े–भारत माता की जै...जब-जब देश गुमराह हुआ है उस पर विपति का पहाड़ टूटा है, हमारी पार्टी ने ही उसे उभारा है।....अब इस देश को उन्नति के रास्ते से कोई नहीं भटका सकता।(68)

अवसरवादी राजनीति के चलते राजनेता लोग जनता की भावुकता का फायदा उठाकर उसे राष्ट्र से जोड़ते हुए देश की डूबी नय्या का कर्णाधार बनने का प्रयास करते हैं और भोली-भाली अशिक्षित जनता इनके बहकावे में आ भी जाती है। *तर्पण* उपन्यास में लेखक शिवमूर्ति ने ग्रामीण क्षेत्रों में अवसरवादी राजनीति को दलित नेता 'भाई जी' के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> जुलूस बनाकर, थाना घेरवा लेने के हौंसले के साथ सोचा हुआ हा-हा हूत प्रस्थान जैसा कुछ नहीं हो पाया। इससे भाई जी का मन थोड़ा बुझ

> गया। भीड़ का साथ होने से अंदर जो ताकत पैदा होती है, वह किसी और तरीके से संभव नहीं। (27)

प्रस्तुत उपन्यास में दलित युवती रजपतिया पर धर्मू पंडित के लड़के चंदर द्वारा बलात्कार के प्रयास को भाई जी राजनीति में वोट अर्जित करने के अवसर की दृष्टि से देखतें हैं अर्थात राजनेता चाहे स्वर्ण जाति का हो या दलित उसके लिए जनता का सुख-दुख कोई मायने नहीं रखता। सत्ता हाथ में आते ही ये लोग पहले अपने काम निकलवाते हैं। जनता की विपदाओं और समस्याओं के बारे में न सोचकर अपने स्वार्थ की सिद्धि में जुट जाते हैं। *दगैल* उपन्यास में गैर-दलित लेखक रूप सिंह चन्देल ने शहर में रहने वाली दलित युवती सुनीता जो कि विक्रांत के घर में साफ-सफाई करने का कार्य करती है, सुनीता को नौकरी दिलवाने का लालच देकर उसके साथ बलात्कार करने के पश्चात स्वर्ण युवक विक्रांत इस घृणित कार्य की तुलना देश की अवसरवादी राजनीति से करते हुए कहता है किः

> मैंने सुनीता के साथ बलात्कार नहीं किया जैसा कि यहाँ के नेता पूँजीपति ब्यूरोक्रेटस किसी भी विवश की विवशता का लाभ उठाकर करते हैं और बात उजागर होने पर बलात्कृत पर ही झूठे आरोप लगाकर प्रताड़ित करते हैं।(117)

यहाँ पर जैसी राजा वैसी प्रजा वाली उक्ति सार्थक होती है कि जैसे राजनेता लोग दलित समाज का शोषण करने से नहीं चूकते। उसी क्रम में आज आम जनता भी दलित वर्ग का शोषण करने का अवसर नहीं छोड़ती। चयनित पंजाबी उपन्यासकारों ने पंजाब के राजनेताओं में व्याप्त अवसरवादी प्रवृति का वर्णन पंजाबी उपन्यासों में किया है। पंजाबी नावल *मुक्ति* में एस.एस कालड़ा ने पंजाब के राजनेताओं द्वारा

अपने स्वार्थ को पूरा करने के लिए झुग्गी-झौपड़ियों में रहने वाले दलित तबके(वर्ग) को अपने षड़यंत्र का शिकार बनाते हुए दिखाया हैः

> उसने सुणिआं होइया सी कि सरकारां लोकां दे भलै दे कम्म करन लई बणाईया जांदिआं हन। औह सोच रिहा सी कि खोखे चुक्क के ले जाणा, झुग्गीआं नू ढाह देणा कि इह लोक भलाई दे कम्म हन। झुग्गीआं ढाहुण तो उस नू याद आया कि उसदा गवांढी बुजुर्ग दसदा हुन्दा सी कि अज्ज कल जित्थे वड्डीया दुकानां हन्न। किसे वेले उत्थे साडीआं झुग्गीआं हुन्दीआं सन। मैं उन्नां झुग्गीआं विच्च ही पलिया वड्डा होया सी। उत्थे कोई नेता आऊंदा वोटां दे दिनां विच्च आ के कहिंदा "तुस्सी साडे मां बाप हो सानू वोटां पाऊणां। औह झुग्गीआं वालिया नू खुश करन लई बिजली दे कनेकशन दवा जांदा। अगली वारी कोई पाणी दीआं टूटीआं लगवा जांदा तो कोई नालीयां ते गलीयां पक्कीआं करवा वोटा ले जांदा।(73)

प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने चुनावों के समय नेता लोगों की पोल खोली है कि जनता के मतदान से चयनित होकर सरकार बनाई जाती है, ताकि गरीब जनता की भलाई हो सके परन्तु सरकार बन जाने के बाद स्वार्थी राजनेता गरीब दलित जनता का बे-रहमी से शोषण करते हैं। चुनाव को जीतने के लिए दी गई सुविधाएँ ही दलित जाति के झुग्गी झोंपड़ी वाले लोगों के लिए जी का जंजाल बन जाती हैं। साधारणतः नेता लोग जनता से वोट लेने के लिए उनके हित्त में कुछ न कुछ कार्य करवाने का आश्वासन देते हैं और उन आश्वाशनों को पूरा करते भी हैं परन्तु जब बात उनके स्वयं के हित्त की आती है तो वह सारी बातें भूलकर दलित शोषित जनता का शोषण करने से भी नहीं चूकते अर्थात जो सरकारें लोगों की भलाई के लिए बनाई जाती हैं। वह अपने स्वार्थ को ही पूरा करने में लगी रहती हैं। वर्तमान समय में राजनीति के क्षेत्र में

चल रही आपाधापी के कारण स्वार्थवादी प्रवृति सामने आई है। पंजाबी उपन्यास *पंडोरी प्रोहितां* में निंदर गिल्ल द्वारा राजनीति में व्याप्त अवसरवदिता और स्वार्थप्रियता को प्रस्तुत किया गया हैः

> सत्ता दी भूक्ख रोटी दी भूक्ख वांग अन्नी हुन्दी है। इह न उचित देखदी है ते न अण उचित। इस लई दलित लीडर विक्क गए। उन्नां नू मौके घट लग्गे। इस लई वध्ध विक्क गए। बाकीआं नू वध्ध मौके मिले। इस लई औह मुकाबलतन घट्ट विके, ऊंझ विकिआ केहड़ा नहीं। ...लेखक के शब्दों में होरना दी गल्ल नहीं करदा। होर ता अग्गे वधे ही विक्ण लई ने, जा फिर अपने निजी हित्तां लई मौका प्रस्ती करदे ने। (144)

इस प्रकार ये लोग सरकारी पद का प्रयोग सिर्फ अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए करते हैं न कि जनता के हित्तों के लिए। साधारणतः राजनीति में भागीदारी किए हुए सभी दल वोट बैंक हथिआने के लिए और अपनी पार्टी को ऊँचा उठाने के लिए अन्य पार्टियों के नेताओं की खरीद फरोखत में लगे रहते हैं ताकि उन खरीदे नेताओं से भी अपने हित्तों में कार्य करवा सके। राजनीति में व्याप्त सौदेबाजी और स्वार्थ सिद्धि को हिन्दी उपन्यास *मरोड़* में दलित लेखक विपिन बिहारी ने प्रस्तुत किया हैः

> प्रणब ने एक चालाकी की थी राजनीतिक गलीयारा लगभग सुरक्षित हो ही गया था, लेकिन उसके बाद भी कुछ था। गलियारे से कभी उसे निकाला गया तो क्या होगा? वैभव तिवारी हर वक्त शक्तिमान नहीं बने रहेंगे। राजनीतिक अनिश्चित्ता से हर कोई परिचित है, तब ...प्रणब ने ही क्हा, " मेरी समझ से अपना कोई व्यवसाय भी होना चाहिए। एक अंगीय होकर हम वहां अधिक दिन नहीं रह सकते। भविष्य में

> काम आएगा व्यवसाय ही। प्लाट पर अभी कोई ढ़ाचा जरूरी नहीं है।(119)

इस प्रकार राजनेता लोग राजनीति के साथ-साथ अलग से व्यवसाय भी करते हैं ताकि कभी राजनीति छोड़नी भी पड़े तो उनको किसी प्रकार की हानि न हो, उसी दूरदर्शी सोच को अपनाते हुए उपन्यास का दलित पात्र प्रणब अपनी पत्नी अम्बरां के साथ राजनीति के साथ-साथ व्यवसाय करने की भी जुगत लड़ाता है। राजनीति में स्वयं का स्वार्थ साधना एक रिवाज सा बन गया है। चाहे नेता छोटे स्तर का हो या बड़े स्तर का जनता का शोषण करने से पीछे नहीं हटता। पंजाबी उपन्यास *केही वगै हवा* में अज़ीज सरोए ने राजनेताओं की स्वार्थी प्रवृति का चित्रण किया हैः

> मौजूदा पंचायत ने टीटू नू समर्थन दे दित्ता। हलका विधायक ने वी समूह पंचायत ते दबाअ पाया। दूजा कारण, सरपंच ने मैबरां नाल रल के वड्डे पद्धर ते घपले कीत्ते। पंचायिती जमीन ते छप्पड़ दा ठेका दरखतां दी बोली दा पैसा सारी पंचायत मिल के हजम कर गई। पिंड दीआं गलीयां अजै वी कच्चीआं हन। थोड़ा जेहा मींह पैण ते वी गलीआं विच्च चिक्कड़ हो जांदा है। पंचायत सैक्टरी नाल रल के सरपंच जाअली हाजरीआं ला के नरेगा दी राशि वी हड़प गया। (132)

वर्तमान समय में अपने स्वार्थ को पूरा करने के लिए अवसर तलाशना राजनेताओं का धर्म बन चुका है। पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में स्वार्थी राजनीति का वर्णन दलित लेखक देशराज काली ने उपन्यास *परणेश्वरी* में किया हैः

> नेड़ले पिंडों आऊंदे इस मित्तर दा पिओ सारी उम्र आर.पी.आई नाल रिहा है। ईमानदारी नाल कम्म कीत्ता। दुआबे विच्च उदों आर.पी.आई दी चड़त हुन्दी सी। इहदा पीओ लीडर तां नहीं सी पर सारे लीडर

> इहदी मनदे जरूर सी। फिर होली-होली इह लीडर कांग्रेस कोल बिकणे शुरू हो गए।(78)

शांतिपर्व उपन्यास में दलित लेखक देशराजकाली ने पंजाब की राजनीति को आधार बना कर राजनीतिक हथकंडों की पोल खोलने का प्रयास किया हैः

> पंजाब 'च' कई वार होइया कि राज आपणा धर्म नहीं निभाऊंदा, औह सटेट टैरीरिजम दा इक्क हिस्सा ही है। हुण ता पंजाब विच्च पंचायती चोणां मौके हिंसा होई, इह स्टेट टैरीरिजम द एक हिस्सा ही है।(28)

राजनेता लोग अपने स्वार्थ की पूर्ति करने के लिए जनता के साथ हिंसात्मक कारवाई करवाने से भी नहीं चूकते। इस प्रकार बात चाहे पंजाब की हो या फिर भारत के किसी भी अन्य शहरी या ग्रामीण क्षेत्र की, सर्वत्र राजनीति में राजनेताओं का उद्देश्य स्वयं का हित्त साधना बन चुका है फिर चाहे राजनेता गैर-दलित जाति से हो या फिर दलित जाति से परन्तु वर्तमान समय में राजनेताओं की जनता के प्रति सोच में आए परिवर्तन को पंजाबी लेखक अज़ीज सरोए ने उपन्यास *केही वगै हवा* में प्रस्तुत किया हैः

> नोटीफिकेशन जारी हुन्दिआं ही पिंड 'च' चोण दंगल भख गया। सांझी थां ते सारे पिंड द इक्टठ वी होईया। जसवंत दी धिर ने बथेरे यतन कित्ते सर्व संमती हो जावे। भाईचारा वी बणिआ रहेगा तो कोई चंगा व्यकित चुण के पिंड दा विकास वी हो जावेगा....(130)

स्वार्थ सिद्धि के इस दौर में भी समाज के कुछ लोग दलित जनता के विकास के बारे में सोचते हैं और दलित समाज के विकास के लिए अच्छे और मेहनती लोगों को आगे आने के लिए प्रेरित भी करते हैं।

इस प्रकार हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित उपन्यासकारों ने शहरों तथा ग्रामीण क्षेत्रों में राजनीति के दलित वर्ग पर पड़ने वाले प्रभावों और सरोकारों को प्रस्तुत किया है। दोनों भाषाओं की रचनाओं में दलित विमर्श के अंतर्गत राजनीति में अवसरवादी प्रवृति की तुलना करते हुए कहा जा सकता है कि नेता चाहे जिस भी जाति विशेष का हो वह गरीब दलित जनता का शोषण कर अपने स्वार्थ की पूर्ति करना अपना हक्क समझता है। वर्तमान समय में राजनीति में भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद, स्वार्थ सिद्धि और अवसरवादिता देखने को मिलती है। राजनीति में व्याप्त अवसरवादी और स्वार्थी प्रवृति तथा उससे प्रभावित दलित समाज की स्थिति को गैर-दलित उपन्यासकार वंदना देव शुक्ल ने *मगहर की सुबह*, शिवमूर्ति ने *तर्पण* रूप सिंह चन्देल ने *दगैल* उपन्यास में प्रस्तुत किया है। पंजाबी के गैर-दलित लेखकों में एस.एस.कालड़ा ने *मुक्ति* तथा निंदर गिल्ल ने *पंडोरी प्रोहितां* उपन्यास में प्रस्तुत की है। हिन्दी तथा पंजाबी के दलित लेखकों ने भी राजनीति से जुड़े इस पक्ष को अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किया है। हिन्दी के दलित उपन्यासकार विपिन बिहारी ने मरोड़, पंजाबी दलित उपन्यासकार अज़ीज सरोए ने केही वगै हवा, तथा देशराजकाली ने परणेश्वरी तथा शांतिपर्व उपन्यास में राजनीति में अवसरवादी प्रवृति तथा उससे प्रभावित दलित समाज की स्थिति को प्रस्तुत किया है। राजनीति में परिवर्तन की स्थिति को पंजाबी उपन्यास *केही वगै हवा* में दलित लेखक अज़ीज सरोए ने प्रस्तुत किया है। लेखक ने राजनीति से जुड़े साकारात्मक पक्ष को प्रस्तुत करते हुए दिखाया है कि पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में स्वर्ण जाति के राजनीति से जुड़े लोग गाँव के विकास हेतु सर्व सम्मति से ईमानदार उम्मीदार का चुनाव करने का मत्त देते हैं, ताकि समाज का विकास हो सके।

3.2 जाति आधारित राजनीति

भारत में राजनीति प्रत्येक व्यकित के इर्द-गिर्द घूमती है अगर किसी राजनीतिक नेता को राजनीति की दुनियाँ में कोई प्रभावशाली पद ग्रहण करना है तो उस के लिए अपनी जाति का समर्थन पाना अति आवश्यक है। इस मंतव की पूर्ति हेतु जाति सभाएँ आस्तित्व में आ चुकी हैं। रूडोलफ की जाति सम्बन्धी परिभाषा को *जरनल समाज विज्ञान* पुस्तक में सविंद्ररजीत कौर ने प्रस्तुत किया हैः

> जाति सभावां हुण भारत दी राजनीतिक प्रक्रिया विच्च अहम भूमिका निभा रहीआं हन। विशेष करके विधान सभा और जिला समितीआं दे चुनाव विच्च सरकार द्वारा संचालित संस्थावां दे पदां दे बटवारे विच्च चुनाव दे समय लोग जातिवाद दा लाभ लेंदे हन अतै जाति दे नाम ते वोट मंगदे हन ।(32-33)

निःसंदेह जाति प्रथा एक सामाजिक कुरीति है। ये विडम्बना ही है कि देश को आज़ाद हुए सात दशक से भी अधिक समय बीत जाने के बाद भी हम जाति प्रथा के चुंगल से मुक्त नहीं हो पाएं हैं हालांकि एक लोकतांत्रिक देश के नाते संविधान के अनुछेद 15 में राज्य के द्वारा धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान के आधार पर नागरिकों के प्रति जीवन के किसी क्षेत्र में भेदभाव नहीं किए जाने की बात कही गई है लेकिन विरोधाभास है कि आज राजनीति में जातिवाद ने अपनी जड़े जमा ली है। उपन्यासकारों ने राजनीति में जातिवाद को अहम मुद्दा मानते हुए दर्शाया है कि किस प्रकार राजनीतिक पार्टिया जनता की भलाई के लिए जातिवाद के खिलाफ होती हैं जो कि एक ढकोसला ही है, परन्तु जरूरत पड़ने पर वह पार्टिया ही जातिवाद को मतदान के लिए विशेष महत्व देती हैं। मतदान की इस प्रक्रिया के माध्यम से एक

मतदाता अपने मत्त से अपने देश और राष्ट्र के लिए नीति निर्धारकों का चयन करता है।

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी के चयनित उपन्यासकारों ने आलोच्य उपन्यासों में जाति आधारित राजनीति की समस्या को प्रस्तुत किया है। हिन्दी उपन्यास *मगहर की सुबह* में गैर-दलित लेखिका वंदनादेव शुक्ल ने भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में होने वाले चुनावों का वर्णन किया है कि चुनाव चाहे सरपंची के लिए हो या संसद के लिए, जाति को आधार बनाकर दलित समाज को हमेशा ही एक बड़े वोट बैंक के रूप में देखा जाता हैः

> चुनाव में कोई नहीं कह सकता कि ऊंट किस करवट बैठेगा। जगवीर अपने काका भवानी सिंह का प्रसार कर रहा था। बाह्मणों, ठाकुरों के वोट लगभग सुनिश्चित थे। गणित दलितों के वोट पर टिका था।(103)

अलग-अलग जातियों को चुनावों में अपनी तरफ आकर्षित करने के लिए राजनेता लोग उन्हें विभिन्न प्रकार के प्रलोभन देते हैं और जाति के आधार पर भावुकता का सहारा लेकर भी मत्त अपने हित्त में भुगतान कराने के प्रयास करते हैं। जाति अथवा धर्म के नाम पर मत्त लेकर राजनेता लोग स्वयं के हित्तों की पूर्ति में संग्लन हो जाते हैं। वर्तमान समय में राजनीति में व्याप्त जातिवाद की समस्या को *मगहर की सुबह* उपन्यास में वंदनादेव शुक्ल ने प्रस्तुत किया हैः

> राजनीतिक परिवर्तन का दौर था। नव उदारवादी संस्कृति और सोच, समाज में शनैः-शनैः अपने पैर पसार रही थी। जिसका पहला संकेत सत्ता में परिवर्तन था। जाति समीकरण देश भर में तेजी से बदल रहे थे। सत्तारूढ़ पार्टियां और गठवंधन सुलगने लगी थीं....पिछड़ी जातियों के आरक्षण की सीटे बढ़ाने, बेरोजगारी व गरीबी भत्ता

> दिलवाने, सस्ते बीज और धान मुहैया कराने के इलावा और भी नित्त नई कई दलीय घोषणाएँ और उधर अगड़ों का विरोध-पिछ्ड़ी जातियों की स्थिति अजीबो गरीब हो गई थी....(83)

राजनेता लोग राजनीति में जाति को आधार मानकर चलते हैं फिर चाहे नेता दलित जाति के हो या फिर गैर-दलित जाति से। यही नहीं दलितों पर आने वाले प्रत्येक कष्ट को ये लोग एक अवसर के रूप में देखते हैं जिसमें राजनेता जाति/बिरादरी को अहम मुद्दा बनाते हैं। *तर्पण* उपन्यास में गैर-दलित लेखक शिवमूर्ति ने जातिवाद पर आधरित राजनीतिक समस्या को दलित नेता भाई जी के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

> भाई जी का सीना दिनोंदिन चौड़ा होता जा रहा था। बिरादरी में चारों तरफ नाम हो रहा है। कहाँ- कहाँ से लोग मिलने आ रहे हैं। वे चाहते है कि पन्द्रह-बीस गाँव की बिरादरी की एक भीड़ सभा हो जाए। अगले चुनाव में बिरादरी की पार्टी से 'एमेले' का टिकट मिल गया तो मेहनत रंग लाएगी।(111)

जो एजंडा लेकर पार्टी चली थी जाति-पाति समाप्ति का वही मसला ही अब पार्टी का आधार बन गया और वोटों को पाने का साधन भी। इसी को आधार बना कर राजनेता लोग चुनावों में जाति के आधार पर न केवल मतदान करवाते हैं बल्कि जीत कर राजनीति में प्रवेश भी करते हैं और फिर दलित जनता के हितों के साथ खेलते हैं। वर्तमान राजनीति में जनता की जातीय भावना को उक्सा कर उन से जाति के नाम पर वोट लिए जाते हैं। विपिन बिहारी के *मरोड़* उपन्यास में गैर-दलित युवती अम्बरा दलित युवक प्रणव से शादी करने के उपरांत राजनीति में इसी अवसर की प्राप्ति हेतु प्रवेश करती है। इस प्रकार लेखक ने अंतर्जातीय विवाह करके गैर-दलित जातियों द्वारा जाति के नाम पर राजनीति करने की समस्या को प्रस्तुत किया हैः

> टिकट का इंतजाम मैं कर दूँगा। उससे कहो, अपना कहीं सुरक्षित क्षेत्र चुने और अपना काम शुरू कर दे। टिकट निश्चित रूप से दिला दूँगां। मेरा तो इरादा है कि आने वाले समय में तुम ही कहीं से चुनाव लड़ जाओ। तुम्हें वोटर महत्व देंगे। तुमने एक दलित से विवाह किया है इसका तुम्हें भरपूर लाभ मिलना चाहिए...।(115)

पंजाबी उपन्यास *केही वगै हवा* में दलित लेखक अज़ीज सरोए ने पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में राजनीति में व्यापत जातिवाद की समस्या को प्रस्तुत किया हैः

> शाम नू हाकम दे घर बैठे समर्थक वोटर सूचीआं लै के, वोटां दा जोड़-तोड़ लाऊण लग्गे। गुप्त राजनीति घड़ी जा रही सी। हाक्म जसवंत तो पूछण लग्गा,"प्रेमीआं दी की संभावना ए" "प्रेमीआं (दलितां) दीआं वोटां ता आपां नू पैणगीआं, जगने होरां दी आपा बथेरी मदाद कीती है। औह नू जा के मिलदे आं(133)

राजनेता लोग दलित जातियों की थोड़ी बहुत मदद करने के बदले, ये लोग उनके मत्त पर काबिज होने में देरी नहीं करते। राजनेता लोग चुनाव के समय जनता को तरह-तरह के प्रलोभन देते हैं ताकि मत्त का भुगतान उनके हक्क में हो सके। चुनाव को जीतने के लिए यह लोग हर प्रकार के हथकंडे अपनाते हैं। चुनाव के समय की इस स्थिति को पंजाबी उपन्यास *केही वगै हवा* में लेखक अज़ीज सरोए ने प्रस्तुत किया हैः

> गल्ला द इह सिलसिला चलदा ही रहिंदा। हुण तां वोटां 'च' पंज दिन ही बचे सी। पिंड 'च' डरम्मा दे डरम्म शराब लग्ग गई। हाक्म गिल्ल ने आपणे समर्थकां दे कहण ते ठंडिया द भरिआ छोटा हाथी वंड दित्ता। टीटू दे घर हर रोज पंद्ररा वीह डब्बे शराब दी लागत है। तस्सली

> वोटरां दी अजै वी नहीं। वोटर दोवे पासे ही पैर पसारी बैठे हन्न। अज्ज दी घड़ी किसे वी धिर दी जित्त नज़र नहीं आ रही। उम्मीदवार वोटरां कोल घर-घर जा के वोटां वी मंगण लग्ग पए। हर कोई आपों आपणीआं वोटां पक्किआं करन ते लग्गा पीआ सी....(134)

वर्तमान समय में दलित जाति के नेता भी स्वयं दलित जातियों के लोगों का शोषण करने में पीछे नहीं हैं। पंजाबी गैर-दलित लेखक निंदरगिल्ल ने *पंडोरी प्रोहितां* उपन्यास में राजनीति से जुड़े दलित नेताओं के सत्य को प्रस्तुत किया हैः

> काग्रेंस ने अजीहे दलित लीडर उभारे, जिन्नां ने दलितां तो वद्ध पूँजीवाद जागीरदारी दी सेवा कीत्ती। इन्नां दलित नेतावां ने उन्नां सब योजनावां दी हमायत कीत्ती, जिहड़ीयां पूँजीवाद जागीरदारी दीआं सेवावां करदीआ सन, ते दलिता दा दमन..।(145)

अर्थात यदि कोई एक आध प्रतिशत दलित जाति के नेता किसी क्षेत्र से निर्वाचित होकर आगे आते भी हैं तो वह दलित विरोधी नीतियों का ही समर्थन करते हैं। इन सब का कारण दलित जातियों में जागरूकता की कमी है। वर्तमान समय में जातियता का राजनीति पर बहुत प्रभाव है। अपना वोट बैंक बचाने की खातिर कुछ राजनीतिक पार्टिया दलित जनता के हित्तों के लिए भी कार्य करती हैं क्योंकि वर्तमान समय में दलित जातियों में राजनीतिक चेतना जागृत हो चुकी है। पंजाबी उपन्यास *पंडोरी प्रोहितां* में निंदर गिल्ल ने पंजाब के दलित ग्रामीण समाज की स्थिति में हो रहे परिवर्तन को प्रस्तुत किया हैः

> इस खतरे नू टालण लई उन्नां दलित भलाई दीआं योजनावां शुरू कीतीआं क्योंकि दलित बदलाव चाहुँदा सी। इस लई औह काग्रेंस नाल जुड़ गया पर दलितां दीआ उम्मीदां ते काग्रेंस दे पूरा न उतरन कारण

> उसदे बदल वज्जों रिपब्लिकन पार्टी होंद विच्च आई। रिपब्लिकन पार्टी ने दलितां दी जमीन दी समस्यां उठाई ते देश दी खाली पई जमीन ते उन्नां दा हक्क जताया। इस आंदोलन कारण सरकार नू लक्खां ऐकड़ जमीन दलितां नू देणी पई।(144)

दलित जातियों में चेतना आने से ये लोग अपने विकास पथ पर धीरे-धीरे अग्रसर हो रहे हैं। अब दलित राजनीति की कमांड शनैः शनैः शिक्षित नौजवानों के हाथों में आने से परिवर्तन की स्थिति को गैर-दलित पंजाबी लेखक रामस्वरूप अणखी ने *सलफास* उपन्यास में प्रस्तुत किया हैः

> हुण जदों पंचायत चोणा होईआं तां पहिला पिंड दे सारे नौजवान मुण्डिया ने इक्टठ कीत्ता। इक्टठ विच्च सिआणे बंदे वी सद्दे गए। औह सारे बंदे इक्टठ 'च' शामिल होए। जिहड़े बंदे पंचायत मैंबर रहे सन। सारे इक्टठ ने इही फैसला कीत्ता कि सरपंच नवचेतन नू सरब संमती नाल सरपंच बणा लिया जावे। पंचायत मैंबरा लई वोटा पाईआं जाण। जदो वोटा पईआं ता अद्ध तो वद्ध पंचायत मैंबर नौजवान सभा वाले मुण्डे ही चुणे गए। बाकी जिहड़े चुणे गए औह उम्र विच्च चाहे वड्डे सन पर औह नौजवानां दे समर्थक सन।(401)

वर्तमान समय में दलित जातियों में शिक्षा के प्रभाव से राजनीति में परिवर्तन की स्थिति का वर्णन विपिन बिहारी के *हमलावर* उपन्यास में दलित टोले के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> झंडे का गाड़ना गांव में चर्चा का विषय बन गया था। दलितों के बीच इसकी गर्माहट कम थी लेकिन अगड़ों के बीच खासा गर्माहट थी यानी की गांव भी राजनीति का अखाड़ा बनेगा अब। लोगों में राजनीतिक

> चेतना जाग्रत हो रही है, जिस पर कभी सिर्फ अगड़ों की ही दबावट हुआ करती थी...अब मिथक टूटने वाला है, परम्पराएं धवस्त होंगी। झंडे के नीचे आने लगे थे थोक में। खरक समझाता....यह गरीबों-वंचितों की पार्टी है। समझो किसी का एकाधिकार तोड़ा गया है। कई किस्से हैं दलित टोले से जुड़े हुए। वोट के समय आते थे अगड़ा टोले में । नरिया कर पूछते थे,“किसे वोट दोगें?” जिसे कहिए आप लोग।(49)

साधारणतःजातिवाद के नाम पर लोगों को भावुक करके दलित तथा गैर-दलित जाति के लोग पहले उनसे अपने हित्त में मतदान करवाते हैं और फिर चयनित हो जाने पर उन्हीं के ऊपर राज करते हैं। राजनीति की इस सच्चाई को पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में देखा जा सकता है। पंजाबी उपन्यास *पंडोरी प्रोहितां* में निंदर गिल्ल ने राजनीति के इसी सत्य से प्रर्दा उठाया हैः

> भाव दलितां नू वरतै जाण दी थां ते उन्नां नू विकास विच्च इक्क हिस्सेदार दे तौर ते देखिया जाण लग्गा। दलित किसे वी बुर्जुआ पार्टी दा विंग न हो के बराबर शरीक हो गया। उन्नां सोचिया कि हुण तक्क सब सरकारां उन्नां दीआं वोटां दे सिर ते, जित्त के उन्नां ते ही राज करदीआं हन।(145)

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श तुलनात्मक अध्ययन के राजनीतिक पक्ष के अंतर्गत जाति आधारित राजनीति बिन्दु की तुलना करते हुए कहा जा सकता है कि दोनों ही भाषाओं के दलित तथा गैर-दलित उपन्यासकारों ने वर्तमान समय में दलित समाज में राजनीति में जातिवाद की समस्या को प्रस्तुत किया है। हिन्दी गैर-दलित लेखिका वंदना देव शुक्ल ने उपन्यास *मगहर की सुबह*, शिवमूर्ति ने *तर्पण* में, पंजाबी लेखक निंदर गिल्ल ने *पंडोरी प्रोहितां* में, रामस्वरुप

अणखी ने *सलफास*, विपिन बिहारी ने *हमलावर* में, और अज़ीज सरोए ने *हनेरी रात दे जूगनू* और *केही वगै हवा* में प्रस्तुत किया है। राजनीति में जातीवाद से जुड़े इस पक्ष में हुए परिवर्तन की स्थिति को पंजाबी गैर-दलित उपन्यासकार निंदर गिल्ल ने *पंडोरी प्रोहितां* उपन्यास में तथा राम स्वरूप अणखी ने *सलफास* उपन्यास में और दलित लेखक विपिन बिहारी ने *हमलावर* उपन्यास में प्रस्तुत किया है

3.3 दफतरशाही और अफ़सरशाही

समसामयिक महत्व और प्रभाव के कारण जीवन के हर क्षेत्र में राजनीति व्यापत हो गयी है। राजनीति की इस व्यापति को मानव जीवन और समाज में अनेक रूपों में देखा जा सकता है। राजनीतिक आंदोलनों और संघर्षों ने जन मानस को आंदोलित किया। पराधीनता की श्रृंखला को तोड़ देने के लिए जनमानस का प्रयत्न राजनीतिक सम्बन्धों का ही परिणाम है परन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात राजनीतिज्ञों की विविध स्वार्थी प्रवृतियां सामने आयी। जिसके चलते सदा के लिए आपाधापी ने राजनीतिक भ्रष्टाचार को जन्म दिया। वर्तमान समय में भ्रष्टाचार जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी जड़े जमाए बैठा है जो कि उच्च स्तर से शूरू होकर समूचे तंत्र को अपनी जकड़ में ले लेता है। आज देश की पूरी सत्ता नौकरशाहों के हाथ में आ गई है जो कि दिन दिहाड़े आम जनता को लूटने का कार्य कर रहे हैं। अधिकारियों की इस धन लोलुप प्रवृति ने रिश्वतखोरी अर्थात भ्रष्टाचार की प्रवृति को जन्म दिया है। जिस से समाज का प्रत्येक वर्ग प्रभावित है। उच्च वर्गीय पैसे वाले लोग अपने उचित-अनुचित कार्य निकलवाने के लिए अधिकारियों को पैसे अर्थात रिश्वत, भेंट अथवा उपहार स्वरूप देते हैं। आज यह विकृति प्रशासन में इस कदर व्याप्त हो चुकी है कि चाहे कोई धनी हो या गरीब उनकों सरकारी कार्यालयों में अपने काम करवाने के लिए रिश्वत देनी पड़ती है। 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में प्रशासनिक क्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा उसके प्रभावित दलित समाज के जीवन के

प्रत्येक क्षेत्र में पड़ने वाले प्रभावों को गैर-दलित और दलित उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में प्रस्तुत किया है। पंजाबी उपन्यास *मुक्ति* में लेखक एस.एस कालड़ा ने पंजाब में रिश्वतखोरी की समस्या तथा इससे प्रभावित निम्न वर्ग की दयनीय स्थिति का चित्रण दलित पात्र बल्लू के माध्यम से किया हैः

> बल्लू नू अज्ज उसदा अवजाना भुगतना पै रिहा सी सरकारी आदमी पुलिस नाल लै, टरालीआं, जे.सी.बी. मशीन लै आ गए। सड़क तो चुक्क के खोखे टरालीआं विच्च सुट्टण लग्गे। बल्लू तो जो खोखे विच्चों निकल सकिआं कढ़ लिया। जे.सी.बी. ने उसदा खोखा चुक्क टराली विच्च सुट्ट लिया। औह विचारा मसौसिआं होईया देखदा ही रह गया ....। अग्गे कईया ने मिल मिला के खोखिआं दी थां ते पक्कीआं दुकाना पा लईया सन। हुण औह कोर्ट विच्चों सटेअ ले आए। सरकारी थां वेहली करवाऊण दी मुहिम उत्थे आ के रूक गई।....बल्लू नू जदों पता लग्गा कि दुकानां वाले सटेअ ले आए हन्न। तां औह सोचण लग्गा कि इह सटेअ की ए ते कित्थों मिलदा ए....कहिंदे इह ता नोटां दीआ थईया नाल मिलदा ए। अपणे कोल इन्ने पैसे कित्थे(72)

प्रस्तुत उपन्यास का दलित पात्र बल्लू अपना जीवन निर्वाह करने के लिए झुग्गी-झोपड़ियों के पास चाय का खोखा लगाता है लेकिन नगरपालिका प्रशासन द्वारा उसे अवैध बताकर उसका खोखा उठा लिया जाता है। समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार की सबसे ज्यादा मार दलित समाज के ऊपर ही पड़ती है। अशिक्षा तथा अज्ञानता के कारण ये लोग कोर्ट कचहरी में जाने से भी घबराते हैं। वर्तमान समय में जीवन में विभिन्न प्रकार की समस्याओं को झेल रहे इस समाज का पग-पग पर शोषण होता है, बस शोषण का तरीका ही अलग होता है। *भंवर* उपन्यास में कैलाशचन्द्र चौहान ने दलित समाज के अफसरों और अधिकारियों को भी भ्रष्टाचार से लिप्त दिखाया हैः

> कुँवरपाल अपनी बीट का काम निबटाकर हाजरी दरोगा को बोलकर तनख्वाह बनाने वाले कलर्क के पास पहुँच गया। कलर्क जोगेन्द्र अपनी फायलों में उलझा हुआ था। कहने को जोगेन्द्र सफाई कर्मचारी की पोस्ट पर था, लेकिन आफिस में बैठकर करता कलर्की। इस पद के सहारे वह जो सरकारी काम करता उसमें मोटी कमाई थी। रोज कोई न कोई मुर्गा बन उसके पास कटने के लिए आ ही जाता। जोगेन्द्र खुद भी खाता और अफसरों को भी खुश रखता।(73)

प्रशासन में भ्रष्टाचार उच्च स्तर से शूरू होकर समूचे तंत्र को अपनी जकड़ में ले लेता है। आज देश की पूरी सत्ता नौकरशाही के हाथ में आ गई है। इसी कारण नौकरशाह मनमानी करने लगे हैं। वे दिन दिहाड़े जनता का शोषण कर रहे हैं। भ्रष्टाचार के कारण दलित समाज के अशिक्षित लोगों का पढ़े लिखे दलित समाज के अफसर लोग भी हर प्रकार से शोषण करते हैं। अशिक्षित सफ़ाई कर्मियों को अपनी मेहनत के पैसों अर्थात फंड इत्यादि निकलवाने के लिए दलित अफसरों को भी रिश्वत देनी पड़ती है। राजनेता और नौकरशाह इक्टठे होकर कर जनता का खून चूसते हैं। *मगहर की सुबह* उपन्यास में वंदनादेव शुक्ल ने प्रशासनिक भ्रष्टाचार के कारण खेतों में काम करने वालों मजदूरों को इस भ्रष्ट व्यवस्था का शिकार होते दिखाया हैः

> उधर देश में खेतीहार हाथ कम और खाने वाले मुँह ज्यादा होने लगे हैं। लोभ अन्याय बेईमानी का वर्चस्व होने लगा। पढ़े लिखे चतुर बढ़ रहे थे और सीधे-सादे मेहनती किसान ठगा हुआ सा महसूस करने लगे थे। लिहाजा खेती किसानी में उचित मूल्य निर्धारण न होने या थोक खरीद व्यापारी द्वारा उचित मूल्य न मिल पाने का मलाल और मौसम की विपदा...।(13)

साधारणतः सरकार द्वारा गरीब दलितों को कई प्रकार के सरकारी अनुदान दिए जाते हैं परन्तु इनकी वास्तविकता यह है कि भ्रष्टाचार के चलते यह सब सुविधाएँ कागजों तक ही सीमित रह जाती हैं और इन लोगों को सरकारी सहायता का उचित लाभ नहीं मिल पाता अर्थात अशिक्षा के कारण सरकार द्वारा दी जा रही सहूलतों का दलित समाज के ज्यादातर लोग उचित लाभ नहीं ले पाते। भारतीय ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली की समस्या से जूझते दलित समुदाय की स्थिति को विपिन बिहारी ने हमलावर उपन्यास में ग्रामीण लोगों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> गाँव में बिजली आई हुई थी लेकिन सात साल पहले जो गई सो गई, जो अब तक गई हुई है। बिजली के तार चोर काट ले गए। उसकी जगह नंगे पोल खड़े हुए थे। अपने आस्तित्व का एहसास करवाते हुए। ट्रांसफॉर्मर धूप पानी में जंगा रहा था..कोई मां बाप नहीं। बिजली के लिए क्या नहीं किया गया। धरना प्रर्दशन, जन प्रतिनिधियों को ज्ञापन बिजली अधिकारियों का कहना था....जब ऊपर से बिजली ही नहीं आती तो क्हाँ से दी जाए। (50)

वर्तमान समय में भ्रष्टाचार के प्रभाव से कोई भी क्षेत्र नहीं बच पाया है। पहले यह सिर्फ दफतरों और अफसरों तक ही सीमित था लेकिन अब गाँव हो या शहर प्रत्येक छोटी बड़ी संस्थाओं में भ्रष्टाचार व्याप्त हो चुका है। आज प्रत्येक संस्था चाहे वह बड़ी हो या छोटी सब जम कर भ्रष्ट व्यवस्था का लाभ लेने में लगे हैं। प्रस्तुत उपन्यास *हमलावर* में विपिन बिहारी ने भ्रष्टाचार से लिप्त प्रशासन व्यवस्था का वर्णन दलित पात्र मदन और भजन के माध्यम से किया हैः

> खूब लूटो मदन...प्रत्येक लूट में भागीदार बनों, सीधे पंचायत को जे.आर.वाई दी गई है लूटने के लिए ही। इससे कोई कल्याण नहीं होने

> वाला। जो भ्रष्टाचार सिर्फ सरकारी दफतरों, मुलाजिमों तक सीमित था, अब गाँव में भी फैलने लगा है। पंचायत की मार्फत। ऐसा लगता है कि भ्रष्ट लोगों की एक जमात खड़ा करने के लिए ही जे.आर.वाई की अवधारणा रखी गई है। मुखिया को प्रसेंटेज चाहिए, औवरसियर, बी.डी.ओ को चाहिए ठेकेदार को चाहिए। यहां तक पता चला है कि बी.डी.ओ. की मार्फत जिला स्तर के अधिकारियों को भी पैसे जाते हैं। और एम.पी. विधायक के तो क्या कहने। (145)

पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में सरकारी अफसरों की स्वार्थी नीतियों को पोल पंजाबी लेखकों ने खोली है कि किस प्रकार ये अफसर लोग अपने फायदे के लिए सदैव अवसर ढूंढते रहते हैं और मौका मिलने पर दलित अशिक्षित जनता का शोषण करने को भी तैयार रहते हैं। पंजाबी उपन्यास *हनेरी रात दे जुगनू* में दलित लेखक अज़ीज सरोए ने पंजाब में फैले प्रशासनिक भ्रष्टाचार को शिक्षा कर्मियों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> बई इह ता धक्का होइया, पहला तां वोटां वूटां 'च' डयूटी लग जांदी सी। चंगा मीट शराब मिल जांदा सी। वधीआं बक्करे बलाऊदें सी। आह पिछली वार जदों आपा पिंड दी मरदम शुमारी कीती सी तां वेख, पिंड दे लोक किवे दूद्ध नाल खोए दीआं पिनिआं खवाऊंदे सी।....हुण केहड़ा पहाड़ डिग्ग पऊ। इह डी.टी.ओ सारे आपणे ने। वोटां वेले आपणे एम.एल.ए दी सपोट कित्ती ता फेर फायदा हो गया। हुण तां सरकार वी आपणी ए।(38)

पंजाब के बाहर भारत के अन्य शहरी दलित समाज में रिश्वतखोरी के नाम पर होने वाले शोषण को हिन्दी के लेखकों ने प्रस्तुत किया है कि जहाँ एक तरफ दलित समाज

को रिश्वतखोरी जैसी समस्याओं से दो चार होना पड़ता है वहीं शिक्षित दलित समाज भी इस भ्रष्टाचार में अपनी अहम भूमिका अदा कर रहा है। हिन्दी उपन्यास *विद्रोह* में दलित लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने दलित अधिकारियों को भी भ्रष्टाचार में लिप्त दिखाया गया है:

> पन्ना राम गौतम की जब तक जेब गरम नहीं होती, वे किसी की फाईल को हाथ नहीं लगाते थे। उसका तो सीधा सा तर्क था कि---जब ब्राह्मण, बनिये ठाकुर जाट रिश्वत लेकर अमीर हो रहे हैं। तो हम क्यों न हों। हम नहीं होंगे तो उन्हीं के पास पैसा जाएगा, हम ठन-ठन गोपाल।(22)

भ्रष्टाचार देश की तरक्की में बाधा है। जब तक देश में भ्रष्टाचार फैला है तब तक देश का विकास अथवा तरक्की नहीं हो सकती लेकिन प्रत्येक विभाग में भ्रष्टाचार का छोटे कर्मचारी से लेकर बड़े कर्मचारी तक रिश्वतखोरी का एक जाल बना हुआ है। अगर कोई कर्मचारी अथवा अधिकारी इससे बाहर निकलने का प्रयास भी करता है तो वह चाह कर भी इससे मुक्त नहीं हो पाता।वर्तमान समय में जनता के हित्तो ने नाम पर सब तरफ भ्रष्टाचार का बोलबाला है परन्तु दलित जनता विकास के नाम पर हो रही इस लूट के प्रति जागरूक हो चुकी है। आज दलित समुदाय के लोग बढ़ चढ़ कर दलित समाज के विकास कार्यों में भाग ले रहे हैं जो कि दलित जातियों में विकास और परिवर्तन को दर्शाता है। *हमलावर* उपन्यास में लेखक विपिन बिहारी ने दलित समाज में आई जागरूकता को दलित पात्र मदन, भजन और सकल के माध्यम से प्रस्तुत किया है:

> जे.आर.वाई में दनादन काम हो रहे हैं लेकिन हमारे टोले में अभी तक एक भी ईट नहीं गिरी और इधर देखों, हमारे टोले में काम होना

> चाहिए कि नहीं? खरक यादव के सामने एक समस्या ही खड़ी हो गई थी मदन और सकल की माँग से। अब हरिजनों को भी हिस्सेदार बनाना पड़ेगा। नहीं तो कही लिख पढ़ दिया तो मुखिया जेल तक भी गए है जे.आर.वाई के घोटाले में और ठेकेदार तो गया ही है। (88)

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श के अंतर्गत प्रस्तुत बिन्दु की तुलना करने पर पाया गया है कि गैर-दलित तथा दलित लेखकों ने पंजाब तथा भारत के विभिन्न सरकारी संस्थाओं में जड़े गाड़ चुकी रिश्वतखोरी की समस्या तथा उससे प्रभावित दलित समाज की स्थिति को प्रस्तुत किया है। गैर-दलित पंजाबी लेखक एस.एस.कालड़ा ने *मुक्ति* में, दलित उपन्यासकार कैलाशचन्द्र ने *भंवर*, गैर-दलित लेखिका वंदनादेव शुक्ल *मगहर की सुबह*, विपिन बिहारी ने *हमलावर* में, पंजाबी दलित लेखक अज़ीज सरोए ने *हनेरी रात दे जुगनू* में, दलित लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने *विद्रोह* उपन्यास में भ्रष्टाचार से प्रभावित दलित समाज की स्थिति को प्रस्तुत किया है। वहीं दलित समाज में परिवर्तन की स्थिति कि दलित हिन्दी उपन्यासकार कैलाशचन्द्र चौहान उपन्यास *विद्रोह* और विपिन बिहारी ने *हमलावर* उपन्यास में दलित जातियां में विकास के नाम पर होने वाले भ्रष्टाचार से जागृत होकर अपने हक्कों के लिए आवाज़ उठाने के लिए प्रयासरत दिखाया है। गैर-दलित लेखक शिवमूर्ति ने *तर्पण*, रूप सिंह चन्देल ने दगैल, कानपुर टू कालापानी में दलित जीवन के राजनीतिक पक्ष से जुड़े इस बिन्दु पर कम चर्चा की है।

3.4.1 शिक्षा व्यवस्था

शिक्षा का प्रमुख लक्ष्य व्यकित को सफल नागरिक बनाना है। उसकी मानसिक शक्तियों को विकसित करना है ताकि प्रत्येक व्यकित समाज को उन्नतशील बनाने में आवश्यक योगदान प्रदान करते हुए समाज के मंगल की कामना कर सके और यह

तभी हो सकता है यदि शिक्षा प्रणाली उचित हो अर्थात शिक्षा ग्रहण करने के लिए उचित व्यवस्था का निर्धारण किया जाए। किसी भी व्यकित के शिक्षा ग्रहण करने में शैक्षिक प्रशासन का महत्वपूर्ण योगदान होता है। अनुसूचित जातियों में शिक्षा के प्रसार में उल्लेखनीय प्रगति हुई है जहाँ तक साक्षरता का प्रश्न है भले ही उनके साक्षरता का प्रतिशत सामान्य लोगों की तुलना में कम है। इसके पीछे के कई कारण हो सकते हैं, जिनमें से एक कारण शैक्षिक व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार को माना जा सकता है, क्योंकि समाज के प्रत्येक सदस्य को शिक्षा मुहईया करवाना प्रशासन के महत्वपूर्ण कार्यों में से एक है, परन्तु प्रशासनिक व्यवस्था की कमियों के चलते भी दलित समाज के लोग शिक्षा ग्रहण करने से वंचित रह जाते हैं ।जिनका वर्णन 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी के दलित तथा गैर दलित लेखकों ने प्रस्तुत रचनाओं में किया है। प्रस्तुत उपन्यासों में शिक्षा संस्थाओं के माध्यम से शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में शैक्षिक प्रशासन में फैलै भ्रष्टाचार को प्रस्तुत किया गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में दलित समुदाय के लोगों की शिक्षा की स्थिति को *मगहर की सुबह* उपन्यास में गैर-दलित लेखक वंदनादेव शुक्ल ने प्रस्तुत किया हैः

> सामने एक बड़ा मैदान था जो विद्यालय क्षेत्र में ही आता था.....बजुर्ग और घनेरे पेड़ों से भरा पूरा। स्कूल बाऊंड्री की टूटी-फूटी पलस्तर उधड़ी दीवारे देखकर लगता जैसे पुरात्तव विभाग की कोई–खुदाई चल रही हो। विद्यालय में प्रवेश और निकास के लिए यद्यपि एक लौहे के पौराणिक, टूटे गेट वाला संकेतिक द्वार था जिसके अधबने खम्बों पर नीले अक्षरों में प्रवेशद्वार लिखा था। लेकिन विद्यार्थी उन खण्डरों की दीवारों को कूद-फांदकर आना ही पसंद करते थे।(10)

कई जगहों पर ग्रामीण क्षेत्रों में दलित बस्तियों और मुहल्लों में खुले सरकारी स्कूलों की हालत बहुत खसता है अर्थात स्कूल के नाम पर टूटी-फूटी इमारतें ही देखने को मिलती हैं और प्रशासन द्वारा इन सब की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया जाता। दलित समुदाय के ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों से सटे हुए कस्बों में समाज सेवा के नाम पर मुफ्त शिक्षा संस्थान तो खोले जाते हैं पर सिर्फ कागजों में, जबकि यथार्थ कुछ और ही होता है। उपन्यास *भंवर* में दलित लेखक कैलाश चन्द्र चौहान ने शैक्षिक संस्थाओं के नाम पर होने वाले भ्रष्टाचार को सुधाकर और अनामिका के समाज सेवी संस्थाओं सम्बन्धी व्कतवय के माध्यम से प्रस्तुत किया गया हैः

> लेकिन ज्यादातर संस्थाएँ केवल पैसा कमाने के लिए इस क्षेत्र में आई है, गरीबों दलितों का हर कोई शोषण करता है। "मैं कुछ समझा नही।" यहाँ अधिकतर दलित ही रहते हैं। मुझे भी पता नहीं था कि इनके नाम पर भी लोग पैसा कमा रहे हैं। मैं जब यहाँ आई तो पता चला कि यहाँ एक और सैंटर चल रहा है लेकिन वहाँ बच्चों को कुछ भी नहीं पढ़ाया जाता। बस कुछ खाने के लिए बुलाया जाता है बच्चे खाना लेकर अपने –अपने घर चले जाते हैं। वे घूमते हैं। अवारागर्दी करते हैं परन्तु वास्तव में उनके उत्थान के लिए कोई कार्य नहीं करता। इस छोटे से क्षेत्र में आठ संस्थाएँ काम कर रही हैं, लेकिन कागजों में। एक ही जगह के खर्चों को सभी संस्थाओं के खाते में चढ़ा दिया जाता है... सभी को सरकार की तरफ से पैसा मिल जाता है समाज सेवा के नाम पर इतनी अन्धेरगर्दी।(90)

सरकारी स्कूलों को सहायता के नाम पर मिलने वाले अनुदान को सरकार से लेने के लिए कई कार्जकारी कमेटिआँ बनाई जाती हैं परन्तु सरकारी अनुदान स्वरूप मिली

सहायता को यह लोग अपने स्वार्थ के लिए प्रयोग करते हैं। पंजाब के ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार को पंजाबी उपन्यास *हनेरी रात दे जुगनू* में लेखक अज़ीज सरोए ने प्रस्तुत किया है:

> मिलदे–गिलदे रिहा करो। बुधवार नू प.स.व.क दी वी मीटिंग ए। कमरिआं वास्ते दस्स लख दी गरांट आई ए। नाजम सिंघ ने उसनू मीटिंग बारे जाणू करवा दित्ता सी। जरूर पहुँचांगे। फेर ही कुछ खाण नू मिलू।(72)

शिक्षा संस्थानों में व्याप्त भ्रष्टाचार के कारण सरकारी स्कूलों की हालत अत्यंत खसता हो गई है। जिसके कारण उच्च वर्ग के लोग अपने बच्चों को प्राईवेट स्कूलों में पढ़ाते हैं लेकिन गरीब दलित समाज के लोग आर्थिक अभावग्रस्तता के कारण इतना मंहगा प्रबंध अपने बच्चों के लिए नहीं कर पाते। दलित क्षेत्रों में खुले सरकारी स्कूलों की इमारतें और उनके विकास की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया जाता। उपन्यास *परणेश्वरी* में लेखक देशराजकाली ने पंजाब के शिक्षा संस्थानों की स्थिति को प्रस्तुत किया है:

> कुर्पशन ता इह है कि सरकारी स्कूल तुस्सी बंद कर दित्ते। असी इसनू कुर्पशन कहिंदे ई नहीं। उत्थे जो कोई स्कूल है। टीचर जो ने उत्थे पढ़ाऊंदे ही नहीं। पढ़ाऊंदे इस लई नहीं क्योंकि सरपंच दा मुण्डा ता पब्लिक स्कूल विच्च पढ़दा। सरपंच नू इस स्कूल दी लोड़ नहीं। औह कहिंदा पढ़ाऊणा पढ़ाओं, नहीं पढ़ाऊणा न पढ़ाओं खशमा नू खाओं।(66)

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित उपन्यासकारों ने पंजाब तथा भारत के ग्रामीण तथा शहरों में विभिन्न प्रशासनिक क्षेत्रों में व्याप्त भ्रष्टाचार के

प्रति अपनी लेखनी चलाई है। शैक्षिक प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार को लेकर गैर-दलित लेखक वंदनादेव शुकल ने *मगहर की सुबह*, में अज़ीज सरोए *हनेरी रात दे जुगनू*, कैलाशचन्द्र चौहान ने *भंवर* और देशराजकाली ने *परणेश्वरी* उपन्यास में राजनीतिक पक्ष से जुड़े इस बिन्दु पर लेखनी चलाई है। इसके अतिरिक्त शिवमूर्ति ने *तर्पण*, रूप सिंह चन्देल ने *दगैल* तथा *कानपुर टू कालापानी*, विपिन बिहारी ने *हमलावर* तथा *मरोड़* में, पंजाबी के गैर-दलित लेखकों में रामस्वरूप अणखी ने *सलफास*, बलदेव सिंह ने *अन्नदाता* एस.एस.कालड़ा ने *मुक्ति* उपन्यास में दलित जीवन के राजनीतिक पक्ष से जुड़े इस बिन्दु पर अपनी लेखनी कम ही चलाई है।

3.4.2 चिकित्सा व्यवस्था

समाज के संचालन को सही ढंग से चलाने के लिए सरकार द्वारा कई प्रकार की संस्थाएँ बनाई गई हैं, ताकि आम जनता को किसी भी प्रकार की समस्या का सामना न करना पड़े। चिकित्सा व्यवस्था लोगों की सेहत सम्बन्धी देखरेख के लिए बनाई गई है जिसका प्रमुख उद्देश्य समाज के सभी वर्ग के लोगों के स्वास्थ का उपचार करते हुए उन्हें निरोगी जीवन प्रदान करना है परन्तु जो व्यवस्था लोगों की भलाई के लिए बनाई गई है। भष्टाचार के चलते उस व्यवस्था का उद्देश्य अपनी जेबों को भरना बन गया है। ऐसी व्यवस्था में गरीब दलित लोगों की स्थिति तो और भी बद्‌तर हो जाती है, जब चिकित्सालयों में निम्न जाति के लोगों के साथ भेदभाव पूर्ण व्यवहार किया जाता है। 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी के दलित तथा गैर-दलित उपन्यासकारों ने दलित समाज की चिकित्सा व्यवस्था से जुड़ी समस्याओं को प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत उपन्यास *मगहर की सुबह* में वंदनादेव शुक्ल ने चिकित्सालय में दलित वर्ग के साथ होने वाले भेदभाव पूर्ण व्यवहार को प्रस्तुत किया है अर्थात जो चिकित्सालय लोगों के स्वास्थ की देख रेख के लिए बनाया गया है वहां के चिकित्सा कर्मचारी दलित वर्ग के लोगों का ईलाज करने में काफी आनाकानी करते हैं और अगर दलित जाति के मरीज

को अस्पताल में भर्ती करते भी हैं तो उन्हें कोई बैड न देकर जमीन पर जगह दी जाती है। चिकित्सा व्यवस्था में व्यापत भ्रष्टाचार तथा दलित जातियों से हो रहे भेदभाव को *मगहर की सुबह* उपन्यास में लेखिका वंदनादेव शुक्ल ने दलित पात्र दम्मों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> वो बेहोस दम्मो को गाँव के अस्पताल में ले जा रहे थे। मैना और केतकी भी उनके साथ पलट आई और अस्पताल पहुँची। छोटे से पीली दीवारों वाले अस्पताल में ताला लटका था। कुछ कुत्ते जो ठंड में पूंछ दबाए सो रहे थे, सहसा जाग गए थे और भौकने लगे थे। मैना ने दरवाजे से कुछ दूरी पर ही रहने वाली बूढ़ी नर्स को जगाया। उसने देखा और कहा कि हालत बहूत खराब है....शहर ले जाना पड़ेगा....। नर्स ने एक कमरा खोल दिया। ये उस दवाखाने का इमरजेंसी रूम था और ऐसे ही विकट समय में उपयोग होता था। रात-बिरात किसी को उल्टी-दस्त हो जाए, किसी की जचकी हो तो....इस कमरे में दो खाट पड़ी थी....उन पर मैले कुचेले बिस्तर बिछे थे। एक बेहद चीकट चादर पैताने रखा था।....मैना और दम्मो की सास बरफी छटपटाती दम्मो को खटिया की तरफ ले जाने लगी तो नर्स ने रोक दिया, बाई नीचे लिटाओं जच्चा को...वहां नहीं। अरे इत्ती ठंड में मैना ने कहां नहीं, इन लोगों को नीचे ही पाड़ना होता है, कहकर वो एक दूसरे छोटे कमरे में गई और एक कथरी ले आई, इसे बिछा लो मोटी है नर्स ने कहा।(94)

अशिक्षित गरीब दलित जनता की कहीं पर भी सुनवाई नहीं होती क्योंकि निर्धन होने के कारण कई बार इनके पास डाक्टरों को देने के लिए फीस भी नहीं होती और महँगाई के कारण दवाईयां महँगी होने के कारण उन दवाईयों को खरीद नहीं पाते और बगैर ईलाज के ही मर जाते हैं। पंजाब में चिकित्सा व्यवस्था में फैले भ्रष्टाचार को

पंजाबी उपन्यास *मुक्ति* में लेखक एस.एस कालड़ा ने दलित पात्र बल्लू तथा उसकी नानी के माध्यम से प्रस्तुत किया है-

> ..जदों बल्लू दे जन्म दा समां आया ता बल्लू दी नानी झुग्गीआं विच्च रहिंदी एक दाई नू फड़ लिआई....विचै-विच आंढ़ी गुआंढ़ी सलाह दिन्दे कि वड्डी डाक्टर कौल ले जाओ पर वड्डी डाक्टरनी नू देण जोगे पैसे बल्लू दी नानी कौल कित्थे सन। जेकर कोई सरकारी हस्पताल दी गल्ल करदा सी तां उत्थे वी इन्नां विचारियां नू कौण पूछदा है। पहली गल्ल तां इन्नां दी बाह फड़ ही लैण तां दवाईया दी ऐडी बड़ी लिस्ट लिखके फड़ा दिन्दे हन कि अगले दा उपरला साह ऊपर ते हेठलां हेठां ही रह जांदा है। जिन्नें चिर नू विचारा मिन्नत तरले कर, इधर-उधरों उधार सुधार फड़ दवाईयां लिआऊंदा हैं, उदों तक मरीज अगले पार पहुँच जांदा है। (53)

भ्रष्ट व्यवस्था के चलते कुछ चिकित्सकों के द्वारा दवाईयों के नाम पर नशे का व्यापार भी किया जाता है जिसका सबसे ज्यादा प्रभाव दलित जातियों पर पड़ता है। नशे के अन्य साधन महँगे हो जाने के कारण ये लोग चिकित्सकों से नशे की गोलियां खरीद कर खाते हैं। अतिरिक्त फायदे के लिए चिकित्सकों द्वारा दो गुना ज्यादा दाम में इन गोलियों को बेचने सम्बन्धी भ्रष्टाचार को उपन्यास *केही वगै हवा* में लेखक अज़ीज सरोए ने प्रस्तुत किया हैः

> पिंडा 'च' बैठे झोला-छाप डाक्टरां ने आपणे कारोबार 'च' होर वाधा कर लिया चोरिओं-छुपिओं नशीले पदार्थ वेचण लग्ग पए। अमलीआं लई हुण अफीम भुक्की दा खर्च झल्लणा ओखा हो गया है। नशे छड्ड नहीं सकदे। हुण तां उन्नां दी गलती वी सप्प दे मुँह 'च' कोहड़ किरली

वाली है। पिंड दे अमली हुण ता फिनोटेल दीआं गोलियां नाल शूरू हुन्दे ने।(72)

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी के उपन्यासों में दलित विमर्श के अंतर्गत चिकित्सा व्यवस्था बिन्दु का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए देखा जा सकता है कि चिकित्सा व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार से प्रभावित दलित समाज की स्थिति को वंदनादेव शुक्ल ने *मगहर की सुबह*, एस.एस कालड़ा ने *मुक्ति* में तथा अज़ीज सरोए ने *केही वगै हवा* उपन्यास में प्रस्तुत किया है। चयनित उपन्यासकारों में अन्य लेखकों ने इस विषय पर कम चर्चा की है।

3.4.3 पुलिस प्रशासन

हमारे देश और समाज में शांति, सुव्यवस्था और सुरक्षा स्थापित करने के लिए कानून का निर्माण हुआ है। वर्तमान कालीन शासन व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए कानून और न्याय व्यवस्था की जरूरत होती है। कानून का सीधा सम्बन्ध जनता से होता है ।कानून का प्रमुख कार्य राज्य में शांति और सुव्यवस्था का निर्माण करना है। सामाजिक व्यवस्था को भंग करने वालों को सजा देना न्याय व्यवस्था का कार्य है जिसके लिए सरकार द्वारा पुलिस प्रशासन का गठन किया गया है। वर्तमान समय में भ्रष्टाचार जहाँ जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में व्याप्त है, वहीं पुलिस प्रशासन भी इससे नहीं बच पाया है। पुलिस का कर्तव्य समाज में घटित होने वाले अनैतिक आचरण, अत्याचार, गुण्डागर्दी तथा असामाजिक तत्वों को रोकना है और निर्दोष, पीड़ित लोगों की रक्षा करना है परन्तु वर्तमान समय का पुलिस प्रशासन भ्रष्ट नेताओं, ताकतवर पूँजीपतियों के इशारे पर नाचता है। 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित रचनाकारों ने पुलिस प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा उससे प्रभावित दलित समाज का वर्णन अपनी रचनाओं में किया है। हिन्दी उपन्यास *तर्पण*

में लेखक शिवमूर्ति ने पुलिस प्रशासन से प्रभावित दलित समाज की स्थिति का वर्णन दलित पात्र पिआरे और थाने में तैनात पुलिस कर्मी के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> फिर पिआरे की ओर देखकर पूछता है,"कुछ नज़राना- शुकराना लाया है कि फरी में सब काम कराएगा। पिआरे बंडी की जेब में चार पर्त करके, सँभालकर रखा सौ का नोट निकाल कर मुंशी की ओर बढ़ा देता है। नोट लेकर, उसकी परत खोलकर लालटेन के उजाले में परखता है मुंशी। फिर एक पन्ना फाड़कर पिआरे को पकड़ाते हुए कहता है, 'आदमी तो तू समझदार लगता है रे, बस नेतवा के चक्कर में पड़ गया है। सौ रूपए में इतनी ठंडक? कि कप्तान साहब की लिखावट का असर है।(54)

प्रस्तुत उपन्यास में दलित युवती रजपतिया पर धर्मू पंडित का लड़का चंदर बलात्कार करने का प्रयास करता है। इसलिए पिआरे को अपनी बेटी के बलात्कार की रिपोर्ट लिखवाने के लिए थाने के मुःशी को सो रूपए रिश्वत देनी पड़ती है, तब जाकर कहीं मुःशी उसकी रिपोर्ट लिखता है। बेशक मजबूरी के कारण गरीब दलित ग्रामीण जनता को पुलिस की शरण में जाना पड़ता है, परन्तु पुलिस प्रशासन इनकी मजबूरी का फायदा हर प्रकार से उठाने का प्रयास करता है फिर चाहे वह चाय के पैसे हो या फिर रिपोर्ट लिखवाने के लिए नजराने शुकराने के नाम पर रिश्वत, अर्थात हर तरफ से शोषण तो पीड़ित दलित व्यकित का ही होता है। इस प्रकार इन्साफ की तलाश में भटकते दलित समाज की स्थिति को लेखक शिवमूर्ति ने *तर्पण* उपन्यास में दलित पात्र पिआरे के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> अभी लौट रहे हैं दीवान जी। कागज लेने जा रहे हैं, पिआरे कहता है सिपाही थोड़ी दूर तक दोनों को जाते हुए घूरता है फिर चिल्लाकर

> कहता है- "अच्छा वहाँ से पाँच ठो चाय भिजवा देना"....दस रूपए देखकर दुकानदार ने मूँह बनाया..."आठ चाय तीन यहाँ कि और पाँच थाने वाली।" थानेवाली? ऊ हम काहे देंगें।"सब देते हैं जो आर्डर लाता है वही देता है पैसे।"...पिआरे दुकानदार के पास खिसक आया। फुसफुसा कर बोला, "बाकी बाद में आकर दे दूँगा। अब सौ रूपए हैं मेरे पास, रिपोर्ट लिखवाने के लिए।" (30)

विपदा की स्थिति में, पिआरे इन्साफ की आस में पुलिस थाने में जाता है। पुलिस थाने में नीचे से लेकर ऊपर तक सभी पुलिस कर्मचारी उसका शोषण करते हैं । यहाँ तक गरीब दलित पिआरे के पास पैसे न होते हुए भी उसे पुलिस कर्मियों की चाय का बिल्ल चुकाना पड़ता है और रिपोर्ट अर्थात एफ.आई.आर लिखवाने के लिए सौ रूपए भी देने पड़ते हैं। इसी प्रकार दलित मजदूरों को कारखाने की नौकरी से निकालने पर उनके द्वारा किए गए रोष प्रदर्शन के दौरान पुलिस प्रशासन के द्वारा दलितों के प्रति किए जाने वाले अमानवीय व्यवहार को *मगहर की सुबह* उपन्यास में लेखिका वंदना देव शुक्ल ने प्रस्तुत किया हैः

> अब उस क्षेत्र में मजदूर कम और आंदोलनकारी अधिक दिखाई देने लगे हैं। विरोधी पार्टी के छुटभैये नेताओं और संगठन के साथ बड़ी संख्या में लोग आते....नारेबाजी करते हैं। तोड़-फोड़, आगजनी, पुलिस की आवाजाही और गिरफतारी जैसी घटनाएँ आम हो गई हैं। पूरे शहर की पुलिस मानों वहाँ ही जमा हो गई थी। रोज कई गिरफ्तारियां होती, अख्बार भरे रहते मिल्ल के ताजे चित्रों व खबरों से.......पुलिस गरीब दलित जनता को मारती पीटती और हंगामे होते।(49)

साधारणतः माना जाता है कि पुलिस प्रशासन जनता की रक्षा के लिए तैनात किया जाता है परन्तु वर्तमान समय में पुलिस व्यवस्था केवल पैसे वाले लोगों के हक्कों की रक्षा करने के लिए ही बाध्य है। आम जनता के दुखों तकलीफों से पुलिस प्रशासन को कोई लेना देना नहीं है और इस शोषण का शिकार मजदूर दलित वर्ग का प्रत्येक व्यकित है। पुलिस प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा शोषण से प्रभावित दलित औरतों की स्थिति को लेखिका वंदना देव शुक्ल ने *मगहर की सुबह* उपन्यास में दलित स्त्री पात्र मैना के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> ठीक है.... कहकर मैना वहां से निकल पड़ी। शाम कजराने लगी थी। वो कदम जल्दी- जल्दी उठाने लगी। अभी कुछ ही दूर आई थी कि एक स्कूटर सामने आकर रूक गया, वही पुलिस्या था। आपा ने क्हा है उसे घर तक छोड़ आओ रात हो रही है 'उसने मुस्कुराते हुए क्हा'। नहीं मैं चली जाऊगीं, मैना ने क्हा और जल्दी चल दी। 'अरी यहां क्या कांटे लगे हैं बदन में जो ऐसे भागती है मुझ से......खा जाऊगां क्या तुझे....रानी सब भूल जाओगी चलों तो मेरे साथ...।' 'अपनी औकात में रहियो माटी मिले ...समझ क्या रखी है तुने रंडी या....तेरी लुगाई? सिपाही होगा तो क्या खा जाएगा? मैना की आंखों में जैसे आग बरस रही थी ...वो होश खो चुकी थी। आज जिंदगी में पहली बार उसने किसी मर्द के सामने जबान खोली थी। उसे खुद आश्चर्य था कि उसका वो डर कहां गायब हो गया 'बड़ी अकडेत बने है हरामजादी, आज तो छोड़ रहा हूँ, पर कल देख तेरी....' और वो बड़ी गालियां बकता वहां से चला गया।(66)

प्रस्तुत उपन्यास में दलित पात्र मैना आर्थिक तंगी के चलते घर खर्च चलाने के लिए बीड़ी के कारखाने में नौकरी करने लगती है और मैना की इस मजबूरी का फायदा

वहाँ आने वाला एक पुलिस अफसर उठा कर मैना का शारीरिक शोषण करने का प्रयास करता है। पंजाब में भ्रष्ट पुलिस प्रशासन और उसके द्वारा दलित जनता के उत्पीड़न की समस्या का वर्णन पंजाबी उपन्यास *मुक्ति* में लेखक एस.एस कालड़ा ने गैर-दलित जाति के पुलिस कर्मी और दलित जाति की स्त्री पात्र कंती और उसकी बेटी लाडो के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> तुहाड़े कित्थो आए? इह तां दान पुन्न दे पैसे हन....इह कहिंदे होए सपाटे ने पल्ली ते पए पैसिआं ते झपट मार मुट्ठी भर लई। दो चार सिक्के मगर रहि गए। औह लाडो ने चक्क लए। लिया फड़ा इह वी, सपाटे (सिपाही) ने उच्ची अवाज विच्च केहा। फड़ा दे परां लाडो दी मां ने केहा।......फड़ाऊंदी है, “पैसे कि मार-मार डंडे थाणे ले के जावां”, चोरी दे केस विच्च। डंडा उताह चक्कदे होए सपाटे ने केहा।(12)

प्रस्तुत उपन्यास में जब दलित लड़की लाडो खेलते-खेलते गंगा नदी के किनारे पर पहुँच जाती है और गंगा नदी में पानी कम होने के कारण वहाँ उसकी नज़र गंगा नदी में लोगों द्वारा दान किए गए पैसों पर पड़ती है तो लाडो जो कि अत्यंत गरीब और दलित परिवार की लड़की है। पैसे देखकर वह गंगा नदी से पैसे उठाकर उनकों इक्ट्ठें कर लेती है और लाडो के द्वारा गंगा नदी से इक्टठे किए पैसों पर अपना हक्क बताकर एक पुलिस कर्मचारी उन पैसों को छीन लेता है। कंती और लाडों के विरोध करने पर पुलिस कर्मी गाली-गलौच करते हुए थाने ले जाने की धमकी भी देता है। पुलिस प्रशासन जो कि लोगों की सुरक्षा के लिए तैनात किया गया है परन्तु वर्तमान समय में उसका उद्देश्य परिवर्तित हो चुका है। अब पुलिस प्रशासन जनता का हर प्रकार से उत्पीड़न करने का प्रयास करता है। *अन्नदाता* उपन्यास में लेखक बलदेव सिंह ने पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में पुलिस विभाग द्वारा दलित औरतों पर किए जाने वाले

उत्पीड़न को दलित युवतीओं गुरदीप उर्फ दीपो, गुरमीत उर्फ मितो, कुलवंत उर्फ कंतो के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> देख गुरदीप कौर इक्क गल्ल समझा दिआं। जिन्नां चिर तू साडे नाल मिल के रहेंगी। साडीआं अक्खा विच्च घट्टा पा के तू जा तेरे जिहीआं होर..जो वी ने इह धंधा नहीं कर सकदीआं। औह बस सटैंड लागे..पी.सी.ओ वाली, की ना है उसदा...उस ने टेबल ऊपर पई डायरी चुक्की ते पन्ने पलटण लग्गा। हां गुरमीत कौर उरफ मीतो ते आह कुलवंत कौर ऊर्फ कंतों...सबनां दी लिस्ट मेरे पास है।..हुण साडे नाल तालमेल रखणा है जा नाराजगी सहेड़नी है गुरदीप कौर..शुक्ला दी अक्खा विच्च शरारत आ गई।(230)

हिन्दी उपन्यास *हमलावर* में दलित लेखक विपिन बिहारी ने पुलिस व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार और उससे प्रभावित दलित समाज की स्थिति को दलित पात्र फुकन के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> थाना पुलिस, कोट कचहरी करने से तो कुछ होगा ही नहीं समझ में आ रहा मुझे। फुकन ने अपनी लाचारी जाहिर की थी। थाना पुलिस करने से तो कुछ होगा ही नहीं। भीतर-भीतर कसूरवारों से खा पी के उनकी सहायता भी कर सकते हैं। दूसरा कानून की पैंदी में इतने छेद हैं कि बड़े-बड़े शातिर भी बच निकलते हैं। हो सकता है कि ये लोग भी बच निकले क्योंकि उनके पास पैसे हैं और पैरवी भी है।(142)

जब दलित जाति के फुकन की बेटी सुनरी का बलात्कार गाँव के कुछ अनजान लोगों द्वारा किया जाता है और सुनरी के होश में आने पर उन्हें उन मुलजिमों के नाम भी पता चल जाते हैं। सामूहिक बलात्कार का शिकार दलित युवती सुनरी को इन्साफ

दिलाने के लिए वह लोग थाना पुलिस करने की सोचते हैं तो सुनरी का पिता फुकन थाने कचहरी जाने से इन्कार कर देता है क्योंकि पुलिस प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार के कारण अब लोगों का विश्वास पुलिस प्रशासन से उठ चुका है। उपन्यास *शांतिपर्व* में लेखक देशराजकाली ने पंजाब में अत्तवाद के दौरान पुलिस प्रशासन की कार्य व्यवस्था का जिक्र पंजाब के पुलिस विभाग के माध्यम से किया हैः

> हुण जीवें पंजाब विच्च होईया, भई जेहड़ी पुलिस सी। औह आप कुछ नहीं सी करदी। जेहड़ी एगजैकटिव सी, औह डरी बैठी सी। औहना नू आप गन्नमैन ले गए सन। डी.सी. निकलदा सी दस पंद्ररा सिपाही लै के। जज्ज जिहड़े सन औह कोई फैसला ही नहीं सन दिन्दे।(10-11)

लेखक के अनुसार पंजाब में जब अत्तवाद फैला था, उस समय की पंजाब पुलिस हमेशा की तरह अनजान बनी घूम रही थी।

जहाँ हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित लेखकों ने पुलिस प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार को प्रस्तुत किया है वहीं पुलिस प्रशासन के साकारात्मक पक्ष को दलित हिन्दी लेखक विपिन बिहारी ने *हमलावर* उपन्यास में दलित टोले के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> एफ.आई आर में दस का नाम था। जिसमें गोबर्द्धन सिंह, सक्ल के अलावे भी थे....एक एफ.आई आर के बाद भेजा था कैलु को सरकारी अस्पताल। जब खरक थाने से लौट आया। कैलु के साथ तो गोवर्द्धन सिंह गए थे थाने अपने लोगों के साथ। उन्होंने भी दस के विरूद्ध एफ.आई.आर करवा दिया।.........असल बात क्या है गोबर्द्धन जी बताइए। इससे क्या होगा ? दोनों तरफ से एक-एक एफ.आई.आर हुई है। हम तो दोनों को पकड़कर चालान कर देंगें। फिर करते रहिए कोट-

कचहरी। होगा कुछ नहीं क्योंकि यह झगड़ा सामूहिक हुआ है लेकिन परेशानी बढ़ जाएगी। इसलिए मेरा कहना मानिए और कोमप्रमाईज कर लीजिए।(55)

प्रस्तुत उपन्यास में जब गाँव में पानी के विवाद के चलते स्वर्ण और दलित जाति के लोगों में झगड़ा हो जाता है तो गैर-दलित और दलित टोले के लोग आपस में भिड़ जाते हैं और दलित टोले के कैलु के साथ काफी मार-पीट भी करते हैं, तब पुलिस प्रशासन ही बीच में आकर लड़ाई को शांत करता है और जब गाँव की बंजर जमीन को दलित जाति के लोगों द्वारा बीजा जाता है तो गाँव के उच्च जाति के लोग मिल कर इसका विरोध करते हैं और दलित टोले के लोगों के साथ लड़ाई झगड़ा करते हैं तो पुलिस प्रशासन ही बीच में आकर झगड़े को शांत करवाता है और गरीब दलित लोगों के हक्क में फैसला लेता हैः

कांसबन्ना में हल जोत रहे लोगों के बीच में डर पसर गया कि कहीं आमना सामना न हो जाए, मदन भी भीतर से संशक्ति हो गया। कहीं उसने गलत निर्णय तो नहीं लिया।....कांस बन्ना में अगड़े पिछड़े दोनों ही लौट आए कैसे रोका जाए हरिजनों को विमर्श करते हुए.........देख बौराए मत, नही तो भीतरे ठेल देंगें। कहीं अगड़ा पिछड़ा मिल के टोला मुहल्ला लहरा दिए तो कहने लगोगें कि थाना बचाने नहीं आया ।इ जमीन किसकी है गैर-मजरूआ है न, यदि इसे जोत कोड़ के कुछ उपजा खा लेंगे इ भूमिहीन लोग तो आप लोगों का करेजा काहे फट रहा है, बताइए। इ गरीब कहाँ जाऐगें मरने धसने इ गाँव छोड़ के। दरोगा ने दोनों तरफ की बातें कहीं थी। अगड़ो पिछड़ों से कुछ बोलते नहीं बना था।.......ये दरोगा भी लगता है दलितों का ही समर्थक है ।(137)

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी के दलित तथा गैर-दलित उपन्यासकारों द्वारा प्रस्तुत उपन्यासों में दलित विमर्श के राजनीतिक पक्ष से जुड़े बिन्दु पुलिस प्रशासन की तुलना करने पर देखा जा सकता है कि पुलिस प्रशासन से प्रभावित दलित समाज की स्थिति का वर्णन वंदनादेव शुक्ल ने *मगहर की सुबह में*, शिवमूर्ति ने *तर्पण* में, पंजाबी लेखक एस.एस. कालड़ा ने *मुक्ति* में और बलदेव सिंह ने *अन्नदाता* में अथवा विपिन बिहारी के *हमलावर* उपन्यास और देशराज काली ने *शांतिपर्व* पुलिस प्रशासन तथा उससे प्रभावित दलित समाज की स्थिति का वर्णन किया है जबकि पुलिस विभाग में आए परिवर्तन और दलित जातियों के प्रति साकारात्मक दृष्टिकोण को विपिन बिहारी ने *हमलावर* उपन्यास में प्रस्तुत किया है।

3.4 आरक्षण व्यवस्था

भारतीय संविधान जाति को महत्व नहीं देता और जाति के आधार पर भिन्नताओं की भी मनाही करता है अर्थात संविधान समानता के अधिकार पर बल देता है। भारतीय संविधान सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों के लिए आरक्षण की व्यवस्था करता है। सार्वजनिक सेवाओं में अनुसूचित जाति तथा जन जातियों के लिए आरक्षण का मुख्य उद्देश्य उन्हें केवल रोजगार के अवसर प्रदान करना तथा सेवाओं में उनका प्रतिनिधित्व बढ़ाना ही नहीं अपितु ऐसे वर्गों का सामाजिक तथा शैक्षणिक रूप से स्तर उन्नत कर समाज में उन्हें सम्मानित स्थान दिलाना भी है। सार्वजनिक सेवाओं में नागरिकों को रोजगार देने के सम्बन्ध में भारत के संविधान में विशेष प्रावधान किये गये हैं। *भारत में दलित* पुस्तक में आरक्षण नीति को परिभाषित करते हुए सुखदेव थोरात कहते हैं कि-

> सार्वजनिक क्षेत्र के रोजगार में अनुसूचित जातियों की आनुपातिक भागीदारी सुनिश्चित करने और सार्वजनिक शैक्षिक संस्थानों के साथ ही विभिन्न राजनीतिक लोकतांत्रिक निकायों और संस्थानों में उनके प्रवेश को संभव बनाने के लिए सार्वजनिक क्षेत्रों में आरक्षण को एक संवैधानिक प्रावधान के रूप में शामिल किया गया।(11)

इन्हीं प्रावधानों के अंतर्गत अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों को आरक्षण प्रदान किया गया है। जे.बी. सिन्हां ने *सामाजिक न्याय एवं दलितोत्थान की योजनाएँ* पुस्तक में भारतीय संविधान में आरक्षण सम्बन्धी अनुच्छेद को परिभाषित किया है-

अनुच्छेद 16(1) के अनुसारः

> “राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से सम्बन्धित विषयों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समानता होगी।”(28)

अनुच्छेद 16 (2) के अनुसारः

> कोई नागरिक केवल धर्म, मूलवंश, जाति, उद्भव, जन्म स्थान, निवास या इनमें से किसी आधार पर राज्य के अधीन किसी नियोजन या पद के सम्बन्ध में अपात्र नहीं होगा या उसमें विभेद नहीं किया जाएगा।(28)

अनुच्छेद 16(4) के अनुसारः

> इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य के पिछड़े हुए नागरिकों के किसी पक्ष में जिनका प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं

> में पर्याप्त नहीं है, नियुक्तियाँ या पदों के आरक्षण के लिए उपबन्ध करने से निवारित नहीं करेगी।(28)

उपर्युक्त प्रविधानों के साथ ही राज्य सेवाओं का स्तर तथा प्रशासन में दक्षता बनाये रखने की दृष्टि से भारत के संविधान के अनुच्छेद 335 में निम्नलिखित प्रावधान किया गया हैः

> संघ या किसी राज्य के कार्यकलापों से सम्बन्धित सेवाओं और पदों के लिए नियुक्तियाँ अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के दावों का प्रशासन की दक्षता बनाये रखने की संगति के अनुसार ध्यान रखा जाएगा।(28)

भारतीय संविधान में वर्णित आरक्षण व्यवस्था जिसका लाभ दलित वर्ग को हुआ है। आज आरक्षण के द्वारा दलित निम्न से लेकर उच्च स्तर तक नेता पार्षद आदि के रूप में काम कर रहे हैं। सरकार द्वारा संविधान में दलित जातियों के विकास के लिए आरक्षण की सुविधा दी गई है और आरक्षण मिलने से दलित जातियों का मनोबल बढ़ा है। वह हर क्षेत्र में आगे आ रहे हैं। *मगहर की सुबह* उपन्यास में लेखक वंदनादेव शुक्ल ने दलित जातियों के विकास में आरक्षण व्यवस्था से लाभ प्राप्त कर रहे दलित समुदाय के लोगों की स्थिति को प्रस्तुत किया हैः

> पिछड़ी जातियों के आरक्षण की सीटे बढ़ाने, बेरोजगारी व गरीबी भत्ता दिलवाने सस्ते बीज और धान मुहैया कराने के अलावा और भी नित्त नई कई दलीय घोषणाएँ और उधर अगड़ों का विरोध-पिछड़ी व दलित जातियों की स्थिति अजीबो गरीब सी हो गई है ।....आरक्षण और कुछ विशेष भत्तों या सुविधाओं के चलते दलितों के हौसले बुलंद और स्वर्णों के पस्त होने का दौर था।(83)

संविधान द्वारा आरक्षण व्यवस्था दलित जातियों के सुधार के लिए दी गई थी ताकि दलित जातियों को भी समानता और बराबरी का हक्क मिल सके जिसके परिणाम स्वरूप दलित जातियां पढ़ लिख कर विभिन्न क्षेत्रों में आगे आ रही हैं और अपनी काबिलीयत सिद्द कर रही है परन्तु ये बात गैर-दलितों को हजम नहीं होती। वे लोग प्रत्येक दलित व्यकित की सफलता को आरक्षण के रूप में देखते हैं। गैर-दलितों तथा दलित जातियों के मध्य आरक्षण के नाम पर होने वाली इस नौंक झोंक को *हमलावर* उपन्यास में दलित लेखक विपिन बिहारी ने दलित पात्र मदन के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> अब यही सोच रहा होगा कि दलित है रिजर्वेशन मिला हुआ है तो पढ़ रहा है। रिजर्वेशन मिला हुआ है मानता हूँ, पर क्या परीक्षाओं में भी रिजर्वेशन मिला हुआ है या अंको में भी मिला हुआ है।....जब इन लोगों का कहीं जुगाड़ नहीं बैठेगा तो अंत में रिजर्वेशन का ब्रह्मास्त्र छोड़ देंगे। किसी का मनोबल गिराने के लिए। (46)

जब हम भारतीय समाज का निरीक्षण करते हैं तो हमारे समक्ष निम्न वर्ग के रूप में दलित वर्ग आता है जो ऐसा वर्ग है जिससे घृणा भाव अर्थात अस्पृश्यता जैसी भावना रखी जाती थी। इस वर्ग में विकास के लिए जहाँ भारत में आरक्षण द्वारा आगे बढ़ने की मुहीम है वहीं अभी भी इस वर्ग के प्रति घृणा भाव रखा जाता है। सामाजिक भेदभाव की इस स्थिति को लेखक विपिन बिहारी ने *हमलावर* उपन्यास में दलित पात्र मदन और गैर-दलित स्त्री पात्र नीलम के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> यदि मुझे रिजर्वेशन मिला हुआ है तो गलत ही क्या है । एक तरफ मुझ से छुत-छात मानी जाएगी। समाज में मेरा उत्पीड़न होगा तो क्या में रिजर्वेशन का भी हकदार नहीं होऊगां। नीलम, असलीयत बताऊं ये

> अगड़ा समाज नहीं चाहता कि मैं किसी औहदे पर जाऊं.....हाथ में झाड़ू, गले में शूप वगैरह-वगैरह लेकर निकले शूद्र रास्ते में दूर से ही पता चल जाए कि कोई शूद्र आ रहा है।(119)

संविधान द्वारा निम्न जातियों के उद्धार के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई है, परन्तु आरक्षण व्यवस्था के कारण पंजाब में दलित जातियों में आपसी भेदभाव की स्थिति का वर्णन पंजाबी उपन्यास *पंडोरी प्रोहितां* में लेखक निंदर गिल्ल ने प्रस्तुत किया है। लेखक ने आरक्षण के कारण दलित जातियों में आपसी फूट की स्थिति का भी वर्णन पंडित करतारे के माध्यम से किया हैः

> अम्बेडकर साडा मजहबीआं दा जात भाई पर वरत गए इसनू रविदासिए ही।........सरकारी कानूनां अनुसार रिज़र्वेशन विच्च 50 प्रतीशत रविदासिआं ते 50 प्रतीशत मजहबी बाल्मीकिआं दा सी। मजहबी बाल्मीकि योगता अनुसार न मिलण कारण कोटा पूरा करन लई रविदासिए भर्ती कर लए जांदे सन।(10)

दलित जातियों में जातिवाद के कारण अकसर रिजर्वेशन के नाम पर झगड़ा होता रहता है। लेखक के मुताबिक दलित जातियों में कोई फर्क नहीं होता और अगर फर्क है तो ये लोग एक दूसरे की जाति का प्रयोग करके रिजर्वेशन का लाभ लेने लग गए। आज का दलित वर्ग शिक्षा को लेकर काफी जागरूक हो चुका है। पढ़-लिख कर आज का दलित युवा हर क्षेत्र में आगे आ रहा है। गैर-दलित समाज के लोग इस बात को स्वीकार करने लगे हैं कि ये लोग अब अपनी अस्मिता को लेकर जागरूक हो चुके हैं। गैर-दलित जातियों का दलित जातियों के प्रति विचारात्मक परिवर्तन को *मरोड़* उपन्यास में दलित लेखक विपिन बिहारी ने गैर-दलित पात्र रिद्धि शर्मा के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> इनसे अच्छे तो वह है जिन्से हम लोग घृणा करते हैं, वे पढ़ रहे हैं और अर्जित भी कर रहे हैं। हम लोग बेकार में चिल्लाते हैं आरक्षण-आरक्षण। आज उनके बीच भी रोजगार का टोटा लगा हुआ है, इसलिए कि उनके बीच पढ़ने वाले अधिक हो गए हैं। देखा जाए तो उनके बीच कड़ी स्पर्द्धा हो गई है, यही हाल रहा तो एक दिन हम लोग भी हाशिए को लोग हो जाऐंगे और वे मुख्य धारा हो जाऐंगें। आज रिकशा खीचने वाला भी अपनी औलाद को अच्छे से अच्छे स्कूल में पढ़ाने की जुगत में है और यहाँ जो करेगा बाप ही करेगा।..........लेकिन अब समय बदल गया है जिनसें छीना झपटी करोंगे, वे भी ताकतवर हो गए हैं। मौका मिलेगा तो हाथ भी काट लेंगे।(130)

प्रस्तुत उपन्यास में गैर-दलित पात्र रिद्धि शर्मा अपने लड़कों को ऊँची शिक्षा न ग्रहण करने और बेरोजगार होने का ताअना देते हुए दलित जातियों के युवकों की तरह मेहनत करने के लिए प्रेरित करते हैं। दलित जातियों द्वारा समाज में जाति बदल कर रहने और छुप कर आरक्षण का प्रयोग करने की समस्या का वर्णन कैलाश चन्द्र चौहान ने *विद्रोह* उपन्यास में दलित पात्र राघवेंदर के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> स्नेहा मैंने कॉलेज में एस.सी. का सरटीफिकेट भी नही लगाया। जनरल कैटेगरी से दाखिला लिया। एस-सी सर्टीफिकेट पापा ने बनवा जरूर दिया, नौकरी में जरूरत पड़ गई तो आरक्षण के जरिए नौकरी तो मिल जाएगी.... "आरक्षण तो अम्बेड़कर साहब ने दिलावाया था, उसी के तुम लोग पीछे भागते हो।"(73)

जातिवादी ताअने से बचने के लिए यह लोग गाँव से आकर शहरों में अपनी जाति छुपा कर रहते हैं। प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने शहरों में दलित जाति के लोगों द्वारा जाति छुपा कर रहने परन्तु आरक्षण का लाभ लेने की समस्या को भी प्रस्तुत किया है

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में गैर-दलित तथा दलित लेखकों ने दलित जीवन के आरक्षण से जुड़े पक्षों को भी अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किया है। आरक्षण व्यवस्था से जुड़े पक्ष पर वंदनादेव शुक्ल ने *मगहर की सुबह* में, विपिन बिहारी *हमलावर* तथा कैलाशचन्द्र चौहान ने *विद्रोह* में, लेखक निंदर गिल्ल ने *पंडोरी प्रोहितां* उपन्यास में आरक्षण पर आधारित दलित जातियों के आपसी भेदभाव को प्रस्तुत किया है ।वहीं आरक्षण की सुविधा से दलित जातियों में परिवर्तन की स्थिति को विपिन बिहारी ने *हमलावर* तथा *मरोड़* में प्रस्तुत किया है।

इस प्रकार निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि दलित विमर्श के राजनीतिक पक्ष के अंतर्गत हिन्दी और पंजाबी दोनों भाषाओं के गैर-दलित तथा दलित उपन्यासकारों ने वर्तमान समय की राजनीतिक अव्यवस्था, प्रशासन के विभिन्न विभागों में फैले भ्रष्टाचार, अफसरशाही और दफतरशाही में व्याप्त भ्रष्टाचार से प्रभावित दलित समाज की स्थिति को प्रस्तुत किया है। दलित समुदाय की राजनीतिक जागरूकता को भी लेखकों ने प्रस्तुत किया है कि किस प्रकार दलित समुदाय को लोग अपने अधिकारों और हक्कों के प्रति जागरूक हो रहे हैं ।वह अब हाशिए से निकल कर केन्द्र में आने का प्रयास कर रहे हैं। दलित जातियों के सामाजिक विकास और उत्थान हेतु उन्हें मुख्य धारा से जोड़ने हेतु उन्हें अतिरिक्त सुविधाएँ दी जाती हैं, परन्तु वह सुविधाएँ केवल कागजों तक ही सीमित रह जाती हैं। अज्ञानता और अशिक्षा के कारण दलित समाज उन सुविधाओं का लाभ लेने में तो असमर्थ है ही, वहीं उन्हें राजनीति में व्याप्त विभिन्न प्रकार की समस्याओं का सामना भी करना पड़ता है और जो इन सुविधाओं का लाभ ले पाते हैं उन्हें भी जातिवादी और आरक्षण सम्बन्धी

ताअनों का सामना करना पड़ता है। सो इस प्रकार दलित समाज में राजनीतिक जीवन के विभिन्न आयाम है, जिनकों 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित लेखकों ने अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किया है।

अध्याय 4

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्शः एक तुलनात्मक अध्ययनःआर्थिक आयाम

जीवन में 'अर्थ' का सदैव महत्व रहा है। प्राचीन काल से ही प्रत्येक समाज में 'अर्थ' की प्रमुखता रही है। प्रत्येक युग का सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक जीवन 'अर्थ' से संचालित होता रहा है अर्थात 'अर्थ' जीवन की अनिवार्य आवश्यकता है। भारतीय समाज में 'अर्थ' का आधार वर्ण व्यवस्था को मानकर उसी आधार पर जीवन यापन करने के लिए कार्य का निर्धारण किया गया था ताकि जीवन को सुचारू ढंग से चलाया जा सके। भारतीय संस्कृति में जीवन के चार पुरषार्थों में भी 'अर्थ' को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। 'अर्थ' शब्द को परिभाषित करते हुए *राजपाल हिन्दी शब्दकोश* में हरदेव बाहरी ने 'अर्थ' शब्द से अभिप्राय काम, मामला, हेतु, धन, सम्पति से लिया है।(54) जो कि जीवन का आधार है। वर्तमान समय में 'अर्थ' के बिना समाज की सत्ता ही संभव नहीं है। इस 'अर्थ' प्रधान समाज व्यवस्था से ही वर्गों की उत्पति मानी जाती है। वर्गों की उत्पति सम्बन्धी कार्ल मार्क्स के विचारों को *श्री लाल शुक्ल कृत राग दरबारी का समाजशास्त्रीय अध्ययन* पुस्तक में जयप्रकाश कर्दम ने प्रस्तुत किया हैः

> प्रत्येक ऐतिहासिक युग में समाज के दो प्रमुख विभाग होते हैं जिनमें एक उत्पादन के साधनों का स्वामी है और दूसरा श्रम से निर्वाह करने पर विवश है। इस प्रकार सम्पूर्ण मानव इतिहास के दौरान समाज दो वर्गों में बंटा रहता है।(42)

इस सामाजिक विभाजन का आधार आर्थिक है। इसे हम शोषक और शोषित वर्ग की संज्ञा से भी अभिहित कर सकते हैं। भारतीय समाज में वर्गों का उदय प्राचीन भारतीय वर्ण व्यवस्था के कारण ही आस्तित्व में आया। वर्ण व्यवस्था के उदय सम्बन्धी अपने विचारों को गुलिस्तां रसीद ने *भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन* पुस्तक में प्रस्तुत किया हैः

> वर्गों के उदय का कारण आर्थिक है और वर्ण प्रायः वर्गों की सामाजिक संज्ञा है। वर्णों का आरम्भ पेशों अथवा कार्यों के आधार पर हुआ है। भारतीय वर्णों का आरम्भ कब और किन्न कारणों से हुआ यह बताना कठिन है, पर इसमें सन्देह नहीं कि इनके कारण भी सम्भवतः वह ही रहे होंगे, जो अन्य देशों में वर्गों के उदय और विकास के रहे हैं। इन कारणों में प्रमुख आर्थिक कारण रहे हैं। इस को स्वीकार करने में किसी को आपत्ति न होगी। इन विभिन्न वर्णों से विभिन्न वर्गों का उदय हुआ है। भारतीय समाज चार प्रमुख वर्णों के आधार पर ही वर्गों में विभक्त हुआ है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, ये सभी शास्त्रों द्वारा निर्दिष्ट निजी कार्यों में लीन रहते थे। ब्राह्मण अध्ययन कार्यों में लीन रहते थे। क्षत्रिय शास्त्र कार्यों में वैश्य व्यापार तथा शूद्र इन तीनों वर्णों की सेवा में व्यस्त रहते थे। कालान्तर में इसी से उच्च वर्ग, मध्य वर्ग और श्रमिक वर्ग की उत्पति हुई।(129)

इसी आधार पर समाज को तीन भागों में विभाजित किया गया है। उच्च वर्ग, मध्य वर्ग, और निम्न वर्ग। निम्न वर्ग श्रमिक वर्ग अर्थात दलित वर्ग। निम्न वर्ग आर्थिक तथा सामाजिक आधार पर पिछड़ा हुआ वर्ग है। जिसे दलित समाज भी क्हा जाता है। इस वर्ग का कार्य मेहनत मजदूरी करते हुए उच्च वर्ग की सेवा करना था। आर्थिक आभावों के कारण दलित वर्ग के लोगों का जीवन निम्न स्तर का होता गया। दिन रात मेहनत करने के बावजूद भी यह वर्ग अपने लिए दो वक्त का भर पेट भोजन भी नहीं जुटा पाता। वर्ण व्यवस्था के तहत दलित समाज को भारतीय समाज की श्रेणी में सबसे निचले पायदान पर रखा जाता है। जिसका आधार भारतीय समाज में जड़े गाड़ चुकी जाति व्यवस्था को माना जाता है। समाज में निम्न माना जाने वाला यह वर्ग आर्थिक विषमता का शिकार है और यदि दलित जीवन के आशयों पर ध्यान दिया जाए तो

आर्थिक विषमता का यह सच हमारे समक्ष आ खड़ा होता है। दलित वर्ग सुविधाओं के अभाव से ग्रस्त है और अपने वजूद की लड़ाई लड़ने के लिए लगातार प्रयासरत है। 21वीं सदी के चयनित रचनाकारों ने दलित समाज के आर्थिक जीवन से जुड़े विभिन्न आयाम जैसे अर्थाभाव अर्थात निर्धनता, आर्थिक शोषण, बेरोजगारी, महँगाई, ऋणग्रस्तता तथा दलित वर्ग में 'अर्थ' की समस्या तथा उससे प्रभावित दलित समाज की स्थिति और आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न दलित परिवारों की स्थिति में हुए विकास और परिवर्तन को प्रस्तुत किया है।

प्रस्तुत अध्याय में 21वीं सदी के दलित विमर्श तुलनात्मक अध्ययन के अंतर्गत हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित उपन्यासकारों की रचनाओं में पंजाब तथा भारत के अन्य क्षेत्रों में शहरी तथा ग्रामीण दलित जीवन के आर्थिक पक्ष से जुड़े विभिन्न बिन्दु जैसे अर्थाभाव अर्थात निर्धनता, बेरोजगारी, महँगाई तथा आर्थिक कारणों से प्रभावित दलित औरतों की स्थिति और संविधानिक प्रावधानों के पश्चात दलित जातियों की स्थिति तथा उसमें हुए विकास और परिवर्तन को तुलना का आधार बनाया गया है।

4.1 दलित समाज और अर्थाभाव

आधुनिक युग में औद्योगीकरण और पूँजीवाद के परिणाम स्वरूप 'अर्थ' प्रधानता के युग ने अर्थाभाव जैसी समस्या को पैदा किया जिसका प्रभाव समाज के सभी वर्गों पर पड़ा परन्तु सबसे ज्यादा प्रताड़ित निम्न वर्ग को होना पड़ा। समाज में 'अर्थ' के महत्व ने दलित समाज की आर्थिक समस्याओं को और भी बढ़ा दिया। दलित समाज का व्यकित अर्थाभाव के चलते अपने और अपने परिवार के लिए रोजी-रोटी जुटा पाने में भी असमर्थ दिखाई देता है। ग्रामीण दलित परिवारों में अर्थाभाव की

इसी समस्या को हिन्दी उपन्यास *मगहर की सुबह* में गैर-दलित लेखक वंदनादेव शुक्ल ने दलित पात्र मैना तथा उसके परिवार के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> मैना को मायके की याद आ गई। बापू खुद मुखतार थे और जितने सीधे और भौले-भाले, अम्मा उतनी ही समझदार औरत। पर दोनों में एक साम्यता थी, जब पूरे आदिवासी टौले के मां-बाप जो अपनी कम से कम आधा दर्जन संतानों को गरीबी के चलते बोझ समझते एक दूसरे को कोसा करते, अम्मा बापू अपनी पाँच बेटिओं पर जान छिड़कते थे। बस हथेली के बीच ही रख पाते अपनी लड़कियों को, बाकी गरीबी और अन्याय का तो कुछ नहीं बिगाड़ पाते थे वो। उन जैसे परिवार अधूरे पन के साथ पैदा होते हैं, आधी अधूरी जिंदगी जीते हैं और पूरा जी पाने की चाह लिए रूखसत हो जाते हैं।(24)

दलित परिवारों के मां बाप चाह कर भी अपने बच्चों को वो सुविधाएँ नहीं दे पाते जो वे देना चाहते हैं परन्तु इसके बावजूद भी उनके प्यार में कोई कमी नहीं होती। वह हर समय अपने परिवार और बच्चों पर जान न्यौछावर करने के लिए भी तैयार रहते हैं। इस प्रकार दलित परिवारों के अविभावक चाह कर भी अपने बच्चों के अच्छे भविष्य की कामना नहीं कर सकते। अर्थाभाव के कारण दलित समाज के लोग अपनी बुनियादी जरूरतें भी पूरी नहीं कर पाते और एक अच्छा जीवन जीने की चाह लिए ही इस दुनियां से रूखसत हो जाते हैं। जी तोड़ मेहनत मजदूरी करने के बावजूद भी ये लोग बड़ी मुश्किल से दो वक्त की रोटी का जुगाड़ कर पाते हैं और कभी–कभी तो वह भी नहीं। *दगैल* उपन्यास में गैर-दलित लेखक रूप सिंह चन्देल ने दलित युवती सुनीता और उसकी मां के माध्यम से दलित समाज में अर्थाभाव की समस्या को प्रस्तुत किया हैः

> सुनीता की माँ जानती थी कि जिस दिन पैसे समाप्त हो जाऐंगे वह सड़क पर होगी। उन्हीं दिनों सुनीता जन्मी थी। बच्ची के कुछ बड़े होते ही उसने शक्ति नगर में काम पकड़ लिया और उसके बाद वह उन घरों में ही काम कर रही थी।..लगभग बीस वर्षों से...सुनीता भी अकेली कमाती माँ की समस्या से पीड़ित थी।(99)

निर्धनता के कारण दलित औरतों को घर चलाने के लिए आर्थिक पक्ष से सम्पन्न स्वर्ण जाति के घरों में साफ-सफाई का कार्य भी करना पड़ता है, ताकि कुछ कमा सके और परिवार का भरण पोषण कर सके। ज्यादातर दलित जातियों के लोगों के पास जीवन यापन का अन्य विकल्प न होने के कारण ये लोग गंदगी के ढेर से प्लासटिक और अन्य टूट-फूट इक्टठी करके इसे कबाड़ी के पास बेच कर ही अपने लिए दो वक्त की रोटी का जुगाड़ कर पाते हैं। पंजाबी नावल *मुक्ति* में लेखक एस.एस कालड़ा ने शहरों में रहने वाले सैंसी दलित समाज में अर्थाभाव की समस्यां को कंती और उसकी बेटी लाडो के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> लाडो दी मां दे सलवार ते जेम्पर पाया होइया सी। जेम्पर खुल्ला सी मोढे उसदे लटकदे सन। इन्ज जापदा सी कि जीवें किसे भारी औरत ने उस नू आपणा कोई पुराणा सूट रब्ब तरसी या कम्म करवाऊण मगरों दित्ता होवे। पैरां विच्च उसदे कैंची शेप दीआं रबड़ दीआ चप्पला सन। चप्पल दी इक वद्धरी टूटी होई सी। उस नू बखसूए नाल जोड़ कम्म टपाऊ कीत्ता होइया सी। मावां धीआं तुरीआ जांदीआ सन। कोई गत्ता कोई पलास्टिक दी बोतल जां पलास्टिक दी कोई होर टूट्टी भज्जी चीज़ नज़र आऊदीं, तां औह चुक्क के बगली विच्च पाई जांदीआं।(9)

सैंसी दलित जाति की स्त्री कंती के पति बल्लू का देहांत हो जाने पर कंती और लाडो (मां- बेटी)अर्थाभाव के कारण अपने पेट को भरने के लिए कूड़े के ढेर से कागज, प्लास्टिक वगैरा इक्टठा करके बेचती हैं ताकि दो वक्त की रोटी का इंतजाम कर सके। अर्थाभाव की समस्यां से ग्रस्त दलित समाज के लोग इससे निपटने के लिए कई प्रकार के हथकंडे अपनाते हैं। दलित समाज के जो लोग शहरों में साफ सफाई का काम करते हैं, वह तनख्वाह कम होने के कारण तथा अर्थाभाव के चलते अपनी जान को जोखम में डाल कर कूड़े के ढेर पर काम करते हैं ताकि कूड़े से टूटा-फूटा सामान निकाल कर बेच सके। *भंवर* उपन्यास में लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने अर्थाभाव से प्रभावित दलित जाति के सफाई करने वाले कर्मचारियों की स्थिति को प्रस्तुत किया हैः

> कुछ कर्मचारी कूड़े दान पर अपनी डयूटी मोटी रिश्वत देकर लेते हैं। कूड़ेदान में से निकलने वाला कबाड़ आय का साधन है। कुछ कर्मचारी इन पर काम नहीं करते लेकिन इन कूड़ेदानों को बंगाल या बिहार से आए गरीब लोगों अथवा अपने समाज के इच्छुक व्यकितयों को ठेके पर दे देते हैं। इन गरीब लोगों को कूड़ेदान पर लगे कर्मचारियों को खर्चापानी देकर कुछ बच ही जाता है। जिससे शाम को इनके घर में चूल्हा जल सके और बच्चों का पेट भर सके।(46)

अर्थाभाव, कम तनख्वाह अथवा गरीबी के चलते कुछ सफाई कर्मचारी जान बूझ कर कूड़े के ढेर पर डयूटी लगवाते हैं और इसके लिए वे मोटी रकम भी अदा करते हैं ताकि तनख्वाह के अतिरिक्त धन कमा सके और अर्थाभाव की समस्यां से छुटकारा पा सके। अर्थाभाव/निर्धनता की समस्यां के चलते पंजाब के ग्रामीण क्षेत्र के लोग जो खेत खलियानों में काम करके अपने परिवारों का पालन पोषण करते थे अब विवाह शादियों में जाकर झूठे बर्तन साफ करने को विवश हैं, ताकि मजदूरी के साथ उन्हें दो वक्त का भोजन भी मिल जाए। पंजाबी नावल *परणेश्वरी* में दलित लेखक देशराज

काली ने पंजाब में दलित वर्ग में व्याप्त अर्थाभाव की समस्या को दलित पात्र रावल और बाडो के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> रावल ने झूठे भांडे संभाले, दो तीन चांभले मुण्डिया ने औहदे ते शराब दी तौंका दे दित्ता। औहनू कोफत आई साला हुण आही कम्म रह गया सी? औह बाडो वल्ल झाकिआ, जेहड़ा उसनू इस मैरिज पैलेस च बाहला सोखा कम्म कह के नाल लै आया सी। ते उत्तों लालच दित्ता सी बरातीआं वल्लों बधाई मिलण दा। रावल ने कदे इवें दा कम्म नहीं सी कीत्ता। औह ता दिहाड़ी दप्पा ही करदा सी।(65)

अर्थाभाव के कारण दलित परिवारों की स्थिति इतनी दयनीय है कि जी तोड़ मजदूरी करने के बाद भी कई बार तो उनके घरों में एक वक्त का खाना भी नहीं बनता, और ऐसी स्थिति में उन्हें आस पड़ोस से उधार लेकर ही गुजारा करना पड़ता है। पंजाबी उपन्यास *हनेरी रात दे जुगनू* में दलित लेखक अज़ीज सरोए ने पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता की समस्या से जूझते दलित परिवारों की दयनीय स्थिति को विसाखे और तेजों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> प्रताप दे बापू, घर आटा नीं। तेजों ने भड़ौली विच्च हत्थ मारिया। आटे वाली भड़ौली खाली पई सी। मंग लिआ किसे दिओं। “मै तैनू केहा सी बई वाढी आली चक्क लिआऊँदां।” औह ता अजै वंडी नी हरपाल ने। विसाखे दे कहण ते तेजो कौला चुक्क के आंढ-गुआंढ विच्च आटा मंगण चली गई। ए कर प्रताप दे बापू तू कुंडी च दो कु मिर्चा ही रगड़ लै। विच्च दो कु गंडे कट्ट लई। दाल भाजी ता कोई बणाई नी। “चल आपा तां भागवाने रूखी मिस्सी खा के गुजारा करन वाले आ।” (52)

दलित समाज के लोग बेशक अर्थाभाव अर्थात गरीबी जैसी भयंकर बीमारी का शिकार हैं, परन्तु इसके बावजूद भी ये लोग किसी से सहायता के रूप में भीख लेना अपने स्वाभिमान के खिलाफ समझते हैं और अपने बच्चों को भी मेहनत-मजदूरी करके पेट भरने की सीख देते हैं। पंजाबी नावल *मुक्ति* में एस.एस कालड़ा ने दलित वर्ग की बच्ची लाडो द्वारा भीख स्वरूप मिलने वाले खाने को लेने से मना करके स्वाभिमान के लिए लड़ते दलित समाज में परिवर्तन की स्थिति को प्रस्तुत किया हैः

> जिन्दगी कदे ठहरदी नहीं। पेट दी अग्ग बुझाऊण लई निरंतर कम्म करना पैंदा है। इक्क दिन मावां धीआं गंगा दे किनारे खाली बोतला जां होर फालतू चीज़ा जेहड़ीआं कबाड़ विच्च विक्क जांदीआ सन चुग्ग रहीआ सन। कुड़ी थोड़ी जिही अग्गे अतै मां पीछे सी। दो आदमी डुनिआं विच्च खीर पा नाल दो दो पूड़ीआं वंड रहे सन। जदों औह लाडो नू फड़ाऊण लग्गे तां उसने नांह कर दित्ती। इक्क आदमी ने पुच्छिआं, “बेटा, की गल्ल है? क्यूं नहीं खीर लैणी? मेरी मम्मी कहिंदी ए इह उन्नां वासते हुन्दी है जिहड़े कम्म नहीं कर सकदे। जिन्नां दे हत्थ पैर जां अक्खां नहीं हुन्दीआं रब ने सानू दो–दो हत्थ पैर दित्ते हन। ढिड्ड इक दित्ता है खाण नू, तां जो असी कमा के आप वी खाइए ते बजुर्गां ते बच्चिआं नू वी खवाईये” लाडो ने अपणी मम्मी दी गल्ल दोहराऊण दी कोशिश कीत्ती ।(92)

अर्थाभाव की समस्या से जूझती दलित परिवार की बच्ची लाडो भीख स्वरूप मिलने वाले खाने को लेने से इनकार कर देती है, बेशक दलित समाज के लोग निर्धन होते हैं परन्तु फिर भी मेहनत मजदूरी करके अपना पेट भरने में यकीन रखते हैं और अपने बच्चों को भी बचपन से ही मेहनत करने की सीख देते हैं। लेखक एस.एस.कालड़ा ने

मुक्ति उपन्यास में दलित जातियों में परिवर्तन की स्थिति को प्रस्तुत किया है जिसमें दलित पात्र कंती अपनी बेटी लाडो को मांग कर न खाने की बजाए, मेहनत करने के लिए प्रेरित करती हैः

> मेहनत मजदूरी करके अद्धी खाद्धी मंग के पूरी खाण नालो कित्ते चंगी है। औह अद्धी इज्जत माण दी तुहाडी आपणी कमाई दी होवेगी। औह तुहानू खुशी वी देवेगी। तुहाड़े ते चाहे जिनीआं वी मुसीबतां आऊण, किन्ने वी बुरे दिन होण, मेहनत मजदूरी करदे रहो। प्रमात्मा ने चाहिआं तां अग्गे वद्द जाऊंगें।(56)

वर्तमान समय में दलित समाज की स्थिति में परिवर्तन आने से दलित समाज में कुछ जातियाँ आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हो रही हैं परन्तु कुछ दलित जातियों के आर्थिक हालात अभी भी बहुत ज्यादा खराब हैं। *हमलावर* उपन्यास में विपिन बिहारी ने ग्रामीण दलित समाज के लोगों में अर्थाभाव की समस्या को दलित जातियों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> आर्थिक रूप से दुसांधों में थोड़ी सम्पन्नता थी लेकिन सबसे खराब हालत थी तो चमारों की। बस, जी खा रहे थे किसी तरह। न खेती न बन-मजूरी। शादी ब्याह के मौके पर ढोल बजाना, मरी उठाना, जच्चगी कमाना और..हां इधर थोड़ा सुधार देखा जा रहा है। मुंशी और बिलास को रिकशा मिल गया था। और टोले में जब से ट्रैक्टर ड्राइवर पैदा हो गए है। उन्हें आमदनी होने लगी थी।(16)

दलित समाज के लोग कीर्ति अर्थात मजदूर परिवारों से होने के कारण कभी मेहनत से दिल नहीं चुराते और इनकी मेहनत के परिणाम से ही अब इन परिवारों की स्थिति में सुधार अथवा परिवर्तन हुआ है। पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में दलित परिवारों

की स्थिति में हुए सुधार और परिवर्तन को नावल *हनेरी रात दे जुगनू* में लेखक अज़ीज सरोए ने प्रस्तुत किया हैः

> विहड़े विच्च हुण सारे घर गरीब नहीं सी रहे। बहुते घर मेहनत मुशक्त करके गरीबी विच्चों निकल गए सन। उन्नां ने चंगे मकान उसार लए सन। दो चार मुण्डे फौज विच्च वी अड़ गए सन। इहनां घरां विच्चों ही इक्क सरदा पुरदा घर सी। उसदे बापू होरी दो भरा सन रब्बों अतै दौलत राम।(49)

इन परिवारों के बच्चे आर्थिक तंगी के चलते अपनी शिक्षा का खर्च स्वयं उठाते हैं और मेहनत मजदूरी करके अपनी फीस और किताबों के पैसे इक्टठे करते हैं अर्थात वर्तमान समय में दलित समाज के लोग शिक्षा के प्रति जागृत हो गए हैं। उपन्यास *हनेरी रात दे जुगनू* में लेखक अज़ीज सरोए ने दलित समाज के बच्चों को दिहाड़ी मजदूरी करके शिक्षा ग्रहण करने के लिए प्रयासरत्त दिखाया हैः

> बल्लिया चुग्ग के फीस जोगे पैसे ता प्रताप ने जोड़ लए सन। नौवी पास करन तो बाद अज्ज औह पहले दिन स्कूल जा रिहा सी। सारा अप्रैल ता उस ने वाढ़ी दी ऋतु विच्च ही लंघा दित्ता...उस कौल वर्दी नहीं सी। दो चार सूट जिहड़े सन औह वी हाड़ी विच्च फट्ट गए(24)

आलोच्य उपन्यास में दलित पात्र प्रताप दिहाड़ी मजदूरी करके न केवल अपनी फीस और किताबों के पैसे इक्टठे करता है बल्कि वर्दी न होने पर भी वह स्कूल जाने की बजाए खेतों में दिहाड़ी करने जाता है ताकि वर्दी के लिए पैसे इकट्ठे कर सके। क्योंकि आर्थिक अभावग्रस्तता के चलते इनके पास इसके सिवाय अन्य कोई विकल्प नहीं होताः

> वर्दी न होण कारण प्रताप स्कूलों रह गया सी उस ने सोचिआं क्यू न किसे दे दिहाड़ी ते नर्मा गुडण ही चला जावा। कोई चाली पंजाह ता दिहाड़ी दे बणनगे। जिन्ना नाल फीस ते कापिआ दा कोई जुगाड़ बणेगा।(67)

बेशक दलित समाज के लोगों को निर्धनता के कारण अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है परन्तु फिर भी ये लोग मेहनत मजदूरी करना अपना कर्म समझते हैं और दिहाड़ी मजदूरी करके अपनी छोटी बड़ी जरूरतों को पूरा करते हैं। निर्धनता और गरीबी के बावजूद भी ये लोग अपने बच्चों को मेहनत से पढ़ाई करने के लिए प्रेरित करते हैं ताकि उनका भविष्य उज्ज्वल हो सके और उनकी स्थिति में सुधार आ सके। दलित समाज का व्यकित पढ़ाई करता है तो उसे शिक्षा के क्षेत्र में कई प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिनमें अर्थाभाव प्रमुख है। पंजाबी उपन्यास *हनेरी रात दे जुगनू* में दलित लेखक अज़ीज सरोए ने अर्थाभाव से प्रभावित दलित पात्र विसाखे के माध्यम से अपने बच्चों को मुश्किल परिस्थितियों का सामना करने के लिए प्रेरित करते हुए दिखाया है:

> औए कुछ नी हुन्दां। भीड़ा संगीड़ा चलदीआं रहिंदीआं ने, विसाखे ने पाली दी पिट्ठ धापड़ दिआं उस नू होंसला दित्ता।....प्रताप पढ़दे कि न, "पढ़दा तां वद्धीआं, पर किताबां कापीआं नी पूरीआ हुन्दीआं।" की करिए पुत्त। असीं तां ओखे सोखे हो के पढ़ाई जाने आं बाकी थोडे कर्म थोडे नाल ने।(53)

इक्कीसवीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श के आर्थिक पक्ष से जुड़ी दलित जातियों में अर्थाभाव की स्थिति को हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित

तथा दलित उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में प्रस्तुत किया है जिसकी तुलना करते हुए क्हा जा सकता है कि दलित समाज में अर्थाभाव की समस्या से प्रभावित दलित समाज की दयनीय स्थिति को हिन्दी उपन्यास *मगहर की सुबह* में वंदनादेव शुक्ल, तथा *भंवर* में कैलाश चन्द्र चौहान ने प्रस्तुत किया है। वहीं पंजाबी उपन्यास *मुक्ति* में एस.एस.कालड़ा ने,*पंडोरी प्रोहितां* में निंदर गिल्ल ने,*परणेश्वरी* उपन्यास में देशराज काली, अज़ीज सरोए ने *हनेरी रात दे जुगनू* उपन्यास में अर्थाभाव की समस्या पर प्रकाश डाला है। दलित समाज में आर्थिक पक्ष से हुए थोड़े-बहुत सुधार तथा परिवर्तन की स्थिति को एस.एस कालड़ा ने *मुक्ति* तथा अज़ीज सरोए ने *हनेरी रात दे जुगनू* तथा विपिन बिहारी ने *हमलावर, मरोड़* उपन्यास में प्रस्तुत किया है कि अर्थाभाव की समस्या से मुक्ति पाने हेतु दलित समाज के लोग मेहनत मजदूरी करके अपने परिवार की स्थिति में सुधार लाने के लिए लगातार प्रयास रत्त है।

4.2 महँगाई से प्रभावित दलित समाज

महँगाई का अर्थ होता है वस्तुओं की कीमत में वृद्धि होना। महँगाई एक ऐसा कारक है जिसकी वजह से देश की अर्थ व्यवस्था में उतार चढ़ाव आते हैं और आवश्यकता की वस्तुओं का मूल्य कई गुना बढ़ जाता है। जिसका प्रभाव समाज के प्रत्येक वर्ग पर पड़ता है, परन्तु इसकी सबसे ज्यादा मार निम्न वर्ग को ही झेलनी पड़ती है। प्रस्तुत विमर्श के अंतर्गत हिन्दी और पंजाबी के चयनित उपन्यासकारों ने महँगाई की मार को झेलते दलित परिवारों की स्थिति को प्रस्तुत किया है। *तर्पण* उपन्यास में शिवमूर्ति ने ग्रामीण दलित परिवारों पर पड़ने वाली महँगाई की मार का वर्णन प्रस्तुत किया हैः

> गाँव का बनिया भी लूट लेने पर उतारू है। बाजार में चार रुपए किलो धान बिक्क रहा है और यह तीन रूपए से आगे बढ़ने की कसम खाकर

> आया था। शहर पहुँचकर इसी धान का चावल बीस रुपए बिकने लगता है। क्या पता क्या होने वाला है। अपना दिमाग एकदम काम नहीं कर रहा। (78)

वर्तमान समय में महँगाई की मार से समाज का प्रत्येक वर्ग प्रभावित है। अर्थाभाव की समस्या से जूझते दलित परिवारों में महँगाई के कारण घरों में खाने के लाले पड़ गए हैं। पंजाब में दलित ग्रामीण समाज के जीवन पर पड़ने वाली महँगाई की मार को पंजाबी उपन्यास *सलफास* में रामस्वरूप अणखी ने करतार सिंह की पत्नी के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> मगाँईयाँ ने मार लए। समें माड़े आ गए। कदे दो-दो पंसेरीआं घरे ई बल्हणीआं विच्च पिआ रहिंदा सी। हुण इक मैस दा दुद्ध है, टब्बर विच्च ही वंडिया जांदा। सारा दिन चाहा ना मुक्दीआं। हुण तां खट्टी लस्सी नू तरस्दे, तेरे साह्मणे आ। बाहला की आखणा। देसी घिओ कित्थों जुड़ना सी। पंजीरिआं ता बस लोकों लज्जों ने। मूल्ल दे घिओ दीआ काहदीआं पंजीरिआं। (384)

बेशक दलित समाज के लोग अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए जी तोड़ मेहनत करने का प्रयास करते हैं लेकिन महँगाई के चलते भविष्य के लिए कुछ निधि संजों कर नहीं रख पाते। महँगाई के कारण इनकी रोजाना की दाल रोटी ही चलती है। महँगाई की मार को झेलते ग्रामीण दलित परिवारों की स्थिति को दलित लेखक विपिन बिहारी ने *हमलावर* उपन्यास में दलित पात्र मुनारीक और देवगिरत के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> मुनारीक और देवगिरत ट्रैकटर ड्राइवर बन गए थे। मुनारीक गाँव के ही जगदा बाबू का ट्रैक्टर हांकता था और देवगिरत लोदीपुर का। दोनों

> ही नहीं पढ़ पाए थें लेकिन बनिहारी उन्हें भी अच्छी नहीं लगती थी। सो ड्राइवर बन गए और अब तो वे अच्छा कमा लेते थे। जमा तो नहीं कर पाते थे, लेकिन दाल-रोटी अच्छी निभ(चल) रही थी।(15)

वर्तमान समय में महँगाई के प्रभाव के कारण जरूरत की हर वस्तु का दाम दो गुना ज्यादा हो गया है जिसके चलते निर्धन दलित परिवारों द्वारा अपने घरों का गुजारा चलाना और भी मुश्किल हो गया है। इस प्रकार महँगाई का प्रभाव जीवन के हर क्षेत्र में देखने को मिलता है।

इक्कीसवीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श के अंतर्गत आर्थिक आयाम से जुड़े बिन्दु महँगाई से प्रभावित दलित जीवन की तुलना करते हुए क्हा जा सकता है कि हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित लेखकों में शिवमूर्ति ने *तर्पण* में, रामस्वरूप अणखी ने *सलफास* में, विपिन बिहारी ने *हमलावर* इत्यादि उपन्यासों में दलित समाज में व्याप्त महँगाई की समस्या को प्रस्तुत किया है। गैर-दलित लेखक रूपसिंह चन्देल ने *दगैल* और *कानपुर टू कालापानी में,* गैर दलित लेखक वंदना देव शुक्ल *ने मगहर की सुबह,* दलित लेखक कैलाशचन्द्र ने *भंवर और विद्रोह* में, तथा विपिन बिहारी ने *मरोड़* उपन्यास में दलित लेखक अज़ीज सरोए ने *हनेरी रात दे जुगनू और केही वगै हवा* में महँगाई की समस्या से प्रभावित दलित परिवारों की स्थिति का वर्णन कम ही किया है।

4.3 दलित समाज और बेरोजगारी

जीवन के विभिन्न स्तरों में बेरोजगारी एक रूढ़ परम्परा बनती जा रही है। जिस कारण सामान्य जन को रोजी-रोटी की समस्या से जूझना पड़ रहा है। समृद्ध वर्ग आजीविका देने के बदले इस वर्ग का रक्त ही नहीं पीता, अपितु इनके शोषण के लिए नए-नए ढंगों को भी ढूढ़ता है। बेरोजगारी से ग्रस्त निम्न वर्ग की चिंताओं का

कारण इनकी बिगड़ती आर्थिक स्थिति है। जिसके कारण इनके जीवन में असंतोष, निराशा, अनैतिकता आदि ने अपना स्थान बना लिया है। प्रस्तुत उपन्यास *मगहर की सुबह* में वंदनादेव शुक्ल ने शहरों में दलित मजदूर परिवारों के रोजगार बंद हो जाने से बेरोजगार निर्धन दलित परिवारों की दयनीय स्थिति को दलित फैक्टरी मजदूरों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> मजदूर आशा निराशा के झूले में झूल रहे थे और अपने बच्चों को भूख से तड़पता बीमार देख खून का घूट पीकर बस आने वाले निर्णय का इंतजार कर रहे थे कि तभी श्रमिक निवास के एक बजुर्ग मशीनमैन हर दयाल कुर्मी ने फांसी लगाकर आत्म हत्या कर ली.....ये वही काका हरदयाल थे जिन की पीढ़ियां इस मिल्ल में अपनी ऊर्जा झोंक चुकी थी।(48)

इस प्रकार बेरोजगार हो जाने के कारण और दलित मजदूरों के पास जीवन यापन करने का कोई साधन न होने के कारण यह लोग आत्महत्या करने के लिए विविश हो जाते हैं। शहरी दलित समाज का व्यकित मिल्ल-कारखानों फैक्टरी इत्यादि में कार्य करके अपनी आजीविका कमाता है, परन्तु उनका ये रोजगार भी स्थायी नहीं होता। उन्हें किसी भी समय इन मजदूरों को बगैर बताए नौकरी से निकाल दिया जाता है। बेरोजगारी और आर्थिक तंगी की मार झेलते दलित समुदाय के लोगों के पास आत्म हत्या के इलावा कोई और रास्ता नज़र नहीं आता। दलित समाज में बेरोजगारी की मार को झेलते दलित परिवारों की स्थिति को वंदना देव शुक्ल ने *मगहर की सुबह* उपन्यास में फैक्टरी मजदूरों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> दो चार और मजदूरों ने आर्थिक तंगी से परेशान होकर आत्महत्या कर ली थी। अमानवता और अराजकता के इस तांडव ने राष्ट्रीय खबर की

> शकल अखितयार कर ली और मजदूरों की आत्महत्या और मिल मालिकों की बर्बरता व अन्याय की केन्द्र तक सुगबुगाहट शूरू हो गई। संसद में विरोधी पार्टी द्वारा इस मुद्दे को उठाया गया। टी.वी.पर ये मुख्य खबरों मे दिखाई जाने लगी। क्षेत्रीय से लेकर राष्ट्रीय खबर तक....पर मुद्दे कितने ही बड़े और गंभीर क्यों न हो उनकी उम्र छोटी ही होती है ।(52)

बेरोजगारी के चलते और कोई अन्य विकल्प न होने के कारण यह लोग अपने परिवार का खर्च चलाने के लिए चोरी चकारी इत्यादि भी करते हैं। निम्न वर्गीय दलितों के द्वारा इस प्रकार के कार्य करने का एक बड़ा कारण बेरोजगारी और निर्धनता है क्योंकि बेरोजगारी के कारण घर गृहस्थी चलाने के लिए आर्थिक तंगी के चलते भी यह लोग अपराध करने के लिए मजबूर हो जाते हैं। बेरोजगारी के कारण आर्थिक तंगी से प्रभावित अपराध करने को विवश दलित समाज की स्थिति को वंदना देव शुक्ल ने *मगहर की सुबह* उपन्यास में प्रस्तुत किया हैः

> सच्च तो ये था कि मालिक का अब कोई इंटरेस्ट ही नहीं रह गया था उसी की बसाई इस नगरी में। वो खुद तो सपरिवार कलकता में रहते थे उनके भरोसे मंद मुलाजिम, पुलिस अफसर और वकील यहाँ तैनात थे ही। हरी भरी खुशहाल ये अस्सी साल पुरानी औद्योगिक नगरी बर्बाद हो चुकी थी। आतंक और अमानवता अपना रौद्र रूप दिखा अब थक चुके थे गोया। विवश मजदूरों और कुछेक लोगों के रहने के बावजूद मरघट का सन्नाटा पसरा रहता। छोटी बड़ी घटनाएँ आम हो गई। बाकी शहर के लोगों ने इस इलाके में से गुजरने वाले अपने रास्ते बदल लिए। इतिहास साक्षी है कि जब तक इस तरह की विध्वंसकारी स्थितियां पैदा हो जाती हैं तो अराजकता अपने चरम पर मुखरित

> होती है। बेरोजगारी के चलते चोरी-चकारी का सम्राज्य पसरने लगा था। कोई सुरक्षा नहीं रह गई थी जानमाल की (53)

ग्रामीण क्षेत्रों में दलित समाज के लोग अनेक प्रकार के छोटे-मोटे कार्य करके अपना जीवन यापन करते हैं जैसे मरे हुए जानवरों की खाल निकालना, इट्टों के भट्ठे पर मजदूरी करना और उच्च जातियों के जिन घरों में कच्चे संडास हैं उनकी साफ-सफाई करना। जिसका मूल कारण बेरोजगारी और अर्थाभाव की समस्या है। बेरोजगारी के कारण दलित परिवारों के लोगों द्वारा घृणित कार्य करने की विवशता को वंदनादेव शुक्ल ने *मगहर की सुबह* उपन्यास में गाँव की दलित जातियों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> दलित टोले में बरेठां, भंगी, कोरी, मुरही, चमार, किरात, बरेही, गडरिया आदि छोटी जात के लोग रहते थे जो बूट पालिश, मजूरी, ईट के भट्टे के लिए मिट्टी 'काटना' मरे हुए जानवरों की खाल निकालकर जूते बनाना, बड़े टोले, के जिन घरों में कच्चे संड़ास थे उनकी सफाई करना जैसे काम करके अपने परिवार का भरण पोषण करते हैं। गाँव के खेतों में ज्यादातर बाजरा गेहूं दाल तिलहन की पैदावार होती थी। उनमें मजदूरी करने दलित टोले के स्त्री पुरूष आते थे।(86)

वर्तमान समय में बेरोजगारी के कारण देश का युवा वर्ग सबसे अधिक भ्रमित और असमंजस की स्थिति से गुजर रहा है। बेरोजगारी की समस्या से सबसे ज्यादा प्रभावित युवा वर्ग है जो बदलती परिस्थितियों में अपने आप को असहाय महसूस कर रहा है। शहरों तथा ग्रामीण दलित समाज के ज्यादातर बच्चे तो अर्थाभाव के कारण पढ़-लिख नहीं पाते और जो मुश्किल से पढ़-लिख भी जाते हैं उनके पास बेरोजगारी के कारण सफाई विभाग में कार्य करने के सिवा अन्य विकल्प नहीं है। बेरोजगारी के

कारण दलित समाज के पढ़े-लिखे दलित युवाओं द्वारा साफ-सफाई का कार्य करने की विवशता को *भंवर* उपन्यास में दलित लेखक कैलाशचन्द ने दलित पात्र लोकेश के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> हालांकि लोकेश के पिता ने उस पर बहूत जोर लगाया कि वह कुछ न सही सफाई कर्मचारी की नौकरी कर ले। जब भी कहीं सफाई कर्मचारियों की भर्ती निकलती उस पर यह दबाव कई गुना बढ़ जाता। कहते कुछ दिन यह काम करना पड़ेगा, उसके बाद किसी से कहकर ऑफिस में कलर्क का काम करने लगेगा। पद सफाई कर्मचारी का ही रहेगा। कुछ दिन बाद प्रमोशन भी हो सकती है।(99)

दलित समाज का शिक्षित युवा वर्ग बेरोजगारी के चलते सफाई विभाग में नौकरी करने के लिए विवश है ताकि घर का गुजारा चला सके। बेरोजगारी और निर्धनता के कारण ग्रामीण दलित परिवार अपने घर-बार तक को छोड़ने के लिए विवश हैं। निम्न वर्गीय श्रमिक जीवन यापन करने के लिए घर से दूर अर्थात किसी अन्य शहर में जाकर अपनी जान को जोखम में डाल कर हर प्रकार का कार्य करते हैं क्योंकि इन्हें ग्रामीण क्षेत्रों में खेत खलियानों में दिहाड़ी-मजदूरी का कहीं काम नहीं मिलता। बेरोजगारी के कारण शहरी क्षेत्रों की तरफ पलायन करते दलित समाज की पीड़ा को विपिन बिहारी ने *हमलावर* उपन्यास में दलित पात्र नथुन के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> क्हां चले गए थे नथुन भाय, महतारी रोज कलपती थी। एक पत्री ही भिजवा देते कम से कम महतारी के कलेजे को ठंडक तो मिलती, सुराज था टोले का। हँसने लगा था नथुन। फिर सुनाने लगा था अपनी संघर्ष कथा कि वह घर से भागा तो यही सोचकर कि कही फटदनी काम

> मिल जाएगा लेकिन भागने पर पता चला कि आसान नहीं है काम पाना लेकिन पेट चलाना था सो एक ट्रक पर खलास गिरी करने लगा। कुछ महीने ट्रक पर रहा वह। ट्रक की मार्फत ही वह कोयलरी पहुँचा। बड़ी चिरौरी-बिनती के बाद एक साहब ने उसे झोरा ढोने के लिए रख लिया।(13)

सरकार द्वारा समय-समय पर गरीब दलित वर्ग को कई प्रकार की सुविधाएँ दी जाती हैं ताकि इस वर्ग का आर्थिक विकास हो सके परन्तु अशिक्षा तथा अत्यधिक शारीरिक कमजोरी के कारण दलित वर्ग के कुछ लोग इन सुविधाओं का लाभ लेने में असमर्थ दिखाई पड़ते हैं। *हमलावर* उपन्यास में विपिन बिहारी ने ग्रामीण क्षेत्रों में सरकार द्वारा दी जाने वाली इन सुविधाओं का वर्णन दलित पात्र नेम और नारायण के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> सरकारी रोजगार के नाम पर नेम और नारायण को रिकशे मिले थे लेकिन यह एक कठिन रोजगार था। दिन भर रिकशा हाँकते और रात को दम भर शराब पीते। आधी कमाई तो शराब में ही उड़ा देते। नेम और नारायण का कहना था कि “देह टूटती है, न पीऊँ तो नींद नहीं आती। घोड़ावाला काम है रिकशा टकना।(15)

बेरोजगारी की समस्या के चलते सरकार द्वारा रोजगार के नाम पर गरीब दलित वर्ग के लोगों को रिकशे दिए गए थे ताकि ये लोग स्वयं आश्रित हो सके, लेकिन निर्धनता के कारण अच्छी खुराक न मिलने के कारण ये लोग इस कार्य को करने में असमर्थ है और अगर मुश्किल से किसी प्रकार करते भी हैं तो शारीरिक थकावट कम करने के लिए व्यसन का सहारा लेना पड़ता है। पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में दलित वर्गों में

बेरोजगारी की स्थिति का वर्णन पंजाबी दलित लेखक अज़ीज सरोए ने उपन्यास *केही वगै हवा* में ग्रामीण दलित परिवारों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> वाडी दा कम्म पूरे जोर–शोर नाल शुरू हो गया सी। ऐतकी (इसबार) हत्थ कटाई दा कम्म घट्ट है। बहुते जमींदारा ने कणका दी कटाई कम्बाईना नाल करवा लई। जसवंत ने वेखिआ, ‘चौकड़ी’ ते कम्म दी तालाश ‘च’ कट्ठे होए दिहाडिए अपणीआं तकलीफां सांझीआं कर रहे सन।.....इकट्ठे होए दिहाड़िए अजे वी आपणा दुखड़ा रो रहे सी।....गरीब गुरबा पशू डंगर कित्थे रख लू। आंवदा(अपणा) टिड्डु(पेट) ता भरिया नी जांदा। (44)

फसलों की कटाई के लिए मशीने के आ जाने से दलित वर्ग का एक बड़ा हिस्सा जो खेतों खलियानों में काम करके जीवन यापन करता था, अब बेरोजगार हो गया है और अशिक्षा के कारण कोई और अन्य कार्य करने में भी असमर्थ है। पंजाबी उपन्यास *परणेश्वरी* में दलित लेखक देशराज काली ने पंजाब के शहरी क्षेत्रों में दलित वर्ग के पढ़े-लिखे युवा वर्ग में बेरोजगारी की समस्या को दलित पात्र नंजू और उसके पुत्र पाड़े के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> हर रोज वांग किसे पासे नौकरी दी तालाश ‘च’ साईकिल चुक्क निकलण लग्गे पाड़े नू नंजू ने आवाज मार लई। “यार, तैनु हालात ता पता ई ने फेर वी संभल के रिहा करों। जे बहूती नहीं ता किसे बड़े वकील नाल मुःशी पुणा कर लै। जद तक्क नौकरी नहीं मिलदी उदों तक ही सही। मैं तैनु दिहाड़ी ते ता भेजदा नहीं।(23)

अर्थात पढ़ने लिखने के बाद भी अन्य वर्गों की तरह ही दलित वर्ग भी रोजगार के लिए दर-ब-दर भटकता है, परन्तु फिर भी नौकरी नहीं मिलती। इस प्रकार पढ़े-लिखे

दलित समाज की स्थिति और भी तरस योग्य है। जहाँ हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित लेखकों ने दलित समाज के शिक्षित और अशिक्षित वर्ग में बेरोजगारी की समस्या को प्रस्तुत किया है वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले दलित वर्ग के शिक्षित युवाओं की सोच में रोजगार के प्रति आए परिवर्तन को कैलाश चन्द्र चौहान ने *भंवर* उपन्यास में दलित पात्र लोकेश के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> लोकेश को इसके विपरीत परिणाम भी पता थे। उन्हें पता था कि उनके ऊपर के ऑफिसर कलर्की का ढेर सारा काम करवाते हैं, ऊपरी कमाई भी करवाते हैं न करो तो हमेशा धमकी सिर पर स्वार रहती है कि दोबारा से ही झाड़ू हाथ में पकड़वा दूँगां, “बापू चाहे कुछ हो जाए मैं सफाई की नौकरी तो करूगां ही नहीं। (99)

इस प्रकार दलित समाज के युवा वर्ग में शिक्षित होकर समाज में रोजगार के प्रति चेतना का विकास हो रहा है। ये लोग अब पढ़-लिख कर पिता पुरखी काम न करके समाज में अपनी छवि बदलने के लिए लगातार प्रयासरत्त है।

इक्कीसवीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श तुलनात्मक अध्ययन के आर्थिक पक्ष से जुड़े बिन्दु बेरोजगारी के अंतर्गत देखा गया है कि गैर-दलित तथा दलित साहित्यकारों ने प्रस्तुत उपन्यासों में बेरोजगारी की समस्या को काफी विकराल रूप को प्रस्तुत किया है। दलित समाज चाहे ग्रामीण हो या फिर शहरी, पंजाब जा फिर भारत का कोई अन्य क्षेत्र, बेरोजगारी की समस्या से सभी को दो चार होना पड़ रहा है। दलित लेखक कैलाश चन्द्र चौहान ने भी *भंवर* उपन्यास में दलित समाज में व्याप्त बेरोजगारी की समस्या का चित्रण दलित पात्र लोकेश के माध्यम से प्रस्तुत किया है। *हमलावर* उपन्यास में दलित लेखक विपिन बिहारी ने बेरोजगारी की समस्या से प्रभावित दलित समाज की स्थिति का वर्णन किया है।

पंजाब में दलित जातियों में बेरोजगारी की स्थिति का वर्णन दलित लेखक अज़ीज सरोए ने *केही वगै हवा* तथा देशराजकाली ने *परणेश्वरी* उपन्यास में किया गया है। लेखक कैलाश चन्द्र चौहान ने *भंवर* उपन्यास में बेरोजगारी के चलते सफाई कर्मचारी के पद पर कार्य करने से मना करना, दलित जातियों में हुए विकास और परिवर्तन की तरफ संकेत करता है। शिवमूर्ति ने *तर्पण* में, रूप सिंह चन्देल ने *दगैल* तथा *कानपूर टू कालापानी* में, रामस्वरूप अणखी ने *सलफास* और बलदेव सिंह ने *अन्नदाता* उपन्यास में दलित समाज में व्याप्त बेरोजगारी की समस्या पर कम चर्चा की है ।

4.4 आर्थिक शोषण से प्रभावित

दलित समाज सदियों से आर्थिक शोषण से प्रभावित रहा है जिसका एक बड़ा कारण दलित समाज में निर्धनता की समस्या है। आर्थिक शोषण के कई रूप हो सकते हैं जैसेः उचित श्रम न मिलना, मेहनत का कम मूल्य मिलना, या फिर मजदूरी में कटौती करना, सरकार द्वारा निर्धारित मूल्य के अनुसार दिहाड़ी न देना इत्यादि। भारतीय संविधान में आर्थिक शोषण को रोकने के लिए अनेक प्रविधान किए गए हैं।

जे.बी सिन्हां की पुस्तक *सामाजिक न्याय एवं दलितोत्थान की योजनाएँ* में दलित जातियों को आर्थिक शोषण से मुक्त करने के लिए भारतीय संविधान के अनुच्छेद 18 को परिभाषित करते हुए क्हा गया है किः

> सभी नागरिकों को वाक् स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य, शांतिपूर्ण और निरापध सम्मेलन का संगम या संघ बनाने का, भारत के राज्य क्षेत्र में अवाध विचरण का और भारत के किसी भाग में निवास करने बस जाने तथा कोई वृति, उपजीविका या कारोबार करने का अधिकार होगा।(34)

इसी प्रकार भारतीय संविधान के अनुच्छेद 23 के अनुसारः

> मानव का दुर्व्यहार और बेगार तथा इसी प्रकार का अन्य जबरदस्ती किया जाने वाला श्रम प्रतिषिद्ध किया जाता है और इस उपबन्ध का कोई भी उल्लघंन अपराध होगा जो विधि के अनुसार दण्डनीय होगा।(35)

अर्थात दलित जातियों को शोषण से बचाने के लिए भारतीय संविधान के अनुच्छेद 18 और 23 में विशेष प्रावधान किए गए हैं परन्तु इन सब के बावजूद भी दलित जातियों में आर्थिक शोषण की समस्या का पूर्णतः निवार्ण नहीं हो पाया है। आर्थिक शोषण के मूल में कोई न कोई कारण अवश्य छिपा रहता है जिसका लाभ उठाकर उच्च वर्ग दलित वर्ग को शोषण के शिंकजे में फँसा कर अपना स्वार्थ सिद्ध करता है। इसमें दलाल लोग जो मालिक मजदूर के बीच संपर्क का कार्य करते हैं, वह भी इस वर्ग का शोषण करने का कोई अवसर नहीं छोड़ते। प्रस्तुत उपन्यास *मगहर की सुबह* में गैर-दलित लेखिका वंदना देव शुक्ल ने शहरों में दलित मजदूरों के साथ होने वाले आर्थिक शोषण को फैक्टरी मजदूरों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> मैनेजमेंट अपने ही द्वारा पाले गए गुण्डों के हाथ की कठपुतली बनने को विवश था। बहुबलियों और छुटभैये नेताओं की चांदी कट रही थी। वे मैनेजमेंट और अशांत मजदूरों के बीच पुल का काम कर रहे थे। उनके हौंसले बुलंद थे मानों शोषण और मनमानी की वैधता उन्हें मिल गई थी। मजदूरों के रहने के लिए एक छत्त मुहैया थी। ये एक सबूत था मैनेजमेंट का उनके प्रति स्हानुभूति का, लेकिन रोटी कपड़ा छिन्न जाने का और उनके हक्क का पैसा यानि उनकी भविष्य निधि न मिल पाने का कोई दस्तावेज नहीं था मजदूरों के पास, जिसका रोना वे कहीं रो लेते, सिवाय चेहरे की बढ़ती झुर्रियों के। वो राशन कार्ड मतदाता पहचान पत्र, मिल्ल के भीतर जाने का गेटपास, वर्दी जिन्हें वो हर

> कार्यवाही में बतौर सबूत दिखा दिया करते थे, चिंदिआ होकर रह गए थे। अब उनकी अपनी जीर्ण सीर्ण देह और दुर्दशा के सिवा खुद को साबित करने का कोई दस्तावेज नहीं था उनके पास। भविष्य निधि का पैसा उनके सपनों का एक फिकस एकांऊट था। जिसमें डाका पड़ गया था और आकाओं ने हाथ खड़े कर दिए थे। छत तो जिंदा रह पाने के बाद की जरूरत है न! उससे पहले तो पेट है, उसका क्या करे? सो कई मजदूर अपनी विवशताओं और उन बाहुबलियों के झांसे में आकर सस्ते में अपने घर उन्हें बेच कर चले गए। मोल तोल कोई प्रश्न नहीं था, न औकात थी, न स्थिति।(39)

आलोच्य उपन्यास में फैक्टरी में काम करने वाले दलित मजदूरों की स्थिति को प्रस्तुत किया गया है कि फैक्टरी मैनेजमैंट द्वारा निम्न वर्गीय अशिक्षित मजदूरों से ज्यादा काम लेकर उन्हें कम मजदूरी दी जाती है। मिल्ल-मालिकों के साथ–साथ मालिक और मजदूर के मध्य कुछ बिचौलिए (दलालों) द्वारा भी दलित मजदूरों का शोषण किया जाता है। अर्थाभाव के कारण ये दलाल लोग निर्धन दलित मजदूरों की मजबूरी का फायदा उठाकर उनके मकान सस्ते दामों में खरीद लेते हैं और उनका आर्थिक शोषण करते हैं। प्रत्येक छोटा बड़ा कर्मचारी अपने भविष्य के मुश्किल समय के लिए कुछ धन बचा कर रखता है ताकि जरूरत पड़ने पर उसका उपयोग कर सके। दलित समाज के लोग भी धन संचय तो करते हैं लेकिन अशिक्षित होने के कारण कोई प्रमाण अथवा दस्तावेज न होने के कारण उन्हें अपनी ही कमाई से जोड़ी जमा पूँजी को हासिल करने के लिए कई प्रकार की मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। शोषण का यह चक्र किसी न किसी रूप में चलता ही रहता है। आर्थिक शोषण का ज्यादातर शिकार दलित वर्ग के लोग होते हैं और उनकी गुहार सुनने वाला भी कोई नहीं होता। समाज में दलितों का आर्थिक शोषण करने का मौका कोई भी नहीं छोड़ता, फिर चाहे

वह कोई सरकारी कर्मचारी ही क्यों न हो। पंजाब में आर्थिक शोषण से प्रभावित दलित स्त्रियों की स्थिति को पंजाबी उपन्यास *मुक्ति* में एस.एस कालड़ा ने कंती और उसकी बेटी लाडो जो कि दलित जाति की है और सड़कों से कबाड उठाकर उसे बेच कर अपना पेट पालती है के माध्यम से प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत उपन्यास की दलित पात्र कंती और उसकी बेटी लाडो गुजारा चलाने के लिए हरिद्वार में गंगा नदी के किनारे लोगों द्वारा दान किए गए पैसे तथा कबाड़ बेच कर पैसे इक्टठा करती हैं, ताकि कुछ दिन के भोजन की व्यवस्था हो सके परन्तु उनके द्वारा इक्टठे किए गए पैसों पर अपना हक्क बता कर एक पुलिस कर्मचारी उनसे वह पैसे जबरदस्ती छीन लेता है और पैसे वापिस मांगने पर कंती और लाडो को थाने के नाम पर डराता धमकाता हैः

> शायद लाडों नू इह गल्ल समझ नहीं आई। औह रोंदी होई हैरानी नाल आपणी मां दे मुँह वल्ल वेखण लग्गी। चल्ल छड्ड गरीबां नाल अजिहीआं घटनावां अक्सर वापरदीआं रहिंदीआ हन्न। माड़ा धीड़ा हर कोई गरीब ते आ चड़दा है।(15)

आर्थिक शोषण की प्रक्रिया समाज के उच्च और निम्न वर्ग के बीच सदैव किसी न किसी रूप में चलती रहती है। यह न तो स्थान देखती है और न स्थिति। पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में खेतों में मजदूरी करने वाले किसानों को उनकी मेहनत के बदले बहुत कम दिहाड़ी/मेहनताना दिया जाता है। पंजाब में यूपी, बिहार से प्रवासी मजदूरों के आने से खेतों में दिहाड़ी करने वाले दलित मजदूरों की मजदूरी के रेट पर प्रभाव पड़ा है। प्रवासी मजदूर जाति के लोग बेरोजगारी के चलते कम दिहाड़ी पर खेतों में मजदूरी करने को तैयार हो जाते हैं, और जमींदार लोग बजाए पंजाबी मजदूरों के भईयों को कम दिहाड़ी देकर काम पर लगाते हैं। कमाई का कोई अन्य विकल्प न होने के कारण पंजाब की ग्रामीण दलित जनता को कम वेतन पर ही दिहाड़ी करनी पड़ती है।

पंजाबी उपन्यास *पंडोरी प्रोहितां* में गैर-दलित लेखक निंदर गिल्ल ने पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में दलित मजदूरों के साथ मजदूरी के नाम पर होने वाले आर्थिक शोषण को प्रस्तुत किया हैः

> वेहड़े बहूजन वड़न तो पहिलां वेहड़े वालियां दा भईआं नाल तणाऊ पैदा होईया सी क्योंकि भईआं दे आऊण नाल वेहड़े वालियां दा दिहाड़ी वधाऊणां, बाईकाट करन वरगा नारा बेअसर हो गया सी। एक वारी तां वेहड़े वालियाँ नू भइये जट्टां नालों वद्ध बुरे लगण लग पए(93)

भारत के अन्य क्षेत्रों में भी दलित मजदूरों से मजदूरी के नाम पर बेगार करवाया जाता है। 'बेगार' का अर्थ होता है, ऋण देने के बदले व्यकित की मेहनत को खरीदना। दिन रात श्रम करना और बदले में मजदूरी वो भी बहूत कम। ग्रामीण क्षेत्रों में उच्च वर्ग द्वारा दलित वर्ग से बंधुआं मजदूरी बेगार अर्थात चौबीस घंटे काम करवा कर उन्हें उनकी मेहनत का उचित मूल्य न देकर उनका आर्थिक शोषण किया जाता है। हिन्दी उपन्यास *हमलावर* में दलित लेखक विपिन बिहारी ने दलित पात्र रामप्रीत, माधो, फगुनी, गनौरी के माध्यम से 'बेगार' द्वारा आर्थिक शोषण की समस्या को प्रस्तुत किया हैः

> रामप्रीत, माधो, फगुनी, गनौरी, चेतु बनिहार थे हरखु बाबू, बिनसेर जादव, जनक, जगदीश बाबू के यहां। सबेरे निकलते सांझ को आते। कभी काम पर जाने में थोड़ा देर हो जाती तो हरखू बाबू आते तो गरियाने लगते माधो को माधो, बकरी बन जाता था उनके सामने। उसकी घरवाली भगमनियां थोड़ा विरोध करती थी, 'मालिक जा ही तो रहा था। थकल फैदल रहता है, आंख देर तक लगी रह गई।" हरखु

> कुछ नहीं बोलते थे इस पर। आंखे लाल किए हुए देखते भगमनियां को। अपने पांव पटकते हुए जाने लगते इतना कहकर, “मजूरी तौलते हैं, बालू मिट्टी नहीं तौलते हैं। पूरी मजूरी टानोगे तो पूरा काम करना ही पड़ेगा। (15)

बंधुआ मजदूरी करने वाले की समय सीमा निर्धारित न होने के कारण उन्हें सुबह से लेकर शाम तक पहले बनों अथवा खेतों में और उसके बाद फिर जमीदारों के घरों में कार्य करना पड़ता है और अगर किसी दिन देर सवेर हो जाए तो जमींदार का गाली गलौच अलग से, अर्थात उनकों आर्थिक शोषण के साथ-साथ मानसिक शोषण भी झेलना पड़ता है। इस प्रकार शहरों में काम करने वाले अशिक्षित सफाई कर्मचारियों का उनके अफसरों द्वारा किए जाने वाले आर्थिक शोषण को *भंवर* उपन्यास में कैलाश चन्द्र चौहान ने दलित पात्र कुँबर पाल के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> नौकरी पर जाने से पहले कुंवरपाल बस पकड़ता है। हालाकि उसका गाँव शहर के नजदीक था, लेकिन कुँवरपाल की नौकरी दूर थी। नौकरी पर पहुँचने के लिए एक घण्टा लगता। जंगलपानी या नित्य क्रिया वह वहीं करता। नौकरी पर उसे सुबह सात बजे तक पहुंच जाना पड़ता, हालांकि देर सबेर के नाम पर हर महीने वह हाजरी दरोगा को कुछ रूपए देता था इसका फायदा यह था कि यदि उसे कभी देर हो जाती तो हाजरी दरोगा उसकी गैर हाजरी नहीं लगाता।(69)

आर्थिक शोषण का रूप सदैव एक जैसा नहीं होता। स्थान और कार्य के साथ-साथ इसका रूप भी बदलता रहता है। शहरों में सफाई का कार्य करने वाले कर्मचारियों का शोषण उनके अफसरों द्वारा किया जाता है। प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने आर्थिक शोषण का एक नया रूप प्रस्तुत किया है कि हाजरी लगाने की डयूटी पर तैनात

निगरान अफसरों द्वारा समय पर आने के बावजूद भी सफाई कर्मचारियों को जानबूझ कर लेट बता कर तन्खवाह् देने के समय पैसे में कटौती की जाती है और लेट आने के नाम पर तनख्वाह् में से एक बड़ी रक्म काट ली जाती है इसलिए ये सफाई कर्मचारी स्वयं ही उसे भेंट स्वरूप रूपए देते हैं। निम्न वर्ग के लोग विभिन्न प्रकार की आर्थिक समस्याओं से जूझते रहते हैं जैसे उनके श्रम का उचित मूल्य न मिलना बेरोजगारी अर्थाभाव इत्यादि। पंजाबी उपन्यास *केही वगै हवा* में दलित लेखक अज़ीज सरोए ने पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक शोषण की समस्या को दलित पात्र सूहले के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> वाढ़ी दा रेट, ऐतकी वी ओही अ, पिछले साल आला, पतंदरां ने वधाइया ई नी। सूहले नू वाढी दे पुराणे रेट दा दुख होइया। हू तीन मण अ, ईक टैम दा चाह गुड़ । रूपे ने जवाब दित्ता।(45)

वर्तमान समय में सरकार द्वारा दिहाड़ी के रेट तय करने पर भी जमींदार लोग पुराने रेट के हिसाब से कम दिहाड़ी ही देते हैं जो कि मजदूरों के श्रम के मुकाबले काफी कम होती है परन्तु अशिक्षित ग्रामीण जनता को ना चाहते हुए भी उसी रेट पर दिहाड़ी करनी पड़ती है। दलित समाज के लोगों को अपनी छोटी-छोटी जरूरतों को पूरा करने के लिए बेहद मेहनत करनी पड़ती है फिर भी वह गरीबी और शोषण के चक्र से मुक्त नहीं हो पाते जिसका फायदा उच्च वर्ग के लोग उठाते हैं, वह दलित परिवारों के बच्चों को अपने घरों में बंधुआ मजदूर बना कर उनसे बेगार करवाते हैं और उनका आर्थिक शोषण करते हैं। पंजाब के ग्रामीण क्षेत्र में भी बंधुआ मजदूरी द्वारा निम्न वर्ग के शोषण को *हनेरी रात दे ज़ुगनू* उपन्यास में दलित लेखक अज़ीज सरोए ने दलित पात्र पाखर और उसके पुत्र पाली के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> लऔ जी संगतों ! पाखर दे मुण्डे नू पूरे साल दा पंज हजार मिलू। बस पशुआं नू निरा पट्ठा करना। खेतों पट्ठे लिआऊणे ते घर आ के पशुआ नू पाऊणे। गल्ल मुकदी पाली बण के रहणा पऊ। बिक्कर सिंह ने सारे कम्म गिणा दित्ते ..मंजूर ए...करो लिखा पड़ी ते लवाओ अगूंठे, पाखर ने हाँ विच्च् सिर हिला दित्ता। (79)

दलित वर्ग में अर्थाभाव के कारण ये लोग न तो खुद शिक्षित होते हैं और न ही अपने बच्चों को शिक्षा दे पाते हैं। आर्थिक अभावग्रस्तता के कारण इन परिवारों के बच्चे भी जमींदारों के घरों में बंधुआ मजदूरी करने को विवश हो जाते हैं जिनका कि उच्च वर्ग के लोग जम कर शोषण करते हैं। प्रस्तुत उपन्यासों में जहाँ शहरों और ग्रामीण क्षेत्रों में दलित समुदाय के लोग आर्थिक शोषण का शिकार होते हैं वहीं दलित जातियों में आई आर्थिक शोषण के प्रति जागरूकता अर्थात परिवर्तन की स्थिति को आलोच्य उपन्यास *मगहर की सुबह* में गैर-दलित लेखक वंदना देव शुक्ल ने शहरों में मजदूरी करने वाले दलित वर्ग के लोगों के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

> मालिकों की देश विदेश में फैक्ट्रियां, इनके महल-अटारे सब हमारी बदौतल ही खड़े हैं। हमारे पसीने से प्राप्त मुनाफे से ही ये राजा बने हैं और आज जब इन्हें हमारी जरूरत नहीं रही, इस मिल्ल की जरूरत नहीं रही तो इसे बंद कर दिया जैसे हम कोई मिट्टी के पुतले हो, हाड मास के जीव नहीं। हम किसी हालत में अपनी जड़ों से नहीं हिलेंगे।.....अतः आप सब से अनुरोध है कि मैनेजमेंट के किसी भी बहकावे –फुसलावे में न आवे और किसी भी कागज में अपने साईन न करें, न ही अफवाहें फैलाएं। उन्होंने यह भी कहा कि उनके पास देने को

> हमारे पास पैसा ही नहीं हैं इसलिए जिसको जो घर आवंटित है, उसको किसी कीमत पर न छोड़े। (41)

वर्तमान समय में दलित मजदूर अपने हक्कों के प्रति जागरूक हो रहे हैं। वह आर्थिक शोषण के खिलाफ एकत्रित होकर आवाज उठा रहे हैं, और आर्थिक शोषण से मुक्ति के साथ-साथ अपने वजूद की लड़ाई लड़ने के लिए भी प्रयासरत्त हैं। जहाँ ग्रामीण क्षेत्रों में जमीदारों द्वारा खेत मजदूरों और उनके परिवारों पर जाति के नाम पर आर्थिक शोषण किया जाता है और उन्हें पुशतैनी कार्य करने के लिए विवश किया जाता है, वहीं *हमलावर* उपन्यास में दलित जातियों की आर्थिक शोषण से मुक्ति तथा आर्थिक शोषण के प्रति जागरूकता को लेखक विपिन बिहारी ने दलित पात्र भजन और मदन के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> चमारों को भी कुछ कह रहे थे। "कि मरी मत्त खाओं, मरी मत्त उठाओं। आप लोग क्यों नहीं उठाते? जिंदा है जानवर जब तक तो अपना काम निपटाते हैं और मर जाने पर चमारों के माथे फेंक देते हैं । उठाओं मरी तो पैसे मांगों, जिससे पैसे नहीं बने तो उसके एवज में अनाज लो,नहीं देता हो कोई तो मत्त उठाओं। चमार भी हिन्दू ही होते हैं तो एक हिन्दू जानवरों से दूध-मलाई उडाए और एक हिन्दू उसका चमड़ा टाने (72)

दलितों में चमार कही जाने वाली जाति को, दलित जाति का युवक मदन मरे हुए जानवर न उठाने के लिए जागृत करता है वहीं, घर का गुजारा करने के लिए अगर मरी को उठाना भी पड़े तो उसके लिए मेहनत का मूल्य लेने के लिए भी प्रेरित करता है ताकि इन गरीब दलित निर्धन परिवारों को आर्थिक रूप से कुछ सहायता मिल सके। उनकी कुछ आर्थिक मदद हो सके और वह पुशतैनी कार्यों तथा आर्थिक शोषण से मुक्त हो सके क्योंकि दलित समाज के लोगों को यह काम गरीबी और बेरोजगारी

के चलते करना पड़ता है अर्थात दलित समाज के जो लोग इस धन्धे को छोड़ना भी चाहते हैं, वह चाह कर भी इस घृणित कार्य को नहीं छोड़ पाते परन्तु मदन द्वारा विप्पत के माध्यम से आर्थिक शोषण के विरूद्ध सभी दलितों को एकजुट होने का संदेश दिया जाता है ताकि वह गैर-दलितों के शोषण चक्र को समाप्त कर सके अर्थात दलित पात्र मदन दलित समाज के लोगों को आर्थिक शोषण के विरूद्ध जागृत करता है जो कि दलित जातियों में आर्थिक शोषण के प्रति आई जागरूकता को दर्शाता है। वर्तमान समय में दलित समाज अपनी अस्मिता के प्रति चेतन है। वह आर्थिक सम्मान के साथ साथ आत्म सम्मान की बात भी करता है। पंजाबी उपन्यास *हनेरी रात दे जुगनू* में दलित लेखक अज़ीज सरोए ने पाली और प्रताप के माध्यम से उच्च वर्ग के द्वारा निम्न वर्ग के आर्थिक शोषण को रोकने के लिए उनकी सोच में आए परिवर्तन को प्रस्तुत किया हैः

> तेरी गल्ल ता ठीक ए! आह बिक्कर ऐवे तपाई रखदा सी। अखे तू आ करले, औह करले। गुरदेवो वी तोड़े विच्चों पाणी न पीण देंदी सी। तैनु पहला दस्सिआ ता सी, जदों ताई दा भोग सी ता विसवेदार कहिंदा, घरे बहि जा, की लोड़ आ कम्म करन दी। आपा वी चिट्टा जवाब देता सी। तू वेखदा ता जा। मैं विसवेदार विरूद्ध ऐसी मुहिम विड्डू कि औह याद रक्खू। तू इह गल्लां कित्थों सीखिआं ने ? प्रताप नू उस दे इहनां अगांह वद्धू विचारा नू सुण के हैरानी हो रही सी।“यार शहर च तां मजदूर चेतन ने। औह तां यूनीयन बणाई बैठे ने। इह तां बस पिंडा विच्च ही नी आपां जुड़े” हाँ पाली आपा वी बणाईये अपणी कोई कमेटी।(104)

दलित समाज का उद्धार करने के लिए दलित युवा आगे आ रहे हैं। पंजाब में शहरों में काम करने वाले फैक्टरी मजदूर भी उच्च वर्ग के शोषण से बचने के लिए यूनीयन बना

कर दलित लोगों को आर्थिक शोषण को प्रति जागरूक करने के प्रयास को पंजाबी लेखक अज़ीज सरोए ने हनेरी रात दे जुगनू उपन्यास में प्रस्तुत किया हैः

> वड्डे साहूकार दी मोमबतीआं बणाऊण दी फैक्ट्री है उत्थे असी तीन चार सौ मजदूर कम्म करदे आं इत्थे शहर दी गल्ल होर वेखण आली है, इत्थे जो वी इक्टठे कम्म करदे ने, औहनां ने आपणी यूनियन बणाई होई है। (112)

दलित वर्ग में जागृति आने से अब ये लोग शिक्षित होकर पुशतैनी काम धन्धों को छोड़कर अन्य क्षेत्रों में आगे आ रहे हैं, और अर्थाभाव जैसी समस्याओं से मुक्ति पाकर एक अच्छे भविष्य की कामना कर रहे हैं। पंजाब में दलित जातियों में आर्थिक शोषण के प्रति परिवर्तन की स्थिति को लेखक अज़ीज सरोए ने हनेरी रात दे जुगनू उपन्यास में दलित पात्र पाली तथा प्रताप के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> प्रताप दा कोर्स पूरा हो गया सी। विहले दा गुजारा नहीं सी हो सकदा। नेड़ले पिंड इक प्राईवेट स्कूल सी उसने औह ज्वॉयन कर लिया सी। प्रिंसीपल ने महीने दे पंद्रा सो रूपए देण दा फैसला कीत्ता। प्रताप नू फैसला मंजूर सी। हुण उसदी आर्थिक हालत सुधरनी शुरू हो गई। विसाखे दा सारा कर्जा वी उत्तर गया सी। हुण उसदी चिंता वी घट गई(133)

शिक्षित दलित वर्ग एकजुट होकर शोषण के विरूद्ध मोर्चा खोलने के लिए तत्पर है यह शिक्षित वर्ग अपने समाज के लोगों में चेतना के प्राण फूकना चाहता है ताकि दलित जातियां आर्थिक शोषण से मुक्त होकर विकास और परिवर्तन के पथ पर अग्रसर हो सके।

इक्कीसवीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में आर्थिक शोषण से प्रभावित दलित समाज का वर्णन वंदना देव शुक्ल ने *मगहर की सुबह*, कैलाश चन्द्र चौहान ने*भंवर* तथा*विद्रोह,* विपिन बिहारी ने *हमलावर* उपन्यासों में देखने को मिलता है, वहीं पंजाबी लेखक एस.एस.कालड़ा ने *मुक्ति* तथा अज़ीज सरोए ने*हनेरी रात दे जुगनू तथा केही वगै हवा* उपन्यास इस समस्या को प्रस्तुत किया है। हिन्दी गैर-दलित लेखक शिवमूर्ति के उपन्यास *तर्पण* में, रूपसिंह चन्देल के उपन्यास *दगैल* तथा *कानपुर टू कालापानी* में पंजाबी गैर-दलित लेखक रामस्वरूप अणखी के उपन्यास *सलफास*, बलदेव सिंह के *अन्नदाता* में दलित जातियों के आर्थिक शोषण से जुड़े पक्ष पर बात नही हुई है। वहीं दलित पंजाबी लेखक देशराज काली ने *शांतिपर्व* में दलित जीवन से जुड़े इस पक्ष को बिन्दु पर कम चर्चा की है। दलित समुदाय में आर्थिक शोषण के प्रति आई जागरूकता अथवा परिवर्तन की स्थिति को *मगहर की सुबह*, *हमलावर* तथा *हनेरी रात दे जुगनू* उपन्यासों में प्रस्तुत किया गया है।

4.5 आर्थिक ऋणग्रस्तता से प्रभावित

निर्धनता जीवन के लिए अभिशाप है। एक निर्धन व्यकित ही जान सकता है कि उसे आर्थिक विवशता में कैसे-कैसे संक्टों का सामना करना पड़ता है। भीषण संक्टों से अपनी रक्षा करने के लिए व केवल जीवित बने रहने के लिए उसे बड़े-बड़े साहूकारों से ऋण भी लेना पड़ता है, जिसमें ऋण के बदले साहूकारों द्वारा ऋण स्वरूप दी गई धन राशि के ऊपर कुछ प्रतिशत अधिक पैसा ब्याज(सूद) स्वरूप देना पड़ता है।ज्यादातर दलित जाति के निर्धन लोग बीमारी, शादी ब्याह या फिर अन्य किसी पारिवारिक कारणों से साहूकारों से ऋण स्वरूप धनराशि उधार लेते हैं। दलित निर्धन वर्ग चाह कर भी जीवन भर दम तोड़ परिश्रम करने के उपरांत भी साहूकार/जमींदार के ऋणभार से मुक्त नहीं हो पाता। वह जीवन भर साहूकार/ जमींदार के ब्याज के लिए कमाता रहता है। कभी-कभी ऋण न चुका सकने के कारण

वह साहूकार/ जमींदार को अपनी मूल संपति भी समर्पित करने के लिए विवश हो जाता है। ग्रामीण दलित परिवारों में आर्थिक ऋणग्रस्तता के चलते निम्न वर्गीय दलित परिवार के लोग अपने कर्ज़ को उतारने के लिए अपनी लड़कियों के मोल के रिश्ते भी कर देते हैं जिसमें यह लोग न तो वर का घर देखतें और न वर। बस कुछ धनराशि लेकर अपनी लड़कियों का विवाह कर देते हैं, ताकि उस धनराशि को साहूकार को देकर ऋण ग्रस्तता से मुक्त हो सके। फिर चाहे लड़की सुखी हो या दुखी, लेकिन आर्थिक ऋणग्रस्सता के कारण ये लोग न चाहते हुए भी अपनी लड़कियों के मोल के रिश्ते करने को विवश हो जाते हैं। प्रस्तुत उपन्यास *मगहर की सुबह* में ऋणग्रस्तता से छुटकारा पाने और दलित युवती मैना का मोल का रिश्ता करने की घटना को दलित युवती मैना और उसके माता-पिता के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> अम्मा की आंखे बहने लगी, बाप का इंतजार भी न हो सका। सीधे पहुँच गई हाट पर और बरस पड़ी। 'काहे मिनिया के बापू,केतना समझाए कि बिटिया का घर देख आओं खुदई, पर कभी मानी मेरी? समधी से रकम लेय कर्जा तो पटा दओ, पर मोड़ी की सोची कछु।(29)

आर्थिक ऋणग्रस्तता के चलते मैना के पिता स्वर्ण जाति के मंद बुद्धि राजो से उसका मोल का रिश्ता कर देते हैं, ताकि अपना कर्ज़ा उतार सके। दलित परिवार कर्ज़ की रकम को उतारने के लिए दिन रात मेहनत मजदूरी करते हैं परन्तु फिर भी कर्ज़ की रकम कम नहीं होती। चाहे जितना भी प्रयास करे पर चाह कर भी ये लोग कर्ज़ से मुक्त नहीं हो पाते और दरिद्रता भरा जीवन जीने के लिए विवश रहते हैं। आर्थिक तंगी के कारण दलित समाज ज्यादातर पारिवारिक कार्यों जैसे परिवार में विवाह शादी इत्यादि के लिए उच्च वर्ग (जमींदार/साहूकार) से ऋण के रूप में पैसा उधार लेते हैं। साहूकार वर्ग इस सहायता के बदले इनसे भारी रकम सूद स्वरूप वापिस लेता है। वास्तव में ऋणग्रस्तता का मूल आधार आर्थिक शोषण है। पंजाब के ग्रामीण

क्षेत्रों में आर्थिक ऋणग्रस्तता की समस्या पंजाबी उपन्यास *सलफास* में गैर-दलित लेखक रामस्वरुप अणखी ने दलित पात्र दयालों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> फसलां कन्नी न देखे। फसलां तां चंगीआ माड़ीआं, हर साल इही हाल रहिणे। फसलां नाल विआह नहीं हुन्दे। करनैल अतै जरनैल दा विआह वी तां विआजू पैसा फड़के कीत्ता सी। हुण गेलों वारी वी इही हाल रहिणे। कमाईयाँ करके सुख नाल दोमे भाई सब विआजू पैसा लाह देणगे। दयालों वीऊंतां बणाऊण लग्गी।(385)

आर्थिक शोषण की इस प्रकिया में दलित समाज का खून केवल गैर-दलित ही नहीं चूसते बल्कि आर्थिक पक्ष से सम्पन्न दलित व्यकित भी आर्थिक पक्ष से विपन्न दलित व्यकित का भी आर्थिक शोषण करने से नहीं हिचकचाते हैं। उपन्यास *भंवर* में दलित लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने दलित समाज के आर्थिक पक्ष से सम्पन्न व्यक्तियों के द्वारा दलित समाज के आर्थिक पक्ष से विपन्न व्यक्तियों के आर्थिक शोषण की समस्या को मेठ रघुवीर और कुँवरपाल के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> उसकी हाजरी पर मेठ रघुवीर था। वही छोटी-मोटी जरूरत पड़ने पर सफाई कर्मचारियों को पैसे दे दिया करता था। कुँवरपाल कई बार जरूरत पड़ने पर उस से पैसे ले लिया करता था। समय पर उसे लौटा भी देता था, ज्यादा से ज्यादा दस हजार रूपए तक। इससे उसे तनख्वाह के अलावा अच्छी आमदनी हो जाती थी। कुँवरपाल ने पैसे की जरूरत की बात उसके सामने रखी। वह पैसे देने के लिए तुरंत तैयार हो गया। अगले दिन उसने दे भी दिए।(75)

प्रत्येक समाज का एक वर्ग ऐसा होता है जो सूदखोरी के आधार पर आर्थिक सम्पन्नता प्राप्त करता है। सूदखोरी, जमींदार और साहूकार लोग निचले वर्ग को सहूलतें देकर

उनसे सूद समेत धन वापिस लेकर करते हैं। उपन्यास *विद्रोह* में कैलाशचन्द्र चौहान ने शहरों में उच्च वर्ग की रक्त चूसक प्रवृति को स्वर्ण जाति के साहूकार राजेन्द्र गुप्ता के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> बाल्मीकि बस्ती में कभी किसी को पैसे की जरूरत पड़ती तो वो देता, वह भी दस प्रतिशत ब्याज पर। सामान तो उधार देता ही था। जितना सामान जाता वह खाते में उससे ज्यादा लिखता, चूंकि वह जाति से बनियां था। इस लिए लोग उस पर आंख मूंद कर विश्वास करते। जो भी वह हिसाब बताता देते चाहे देर हो जाती, लेकिन देते जरूर। एक बार मकान मालिक को भी पैसे की जरूरत पड़ गई। उसने उसे एक लाख रूपए उधार दिए, ऐसे दिए की मकान मालिक से दिए नहीं गए। एक लाख रूपए और देकर दुकान मकान अपने नाम लिखवा लिया।(58)

प्रस्तुत उपन्यास का स्वर्ण पात्र राजेन्द्र गुप्ता दलित समाज के गरीब लोगों को जरूरत पड़ने पर दस गुना ज्यादा ब्याज पर पैसे देने का कार्य करता है और ब्याज स्वरूप दस गुना ज्यादा पैसा वसूल करता है। इस प्रकार राजेन्द्र गुप्ता दलित वर्ग के लोगों को कर्ज देकर मन माफिक ब्याज लेकर उनका आर्थिक शोषण करता है। निर्धनता के कारण दलित वर्ग के लोग साहूकारों/जमीदारों से कर्ज लेकर उम्र भर के लिए उनके ऋणी हो जाते हैं और कभी-कभी तो माता-पिता द्वारा लिए गए कर्ज को उनके बच्चे पूरी उम्र ढोते रहते हैं। प्रस्तुत उपन्यास *हनेरी रात के जुगनू* में दलित पंजाबी लेखक अज़ीज सरोए ने ऋणग्रस्तता की समस्या को दलित पात्र पाली के माता-पिता जमेरों और पाखर के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> अक्की दी पंजीरी वासते पंज सो फड़िया सी गुरदेव कौर तों, ठोक वजा के उसने पंज रूपये ब्याज ते दित्ते सी। हुण ता औह वी वद्ध के दुगणे चोगुणे होगे होणे। " बस चुप्प कर, जमेरो! काहनू दुखदी रग्ग ते हत्थ थरदी आ। जिहड़ा अक्की दे विआह ते पंज हजार लिया सी, औह वी वद्ध के पता नहीं किन्ना हो गया होणा। मैनू ता विसवेदार लंघदे- टपदे नू रोक के नित्य ही कहिंदा जा तां कर्ज़ा मोड़ दे जा फिर अपने मुण्डे नू पाल़ी रला दे।(70)

सूद पर लिए गए कर्ज का सूद ज्यादा होने के कारण निर्धन दलित वर्ग के द्वारा उतार पाना मुश्किल हो जाता है, क्योंकि दिन रात मेहनत मजदूरी करने के बाद भी ये लोग इतना नहीं कमा पातें कि सूद तथा असल चुकता कर सके परन्तु फिर भी इनके पास पारिवारिक जरूरतों को पूरा करने के लिए कर्ज लेने के सिवा अन्य कोई विकल्प नहीं है। इस प्रकार हिन्दी और पंजाबी के उपन्यासों में कर्ज़ से प्रभावित दलित परिवारों के आर्थिक शोषण को प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत उपन्यासों में दलित समाज में आर्थिक अभावग्रस्तता के कारण साहूकार से सूद पर पैसे लेने की प्रवृति आम देखी जा सकती है, परन्तु मुश्किल तब आती है जब ये लोग निर्धनता के कारण इस राशि को समय से नहीं लौटा पाते और यह सूद का पैसा बढ़ कर मूल रक्म से ज्यादा हो जाता है। निर्धनता के कारण कर्ज की मार को झेलते दलित परिवारों की स्थिति का वर्णन वंदना देव शुक्ल ने *मगहर की सुबह,* कैलाश चन्द्र *ने भंवर* और *विद्रोह* इत्यादि उपन्यासों में किया है। पंजाब में कर्ज की मार से प्रभावित दलित समाज की स्थिति का वर्णन पंजाबी उपन्यास *सलफास* में रामस्वरूप अणखी *हनेरी रात दे जुगनू* में अज़ीज सरोए में किया है जबकि शिव मूर्ति ने *तर्पण,* रूप सिंह चन्देल ने *दगैल* तथा *कानपूर टू कालापानी* में विपिन बिहारी ने *मरोड़* तथा पंजाबी के देशराज काली के *परणेश्वरी और शांतिपर्व,* निंदर गिल्ल के *पंडोरी प्रोहितां*

तथा अज़ीज सरोए के *केही वगै हवा* उपन्यास में आर्थिक ऋणग्रस्तता की समस्या पर कम ही चर्चा की गई है।

4.6 आर्थिक कारणों से नारी शोषण

दलित परिवारों में आर्थिक तंगी के कारण औरतों को कमाने के लिए घर से बाहर निकलना पड़ा जिससे परिवार की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ हो सके। दलित समाज की अशिक्षित, कम शिक्षित और शिक्षित, शहरी तथा ग्रामीण औरतें भी आर्थिक तंगी के कारण विभिन्न प्रकार के कार्य करके परिवार के पालन पोषण में हाथ बटाती हैं और इस दौरान दलित औरतों को अनेकों समस्याओं का सामना करना पड़ता है। निर्धनता के कारण निम्न वर्गीय दलित परिवारों की औरतों की स्थिति अधिक दयनीय हो जाती है, क्योंकि अशिक्षा और निर्धनता के चलते उनकों नौकरी के मायने तक पता नहीं होते। वह तो कमाई का साधन छोटे मोटे काम और मजदूरी को ही मानती है और अगर घर से बाहर निकलकर कोई कार्य करना भी चाहती हैं तो समाज का प्रत्येक आदमी उनका शोषण करने का प्रयास करता है, फिर चाहे वह शारीरिक शोषण हो या मानसिक। शोषण से प्रभावित अशिक्षित और कम शिक्षित दलित औरतों की स्थिति को *मगहर की सुबह* उपन्यास में वंदनादेव शुक्ल ने दलित पात्र मैना के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> उसने(मैना) अपने परिवार की औरत तो क्या, आदमी को भी कभी नौकरी करते नहीं देखा था। सब अपने या दूसरे के खेतों में काम करते। अब कोई चारा तो था नहीं। सो मैना ने सहमते सकुचाते शर्मा जी की फैक्ट्री जाना शूरू कर दिया। साथ में संजू को भी ले जाती बगल में दबा के..शर्मा जी की फैक्ट्री में कुछ लड़कों के अलावा दो औरतें और थी वे सब छोटे पुर्जे को एसेम्बल करने का काम करती थी। एक दिन

> जब रात हो गई..तब शर्मा जी ने मैना को अपने स्कूटर पर बैठाकर घर छोड़ दिया...एक बात बताओं मैना जवान औरत हो तुम्हारा मन नहीं करता? मैना को कुछ समझ नहीं आ रही थी कि क्या कहे।...इस पर शर्मा जी अपने पान खाए पीले-पीले से दाँत निपोरते हुए बोले,'अरे नहीं नहीं ..अपना तो अकेले राम है, पत्नी का देहांत हो चुका है। बच्चे बुच्चे है नहीं...कल से कोई फिकर मत्त करना....ठीक है? और जितने पैसे की जरूरत हो बे संकोच मांग लेना। कुछ अतिरिक्त आत्मीयता को निचोड़ शर्मा जी चले गए स्कूटर दौड़ाते। मैना सड़क के उस धूल में धुंधलाये हिस्से को देखती रही जो शर्मा जी बेशर्मी से उड़ता हुआ छोड़ गए थे।(59)

निर्धनता के कारण दलित परिवारों की ज्यादातर औरतें अशिक्षित अथवा कम शिक्षित होने के कारण घरों में साफ-सफाई का काम करती हैं जहाँ पर उच्च वर्ग के मर्दों के द्वारा उनकी आर्थिक मजबूरी का फायदा उठाकर उनका शारीरिक शोषण करने का भी प्रयास किया जाता है। घरों में साफ-सफाई का कार्य करते हुए दलित परिवारों की युवतियों के शारीरिक शोषण की समस्या को रूप सिंह चन्देल ने *दगैल* उपन्यास में दलित पात्र सुनीता के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> स्टेनोग्राफी सीख लेती ....सुना है उसकी नौकरी आसानी से मिल जाती है और तीन साल से मैं काम में भी तो नहीं जा रही। जवान होती मेरी काया पर लोग नज़रे गड़ाए रहते। जवान तो जवान बूढों की नज़र भी मेरी छाती पर ही टिकी रहती।..खांसते रहते बाशबेसिन में बार-बार बलगम थूकतें...चौसठ-पैंसठ साल का वह शर्मा, जिसके दोनों बेटे ऊँचे औहदों पर थे और बहुए भी अच्छी नौकरी में....सब चले जाते...बुढ़िया मंदिर चली जाती भगवान दर्शन करने और बुढ्ढा

> घर में अकेले रहता। वह उसके घर दस बजे पहुँचती। बड़ा मकान दो घंटे लगते साफ-सफाई में, जब वह चौके में बर्तन साफ कर रही होती, बुढ्ढा आ जाता “सुनीते”, एक कप चाय बना दे मेरे लिए खुद भी पी लेना..और हाँ उस सलेब पर बिस्कुट रखें हैं....खुद भी खा लेना और दो बिसकुट मेरे लिए भी....चाय लेकर जाती तब सौफे पर बैठा बुढ्ढा, उसे अपने बगल में बैठने का आग्रह करता। वह बैठने में संकोच करती.....कई दिनों के इंकार के बाद वह बैठ गई। माँ की नसीहत भूल गई। बुढ्ढे ने लुंगी बांध रखी थी। उसके बैठते ही उसने जांघों पर लुंगी यूँ खिसका दी कि जांघे उघड़ गयी। पिंडलिया से लेकर जांघों तक बालों का जंगल-सुनीता घबरा उठी लेकिन बुढ्ढे ने उसका हाथ पकड़ लिया।(99-100)

प्रस्तुत उपन्यास की दलित पात्र सुनीता शिक्षित होकर नौकरी करना चाहती थी ताकि अपने परिवार की आर्थिक स्थिति को सुधार सके परन्तु अर्थाभाव के कारण शिक्षा छोड़ कर उसे अपनी मां के साथ घरों में साफ-सफाई का काम करने जाना पड़ा। इसी दौरान उच्च जाति का शर्मा जिसकी उम्र नब्बे वर्ष है। उसकी मजबूरी का फायदा उठाकर उसके साथ असलील हरकत करता है। इस प्रकार दलित समाज की औरतें शारीरिक शोषण के साथ-साथ मानसिक शोषण का भी शिकार होती हैं। गैर दलित जाति के युवक दलित युवतिओं को नौकरी लगवाने या पैसे देने का झांसा देकर उनका शारीरिक शोषण करते हैं, और उनकी गरीबी का फायदा उठाते हैं। प्रस्तुत उपन्यास *दगैल* का गैर-दलित युवक विक्रांत दलित जाति की सुनीता की इसी मजबूरी का फायदा उठाकर सुनीता का शारीरिक शोषण करता है और वह इसे महज एक सामाजिक नियम अर्थात सौदा मानता हैः

> सुनीता ने कल्पना भी नहीं की थी जो कुछ देर पहले घटित हो चुका था। वह बिलख कर रोती रही। विक्रांत ने फिर उसे गोद में उठा लिया और उसके गाल चूमते हुए बोला, "तुम्हें दुखी नहीं होना चाहिए सुनी ।जीवन में वह भी उतना ही जरूरी है जितना भोजन..तुम छोटी नहीं हो.....समझदार हो...मैं तुम्हारी नौकरी के लिए दिन रात एक किए हुए हूँ....दुनिया का नियम है....इस हाथ से लेना उस हाथ से देना। इसे सहज रूप में लो...जिन्दगी रोने के लिए नहीं प्रसन्नभाव से आनंद लूटने के लिए है।(111)

अन्य विकल्प न होने के कारण पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में भी दलित औरतें, अपने घर का गुजारा चलाने के लिए उच्च वर्ग के घरों में साफ सफाई का काम करती हैं ताकि दो वकत की रोटी जुटा सके। पंजाबी लेखक एस.एस कालड़ा ने उपन्यास *मुक्ति* में सैंसी दलित समाज की दलित औरत कंती को काम काज के बदले पैसे न लेकर सिर्फ दो वक्त की रोटी के लिए घरों में साफ-सफाई का काम करने के लिए विवश दिखाया हैः

> कंती दी जिन्दगी विच्च हुँण कोई सद्धर ना कोई अरमान सी। उसदी जिंदगी दा न कोई मंतव न कोई आशा, न कोई तमन्ना सी। बस औह इक्क खांदी पींदी सोंदी जागदी चलदी फिरदी लाश तो वद्द कुछ नहीं सी। उसने अपने मौढे तो बगली वगाह के मारी। उस नू इक्क पंडित दे घर साफ सफाई दा कम्म मिल गया। औह उन्नां दे रात दे भांडे वी मांज के आऊंदी। दो वेले पेट नू झुलका देण लई टुकुर उत्थों जुड़ जांदा। कदे कु ताई कोई लत्था पत्था कपड़ा वी। जिहड़े उस नू थोडे बहूत पैसे मिलदे, औह माड़ी मोटी सवेर दी चाह जा दवा दारू ते खर्च हो जांदे। इस तो वद्ध न उसदी लोड़ सी अतै न उसदी तमंना।(97)

पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक तंगी के चलते कम शिक्षित अथवा अशिक्षित औरतों के शोषण को प्रस्तुत करते हुए निम्न वर्गीय कम शिक्षित दलित लड़कियों की दयनीय स्थिति को लेखक बलदेव सिंह ने *अन्नदाता* उपन्यास में दलित पात्र मीतो और दीपा के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> दीपां दी गल्ल ते मीतों जरा कु हस्सी। दीपा ने लम्मा साह लिया। कहिंदा मैं वी तेरे नाल शहर जाणा-औह ता समझदे जीवें मैं कोई सरकारी नौकरी करदी होवां। ऐथे साला हर रोज खूह पट्ट के पाणी पीणा पैंदा। घरदिआं ने ता विआह करन वेले सोचिआं सी की कुड़ी राज करूगी। धर- धर भूलुगी। उस नू की पता होणा कि घर दा रोटी टूक चलदा रखण लई, आपणा आप कित्थे कित्थे रखणा पैंदा...उसने फेर होऊंका लिआ।(221)

दलित परिवारों में आर्थिक तंगी के चलते घर का गुजारा चलाने के लिए कुछ दलित औरतों को अपना शरीर तक बेचना पड़ता है। पंजाबी उपन्यास *पंडोरी प्रोहितां* में गैर-दलित लेखक निंदर गिल्ल ने आर्थिक तंगी के कारण दलित औरतों की स्थिति को पंडित करतारे की पत्नी के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> उसने पिंड दा वग्ग चारना शुरू कीत्ता सी पर उस तो इह कम्म वी बहूता समां न होईया क्योंकि औह बंदे ता आसानी नाल चार लैंदा सी पर उस लई पशु चारने औखे सन। उस ने इह कहि कि “केहड़ा सारा समां पशुआं नाल पशु होए” वग्ग चारना छड्डिआ सी। उसने तां कदे घर दे पशुआं नू चज्ज नाल पट्ठे नहीं सन पाए। घर वाली ही बाहरों बालण इक्टठा कर के लिआऊंदी सी। दाअ लग्गण ते सबजी भाजी दी चोरी कर लेंदी। घाह पट्टठा खोत के लिआऊंदी, पशुआं नू पाऊंदी(33)

इस प्रकार दलित परिवारों के मर्दों द्वारा घर चलाने के लिए कोई कामकाज न करने पर दलित स्त्रियों को घर के बाहर जाकर कार्य करना पड़ता है ताकि परिवार में दो वक्त का खाना बन सके। भारत के अन्य क्षेत्रों में भी अशिक्षित दलित औरतों की दयनीय आर्थिक स्थिति का वर्णन *भंवर* उपन्यास में दलित लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने दलित स्त्री पात्र शांति, राधा, पूजा के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> राधा जिन घरों में सफाई का काम करती है, उन घरों में पहले उसकी सास सारा काम करती थी। एक बार सास बीमार हुई। उसके बीमार होने पर राधा को यह काम संभालना पड़ा। वह घर में सबसे छोटी बहू थी। सास जब ठीक हुई तो उसने दौबारा काम पर आना शूरू कर दिया, लेकिन उम्र बढ़ने के साथ घुटनों की बीमारी ने भी परेशान कर दिया। हारकर उन्होंने यह काम राधा को ही सौंप दिया, यह सोच कर तीन लड़कियां हैं उसके पास उनका शादी ब्याह भी करना है।(33)

दलित औरतों को आर्थिक तंगी के चलते स्वयं कार्य करना पड़ता है ताकि पारिवारिक जिम्मेदारी को निभा सके, लेकिन अशिक्षित होने के कारण यह सिर्फ दिहाड़ी मजदूरी का ही काम कर सकती हैं। दलित समाज की अशिक्षित अथवा कम शिक्षित औरतें खेतों में मजदूरी या घरों में साफ-सफाई का काम करती हैं और यह काम पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता है, ताकि पारिवारिक जिम्मेदारी को संभालने में पुरूष का हाथ बटा सके और अर्थाभाव की समस्या को खत्म कर सके। अपने परिवारों की जिम्मेदारी का निर्वहन करते हुए दलित औरतें इस प्रकार का काम करने के लिए विवश हैं और यह इनका पुशतैनी काम है। गरीब दलित परिवारों की बजुर्ग दलित औरतें भी अपने समय से यह काम करती आई हैं। इस प्रकार के कार्य को करना इन दलित परिवारों की आर्थिक मजबूरी है। वर्तमान समय में समाज आर्थिक तंगी के कारण पति पत्नी दोनों को घर चलाने के लिए कमाना पड़ता है और दलित समाज का भी यही सत्य है

कि शहरों अथवा ग्रामीण क्षेत्रों में घर चलाने के लिए पती पत्नी दोनों को मजदूरी करनी पड़ती है। प्रस्तुत उपन्यास *हमलावर* में दलित लेखक विपिन बिहारी ने गाँव के दलित परिवारों में आर्थिक तंगी के चलते पति पत्नी दोनों द्वारा मजदूरी करने की विवशता को रामप्रीत तथा उसकी पत्नी बसिया के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> धान की रौपाई हो रही थी। रोप निहारिने कम पड़ गई थी। जगदीश बाबू के कहने पर रामप्रीत ने साथ कर लिया था बसिया को रौपनी में। सहमती सकुचाती खेत के कादो में अपने पैर रोप दिए थे बसिया ने। वह अपना आंचल सिर पर इस तरह किए हुए थी जैसे घूंघट निकाले हुए थी। रामप्रीत दूर के खेत से बिचड़े ढो-ढो कर ला रहा था जगदीश बाबू आल पर घूम –घूम कर बराहिली कर रहे थे। बीच-बीच में रोप निहारिनों को इस तरह हाँकते थे जैसे ढोर गोरू हंका रहे हों। देखा था बसिया को देखते ही उनका लार टपकने लगा था।(19)

ग्रामीण क्षेत्रों में दलित परिवारों को घर चलाने के लिए पति और पत्नी दोनों को ही जमींदारों के खेतों में मजदूरी करनी पड़ती है, लेकिन जगदीश बाबू जैसे जमींदारों की गिद्द जैसी दृष्टि हमेशा दलित वर्ग की औरतों पर रहती है। जमींदार लोग इन मजदूरनियों को इन्सान न मानकर इनके साथ जानवरों जैसा व्यवहार करते हैं। पंजाबी उपन्यास *केही वगे हवा* में लेखक अज़ीज सरोए ने पंजाब के गांवों में रहने वाले दलित परिवरों की आर्थिक दृष्टि से प्रभावित दलित औरतों की दयनीय स्थिति को दलित स्त्री पात्र लाजो और उसकी बेटी के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> हुण तां सीर छड्डे नू वी पंज साल हो गए। घर दे पशू डंगर सब वेच दित्ते ते पैसे आपणे टिड्ड विच्च पा लए। लाजों ने आप दिहाड़ी दप्पा करके कुड़ी (बेटी) बारों उठाई। दोवे मावां धीआं झोनां लाऊदीआं,

> कत्ते च नर्मा चुगदीआं, वाढी करदीआं, लोकां दे घरां च भज्ज-भज्ज कम्म करदीआं (36)

इस प्रकार आर्थिक तंगी से जूझती दलित औरतें अपने परिवार का गुजारा चलाने के लिए जमींदारों के खेतों में जाकर दिहाड़ी करती हैं। भारतीय समाज में नारी की स्थिति कुछ ज्यादा अच्छी नहीं है। अपनी इसी स्थिति को सुधारने के लिए प्रत्येक वर्ग की औरत हर क्षेत्र में आगे आ रही है। शोषण के प्रति विद्रोह करना मानवीय प्रवृति है प्रस्तुत उपन्यासों में दलित जातियों में चेतना पैदा करने के लिए कोई न कोई पात्र शोषण के विरूद्ध विद्रोह करता है। प्रस्तुत उपन्यासों की दलित औरतें तत्कालीन परिस्थितियों के विरूद्ध विद्रोह करती दिखाई देती हैं जो कि उनकी स्थिति में हो रहे बदलाव का सूचक है। प्रस्तुत उपन्यास *मगहर की सुबह* में वंदनादेव शुक्ल ने शहरों में काम करने वाले दलित मजदूर औरतों में आर्थिक शोषण के प्रति आई जागरूकता को फैक्टरी मजदूरों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> इंटक नेता राजवीर सिंह महिलाओं को घर से बाहर निकलने के लिए उकसा रहा था। भाषण में वह कह रहा था। मजदूर भाइयों....8 अगस्त सन 1908 में अमरीका की एक फैक्ट्री में ऐसे ही मिल्ल मालिकों ने मजदूरों पर ज्यादती की थी तब वहां की हजारों महिलाओं ने विश्व व्यापी आंदोलन किया था। आज तक वहीं दिन 8 अगस्त को महिला दिवस के रूप में मनाया जाता है। महिलाएँ भी तो इस प्रताड़ना की सहभागी हैं। हमें इन दरिंदों के सामने झुकना नहीं है। अब हम सभी मर्द स्त्रियों को कंधे से कंधा मिलाकर आगे की राजनीति तय करनी है। इतिहास गवाह है कि जब-जब हम मजदूरों पर अत्याचार हुआ है, हमारे मजदूर भाईयों ने अपना लहू बहाकर उनका सामना किया है। हमें उस परिपाटी को आगे बढ़ाना है, ताकि हमारी संताने

> इन बईमानों की क्ररूता और अन्याय का शिकार न बन पाये ....जो हमसे टकराएगा मिट्टी में मिल जाएगा।..मजदूर एकता जिंदाबाद, कारखाना मैनेजमेंट मुर्दाबाद ।(46)

इस प्रकार आलोच्य उपन्यास में फैक्टरी मजदूर अपने परिवार की औरतों को भी आर्थिक शोषण के विरूद्ध सहभागिता करने के लिए प्रेरित करते हैं, जो कि 21वी सदी में दलित जातियों में आए परिवर्तन को दर्शाता है। उपन्यास *भंवर* में दलित लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने दलित शिक्षित महिलाओं द्वारा अपने हक्कों के प्रति आवाज उठाने और दलित समाज में हुए परिवर्तन की स्थिति को दलित स्त्री पात्र पुष्पा के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> मुझे पता है घर वाले तुम्हारी नौकरी करने के लिए साफ मना कर देंगे।“जब घर का चूल्हा बर्तन ही कराना था तो अनपढ़ लाते न, पढ़ी लिखी लाने की क्या जरूरत थी। मैं पढ़ी लिखी नौकरी कराने के लिए नहीं लेकर आया था, सोचा था कि आगे की जो पीढ़ी आएगी उसके लिए पढ़ी लिखी लड़की लाना ही ठीक होगा।(101)

दलित समाज की महिलाएँ शिक्षित होकर प्राचीन मान्यताओं के प्रति विद्रोह कर रही हैं। प्रस्तुत उपन्यास *भंवर* में लोकेश द्वारा पुष्पा को नौकरी करने से रोकने के लिए उसे छोड़ने की धमकी देता है तो पुष्पा बगैर देर लगाए अपने हक्क के लिए खड़ी हो जाती है। प्रस्तुत उपन्यास में लेखक कैलाशचन्द्र ने दलित शिक्षित औरतों में जागरूकता की स्थिति दलित स्त्री पात्र पुष्पा के माध्यम से प्रस्तुत की हैः

> दिखा दी न अपनी औकात! लेकिन इतना समझ लो, मैं उस जमाने की औरत नहीं हूँ जिस जमाने की माँ थी। माँ को हक्क लेना नहीं आया लेकिन मैं अपना हक्क सीधी अंगुली से न मिले तो टेडी अंगुली से लेना

> जानती हूँ। दूसरी बात मैं पूरी जिंदगी माँ की तरह अकेले भी नहीं बिताऊंगी। मैं तुम्हें छोड़ने के बाद दूसरी शादी करना भी जानती हूँ, और अपना हक्क लेना भी।(105)

जहाँ दलित वर्ग की पढ़ी लिखी स्त्रियां अपने हक्क के लिए आवाज उठाती नज़र आती हैं वहीं अशिक्षित दलित औरतों की सोच भी समय के साथ बदल रही है। आलोच्य उपन्यास *भंवर* में कैलाश चन्द्र ने अशिक्षित औरतों में जागरूकता को घरों में साफ-सफाई का कार्य करने वाली दलित पात्र राधा के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> बीबी जी आज बैंक जाना है पैसे जमा कराने। तीन-तीन बेटियां हैं मेरी बचत नहीं करूगीं तो कैसे होगी उन की शादी। बात तो तेरी ठीक है सुधाकर को देती जमा करा देता। “अपना काम खुद करना चाहिए बीबी जी अगर सुधाकर जी बैंक में न होते तो मुझे खुद जाना पड़ता। इसी बहाने बैंक में पैसा जमा कराने के बारे में भी पता चल जाएगा। वर्ना में तो विकलांग रह जाऊगीं..दूसरे के भरोसे कब तक रहुँगी बीबी जी। (33)

पुष्पा के घर में काम करने वाली अशिक्षित दलित जाति की राधा अपने बच्चों के भविष्य को लेकर अभी से चिंतित दिखाई देती है, और उनके भविष्य को सुरक्षित रखने के लिए बैंक में पैसे भी जमा करवाती है। वर्तमान समय में ग्रामीण दलित औरतों के द्वारा भी उनके साथ हो रहे अन्याय और उत्पीड़न के खिलाफ आवाज उठाई जाती है परन्तु फिर हथियार डालने पड़ते हैं क्योंकि उनको पता है कि उनका साथ देने वाला कोई नहीं है और निम्न जाति की औरतों को यह सब सहन करना ही पड़ता है। *हमलावर* उपन्यास में लेखक विपिन बिहारी ने उत्पीड़न और जातिवादी दंश झेलती औरतों की स्थिति को दलित पात्र बसिया के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> बसिया का उग्र होना अप्रतयाशित था, सो जगदीश बाबू सकदम हो गए थे। उन्हें जरा भी विश्वास नहीं था कि बसिया ऐसा प्रतिरोध करेगी। थोड़ी देर के लिए उनके हाथ पैर ढीले पड़ गए थे लेकिन मालिक होने का गर्व और एक मजूर की विवशता,"बड़ी सती सावित्री बनी फिरती हो, लगता है अभी मर्द के पाले नहीं पड़ी हो।(20)

आर्थिक कारणों से नारी शोषण की समस्या दलित समाज के शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में आम देखी जा सकती है। जिसका ज्यादा शिकार कम शिक्षित अथवा अशिक्षित स्त्रियां होती हैं। आर्थिक अभावग्रस्तता के कारण या परिवार के पुरूष सदस्यों की बेरोजगारी के कारण इनकों निर्धनता की समस्या का सामना करना पड़ता है। जिससे बचने के लिए दलित समाज की औरतें उच्च घरों में साफ-सफाई का कार्य करती हैं ताकि परिवारिक स्थिति में कुछ सुधार ला सके। दलित समाज के इन हालातों के कारण कई बार दलित समाज की औरतों को कई प्रकार के शोषण को झेलना पड़ता है। आर्थिक कारणों से प्रभावित दलित समाज की औरतों की स्थिति को *मगहर की सुबह* उपन्यास में दलित पात्र मैना के माध्यम से, रूपसिंह चन्देल ने *दगैल* उपन्यास में सुनीता के माध्यम से *भंवर* उपन्यास में राधा के माध्यम से और *विद्रोह* उपन्यास में सफाई कर्मी समाज(स्त्रियां), *हमलावर* उपन्यास में बसिया के माध्यम से प्रस्तुत किया है। पंजाब के ग्रामीण तथा शहरी समाज में आर्थिक कारणों से प्रभावित औरतों की स्थिति को पंजाबी उपन्यास बलदेव सिंह के*अन्नदाता,* एस.एस.कालड़ा ने *मुक्ति,* तथा निंदर गिल्ल ने *पंडोरी प्रोहितां* तथा अज़ीज सरोए ने *केही वगै हवा* उपन्यास में प्रस्तुत किया है। इस प्रकार लेखक ने दलित परिवारों की शिक्षित तथा अशिक्षित औरतों को आर्थिक अभावग्रस्तता से प्रभावित दिखाया है वही वर्तमान समय में उनकी सोच में आए परिवर्तन को वंदना देव शुक्ल ने *मगहर की सुवह,* कैलाश चन्द्र ने*भंवर* तथा विपिन बिहारी ने *हमलावर* उपन्यास में प्रस्तुत किया है।

निष्कर्षतः क्हा जा सकता है कि दलित विमर्श के आर्थिक आयाम के उपर्युकत विवेचन से स्पष्ट होता है कि दलितों का जीवन अर्थाभाव, बेगार, ऋण, बेरोजगारी आदि आर्थिक समस्याओं से ग्रस्त है। अर्थाभाव ने इनकी आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय बना दी है और उस पर शोषक वर्ग का शोषण इनके जीवन का भयानक सत्य बना हुआ है जिसको यह समाज विवशता पूर्ण ढो रहा है। इनके जीवन में शोषण का चक्र लगातार चलता रहता है बदलता है तो सिर्फ उसका रूप। अर्थाभाव, बेरोजगारी, महँगाई, बेगारप्रथा, ऋणग्रस्तता इत्यादि इनके जीवन के शोषण के वह पक्ष है जिससे यह लोग चाह कर भी नहीं बच पाते। आर्थिक स्थितियां इन्हें अनैतिक कार्यों की और प्रवृत करती है। कीड़े मकौड़ों से भी दयनीय स्थितियों में जीवन यापन कर रहे इस वर्ग में विद्रोह के स्वर इनकी आर्थिक स्थितियों द्वारा ही उत्पन्न होते हैं। दलित व्यकित के जन्म से लेकर मृत्योपरान्त साथ देने वाली जाति के साथ काफी सीमा तक ऋण भी आ जाता है अर्थात मरणोपरांत भी यह लोग ऋणग्रस्तता के इस चक्कर से मुक्त नहीं हो पाते। सच तो यह है कि आर्थिक कु-चक्र के दानव ने वर्तमान स्थितियों में निम्न वर्ग को शोषण को पंजों में दबोच लिया है। आर्थिक असमानता ही सामाजिक असमानता को कायम रखने के लिए जिम्मेदार है। आर्थिक असमानता के कारण दलितों की सामाजिक स्थिति कमजोर दिखाई देती है। दलित तथा गैर-दलित साहित्यकार अपने समय की आर्थिक समस्याओं के प्रति जागरूक हैं। प्रस्तुत उपन्यासों में दलित विमर्श के आर्थिक पक्ष से जुड़े सभी बिन्दुओं को परत-दर-परत अपने उपन्यासों में उघेड़ा है और विभिन्न पात्रों को आधार बनाकर दलित जीवन के आर्थिक पक्ष को प्रस्तुत किया है।

अध्याय 5

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्शःएक तुलनात्मक अध्ययनः धार्मिक तथा सांस्कृतिक आयाम

धर्म प्रधान देश होने के कारण भारतवासियों की आस्था सदैव ईश्वर में रही है फिर चाहे वह किसी भी जाति अथवा वर्ग विशेष के हो। धर्म आदिकाल से ही मानव जीवन से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित रहा है। भारत में धर्म एक व्यापक अवधारणा है जिसके साथ आने पर संस्कृति एक अंग बन जाती है, जिसमें आस्तिकता-नास्तिकता, पूजा-अर्चना, विधि-विधान, दार्शनिक मान्यताएँ तथा नैतिकता, संस्कार और रीति-रिवाज आदि किसी न किसी रूप में जुड़े रहते हैं। वास्तव में धर्म लोगों के लिए नैतिकता है, आचार विचार है ईश्वर के प्रति आस्था है। यही कारण है कि आज भी जन-जीवन में धार्मिक कृत्यों के प्रति आस्था देखने को मिलती है। वास्तव में धर्म सामाजिक व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण स्तम्भ है।

5.1 दलित विमर्श धार्मिक आयाम

भारतीय समाज आरम्भ से ही धर्म परायण समाज रहा है परन्तु प्रत्येक युग में धर्म का रूप एक सा न होकर बदलता रहता है अर्थात संसार के किसी भी धर्म की स्थिति और सत्ता एक सी नहीं रही है। बदलती हुई सामाजिक धार्मिक परिस्थितियों ने धर्म को भी समय-समय पर प्रभावित किया और इन बदली हुई परिस्थितियों को साहित्यकारों ने साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है। साहित्यकार अपने युग विशेष की घटनाओं, परिस्थितियों व प्रवृतियों को अपने सांचे में उड़ेलकर उन्हें अपने भावों का जामा पहनाकर नए संसार की सृष्टि करता है।

समाज के विभिन्न समूहों की बात करते हुए जब दलित समाज पर नज़र दौड़ाई गई तो ज्ञात हुआ कि दलित समाज में धर्म एक शास्त्र के रूप में ही उपयोग हुआ है। धर्म सदैव ही दलित समाज के शोषण का कारण रहा है। दलित समाज का जितना शोषण धर्म को केन्द्र में रखकर किया गया है। संभवतः उतना किसी अन्य वस्तु अथवा पक्ष को आधार बना कर नहीं हुआ। जहाँ धर्म के रूप में मानवीय समता

व एकता के तत्व दृष्टव्य होते थे, वहीं धर्म दलित समाज की प्रगति पथ का सबसे बड़ा अवरोधक बना और दलित समाज की गुलाम मानसिकता को पोषित करता रहा। जितनी पुरानी धर्म की कुरीतियां हैं, उतना ही पुराना उनका विरोध भी है। यदि हम हिन्दी साहित्य के इतिहास पर चिंतन करे तो पाऐंगे कि हिन्दी साहित्य का इतिहास स्वस्थ मानसिकता से रचित नहीं है, क्योंकि इतिहास में न तो दलित चेतना के और न ही इस चेतना के अग्रदूत नाथों एवं सिद्धों को उचित महत्व दिया गया। इसका प्रमुख कारण था इतिहासकारों का मनु की विचारधारा का प्रबल अनुयायी होना। ये कवि मनु की विचारधारा के विपरीत जाकर समानता एवं भेदभाव रहित समाज के पक्षधर थे। सिद्धों के बाद नाथों ने भी भेदभाव रहत समाज की अलख को जगाए रखा जिनका समय लगभग बाहरवी शताबदी से चौहदवी शताबदी तक माना जा सकता है। सिद्धों नाथों की परम्परा का और अधिक सश्कत रूप पन्द्रहवीं शताबदी में कबीर तथा रैदास ने प्रस्तुत किया। इन कवियों ने दलितों पर होने वाले अत्याचारों, भेदभाव, छुआछूत, पाखंड आदि को करीब से भोगा जो नर्क से भी भयानक था। इन कवियों ने निराकार ब्रह्म की स्थापना कर वर्ण व्यवस्था को अस्वीकार किया। अंधविश्वास, रूढ़ि, सामाजिक मायाजाल से मुक्ति दिलाने में संत कवियों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। संत कवियों ने दास्ता, अस्पृश्यता, शोषण, मूर्तिपूजा, कर्मकांड आदि विषयों पर लेखनी चलाई। प्राचीन काल से चली आ रही धार्मिक कुरीतियों के विरोध की जो लहर थी, उसने आधुनिक काल में कई सामाजिक धार्मिक आंदोलनों का रूपधारण कर लिया। नवजागरण के पश्चात आए औद्योगिक विकास व स्वांतत्रयोत्तर तकनीकि प्रगति से उत्पन्न उपलब्धियों और नव चिंतन ने धर्माश्रित भारतीय संस्कृति को नया रूप देने का प्रत्येक संभव प्रयास किया परन्तु देश में व्याप्त अशिक्षा व धर्म के प्रचलित रूप ने इस कार्य को पूरी तरह सफल नहीं होने दिया। अशिक्षा और अज्ञानता के चलते दलित जातियों में धार्मिक कृत्यों में आस्था,

धर्म में जातिवाद और अंधविश्वास इत्यादि ने जड़ बनाई जिसको दलित विमर्श के अंतर्गत 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित लेखकों ने अपने उपन्यासों के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श तुलनात्मक अध्ययन के अंतर्गत गैर- दलित तथा दलित उपन्यासकारों ने धार्मिक जीवन के विभिन्न पक्षों से जुड़े बिन्दुओं को तुलना का आधार बनाया है। जिसमें दलित समाज में धर्म में व्याप्त जातिवाद की समस्या के चलते धर्म में आस्था तथा दलित जातियों में व्याप्त अंधविश्वास तथा रूढ़िवादी कारणों की तुलना करते हुए विकास और परिवर्तन के बिन्दुओं को प्रस्तुत किया है।

5.1.1 धर्म और जातिवाद

धर्म चेतना का एक ऐसा पक्ष है जो जीवन के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करता है। चाहे वह सामाजिक पक्ष हो आर्थिक या राजनीतिक अर्थात भारतीय समाज को धर्म ने अत्यधिक प्रभावित किया है। धर्म प्राचीन काल से ही भारतीय समाज का संचालक रहा है। धर्म में जातिवाद को परिभाषित करते हुए रवि कुमार अनु *हिन्दी उपन्यास पंजाब का सांस्कृतिक संदर्भ* पुस्तक में कहते हैं--

> भारत एक ऐसा देश है, जिसके अधिकांश विचारों व आचारों को आदिकाल से धर्म संचालित करता आया है। हम किसी भी युग के इतिहास को उठाकर देख सकते हैं कि उस युग के समाज को धार्मिक विचारों ने कहां तक प्रभावित किया। हमारा अहिंसावादी दृष्टिकोण, कर्मफल में विश्वास, पुनर्जन्म में विश्वास, ईश्वरवादिता, यहाँ तक कि वर्ण भेद को भी धार्मिक ग्रंथ ही प्रचारित करते हैं। (86)

अर्थात धर्म समाज के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित करता है। विविधता में एकता भारत की विशेषता रही है, हमारा देश विभिन्न भाषाओं, धर्मों जाति-जनजातियों में बंटा हुआ है। यहाँ प्रत्येक जाति का अपना अलग सम्प्रदाय है और उसी के अनुसार उसका आचार विचार व रहन-सहन है। प्रत्येक जाति का अपना ईष्ट होता है जिसके अनुसार वे अपने धार्मिक कार्य करते हैं। प्रस्तुत विमर्श के अंतर्गत हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित उपन्यासकारों ने धर्म में जातिवाद की समस्या को प्रस्तुत किया है। पंजाब में ग्रामीण क्षेत्रों में धर्म में व्याप्त जातिवाद की इस समस्या को पंजाबी उपन्यास *पंडोरी प्रोहितां* में गैर-दलित लेखक निंदरगिल्ल ने धार्मिक संस्था गुरूदुआरों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> दादे मंगाऊणे दे गुरूदुआरे वी भरिष्ट होए फिरदे आ, तरलोचन ने ता नहीं पर तरलोचन दी मां ने देखिआ सी ते दसदी सी कि राड़ा साहिब गुरूदुआरे हरीजनां दी लंगर विच्च अलग-अलग लाईन लगदी सी उसने तां बचपन विच्च आपणे घर, आपणे सीरी सांझीआं नू आपणे अलग भांडिया विच्च घर दे इक्क खूंजे खांदिआ देखिआ सी।(12)

इस प्रकार वर्तमान समय में ग्रामीण क्षेत्रों में धार्मिक स्थानों पर जातिवाद को आधार बना कर निम्न जाति के लोगों को घृणा की दृष्टि से देखा जाता है, और उनके साथ भेदभाव किया जाता है। हिन्दी उपन्यास *तर्पण* में गैर-दलित लेखक शिव मूर्ति ने भी धर्म में जातिवाद को आधार बनाकर फैलाए गए अंधविश्वास की समस्या को धर्मू पंडित की पत्नी के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> बड़ा बेढब कानून है। मामा जी बताते हैं " जैसे पहले ब्रह्म हत्या का कोई प्रायश्चित नहीं था वैसे ही अब चमरदोखी कानून की कोई काट नहीं है। जेल जाने के सिवा। ब्रह्म हत्या का पाप तो हत्या होने पर

> लगता था। चमरदोख तो चमार को चमार कह देने भर से लग जाता है। (45)

वर्तमान समय में धर्म में जातिवाद का प्रभाव इस कदर बढ़ गया है कि लोग जाति आधारित धर्म बनाने से गुरेज नहीं करते, और तो और समाज में जाति के नाम से भी धर्म को बांटा जा रहा है। वर्तमान समय में जाति धर्म का अटूट अंग बन गयी है। पंजाबी के उपन्यास *शांतिपर्व* में लेखक देशराज काली ने पंजाब में जाति और धर्म के सम्बन्ध में ऐतिहासिक दृष्टिकोण को आधार बनाकर प्रस्तुत किया हैः

> शाट-शाट गल्ल कर रिहा। डॉ. साहब ने बुध धर्म अखतियार करन लई ऐलान कर दित्ता कि सारे जिहड़े शडयूलकास्ट आ, औह बुध धर्म अपनाऊणगे। अच्छा उदों साडे विच्चों जेहड़े अग्गे आ गए सी....एक बहुत बड़ा मेला लगदा सी, फगवाड़े दे कौल, चक्क हकीमां पिंड ‘च’ उत्थे बहुत बड़ा इक्कटठ हुन्दा सी उत्थे गुरू रविदास मंदिर सी। (43)

वास्तव में धर्म और जातिवाद दोनों साथ-साथ चलते हैं। जाति के ताअने से छुटकारा पाने के लिए कई दलित जातियाँ धर्म परिवर्तन भी करती हैं, ताकि उनके प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में परिवर्तन आ सके। धर्म परिवर्तन की समस्या से पंजाब का ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र भी अछूता नहीं है। पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में जातिवाद आधारित धर्म की समस्या को पंजाबी उपन्यास *परणेश्वरी* में लेखक देशराजकाली ने धार्मिक डेरा नामक संस्था के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> आहो-आहो, इह आपणा डेरा अ, आदि धर्मिआं दा डेरा। सरकार आपणे बहुत पहुँचे होए सन। औहनां ही आपणी कौम दा लड़ फड़िया, नहीं तां कोण संभालदा सी। इत्थे इहनां नू। साडा ता परछावा वी भैड़ा गिणदे

> सन। मैं आप अक्खीं देखिआ, जदों सरकार ने बाबा साहब अम्बेड़कर नू लुधिआने बुलाया सी....(85)

इस प्रकार पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में दलित जातियों द्वारा जाति से जोड़कर डेरे या धार्मिक स्थल बनाने का प्रचलन भी बढ़ रहा है। पंजाबी उपन्यास *केही वगै हवा* में दलित लेखक अज़ीज सरोए ने पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में धर्म में जातिवाद की समस्या को प्रस्तुत किया हैः

> सवेरे दे साडे चार वज्ज चुके सी पर हनेरा अजे वी काफी सी। पहु फुट आई सी। वड्डे गुरूदुआरे वाले पाठी ने नलके तो ताजे पाणी दी बालटी भर के इस्नान वी कर लिया सी। फिर तेड़ लपेट कपड़े नू पूरे जोर नाल नचोड़ के कधौली ते सुकणा पा दित्ता। नित्त दी तरां उसने माईक ते पोले-पोले ठोले जिहे मार के चैत महीने दा दिन, वार, तित्थ, तरीक, गंडमूल आदि दसदिआं स्पीकर चालू कीत्ता। कोई बोले राम-राम कोई बोले खुदाई शब्द चारे कूटां 'च' गूंज उठिआं। कुछ ही समय बाद रमदासीआं दे गुरू घर अतै नैड़ले पिंडा रिऊंद मघाणीणां भावां दे गुरू घरां 'च' आऊदीआं अवाजां आपस विच्च टकराऊण लग पईया। परतवीआं अवाजां संग कुछ वी समझ नहीं सी आ रिहा। इन्ज लगदा सी, जीवें कोई मुकाबला चल रिहा होवे(11)

वर्तमान समाज में जाति आधारित धर्मों की होड़ लगी है और प्रत्येक जाति अपने धर्म का प्रचार करने में लगी है। इस प्रकार प्रत्येक सम्प्रदाय द्वारा अपने आस्तित्व और श्रेष्ठता को बनाए रखने के लिए दूसरे को दबाने का प्रयास शूरू कर दिया, जिस कारण सभी सम्प्रदाओं में तनाव बढ़ने लगा। ये कहा जा सकता है कि जातिवाद का निर्वाहन करने में धर्मिक संस्थाएँ भी पीछे नहीं हैं। धर्म में जातिवाद का प्रभाव इस

तरह से बढ़ चुका है कि लोग स्थान परिवर्तन के समय जाति के साथ धर्म को भी परिवर्तित करते हैं, ताकि उनको कोई पहचान न सके और उन्हें जाति आधारित अस्पृश्यता का सामना न करना पड़े। दलित जातियों में जाति अथवा धर्म परिवर्तन की समस्यां को उपन्यास *विद्रोह* में दलित लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने दलित पात्र विक्रम के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> हां-हां ताई। वैसे भी शहर में हमारे समाज के बहुत लोग हैं जो अण्डा मास मछली नहीं खाते। कुछ तो राधा-सुआमी भी बन गए हैं, शराब को हाथ तक नहीं लगाते, लेकिन ताई उनके बच्चों के रिश्ते आसानी से नहीं हो पाते।(147)

धर्म में जातिवाद की समस्या तथा अस्पृश्यता के कारण दलित समुदाय के लोगों का मंदिरों तथा धार्मिक संस्थाओं में प्रवेश वर्जित था। *हमलावर* उपन्यास में दलित लेखक विपिन बिहारी ने भारत के अन्य ग्रामीण क्षेत्रों में गैर-दलित तथा दलित समाज के मध्य धर्म में जाति से जुड़ी इस समस्यां को लेखक ने दलित पात्र मदन के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> शुद्रों के निकट जाना। उनके मंदिर परिवेश पर प्रतिबंध लगा हुआ है आज भी वे अपनी भक्ति का प्रदर्शन किसी सार्वजनिक स्थल पर नहीं कर सकते। शुद्रों पर तरह-तरह की कहावतें बनाई गई हैं। यहाँ तक कि तुलसीबाबा भी ढोल.....शुद्र वे भी पढ़ चुके थे ये चौपाई और बाह्मणों को पूजहिं विप्र सब गुनहीनां चौपाई से जब गुजरते थे तो उनमें अहंकार भर जाता था(35)

धर्म में जातिवाद के चलते भारत के कुछ क्षेत्रों में वर्तमान समय में भी दलित जातियों को मंदिर तथा धार्मिक स्थलों इत्यादि में दाखिल होने से वंचित रखे जाने की समस्या

को दर्शाया गया है। इस प्रकार कुछ गैर-दलित जातियों के द्वारा निम्न वर्ग की अशिक्षित जनता को धर्म के नाम पर समाज को बांटने के प्रयासों को भी प्रस्तुत किया है और अशिक्षित दलित जाति के लोग इनकी इन चालों का शिकार हो जाते हैं।

इक्कीसवीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में गैर-दलित तथा दलित उपन्यासकारों ने समाज में धर्म से जुड़ी जातिवाद की समस्या को प्रस्तुत किया है। पंजाब में धर्म से जुड़ी जातिवाद की समस्या को उपन्यास *पंडोरी प्रोहितां* में लेखक निंदर गिल्ल, *परणेश्वरी* और *शांतिपर्व* उपन्यास में लेखक देशराजकाली तथा *केही वगै हवा* में लेखक अज़ीज सरोए ने प्रस्तुत किया है। हिन्दी उपन्यासकारों ने भी धर्म में जातिवाद की समस्या को *तर्पण* उपन्यास में शिवमूर्ति ने, *विद्रोह* उपन्यास में कैलाशचन्द्र चौहान तथा *हमलावर* उपन्यास में विपिन बिहारी ने प्रस्तुत किया है परन्तु इस से जुड़ी विकास और परिवर्तन की स्थिति को पंजाबी तथा हिन्दी के किसी भी उपन्यासकार ने प्रस्तुत नहीं किया।

5.1.2 धार्मिक कृत्यों में आस्था

समाज को संचालित करने वाले तत्वों में 'धर्म' का महत्वपूर्ण स्थान है। भारतीय समाज के प्रत्येक वर्ग के व्यकित के जीवन में ईश्वर के प्रति अटूट आस्था देखने को मिलती है। भारतीय परम्परागत सामाजिक संरचना में व्यकित के जीवन का आधार धर्म है। वास्तव में धर्म आदिकाल से ही मानव जीवन के साथ अप्रत्यक्ष और प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित रहा है, इसलिए जीवन में ईश्वर और धर्म से जुड़े कृत्यों के प्रति अटूट आस्था देखने को मिलती है अर्थात भारत में प्रारंभ से ही धर्म को महत्व दिया गया है। यहाँ तक कि जीवन में कोई कष्ट आने पर भी भगवान को ही सहायी माना जाता है। 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी के उपन्यासकारों ने दलित जीवन में धर्म के प्रति आस्था को दलित जातियों के द्वारा किए जाने वाले धार्मिक कृत्यों के

माध्यम से प्रस्तुत किया है। ग्रामीण दलित समाज की धर्म के प्रति आस्था को *मगहर की सुबह* उपन्यास में गैर-दलित लेखक वंदनादेव शुक्ल ने दलित पात्र दम्मो के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> कहीं पास में सायद कोई मंदिर था जहाँ से मंदिर की घंटीओं और नगाड़ों की आवाज़े आ रही थी जो सुन्न सुनाटे में ज्यादा ही गुँज रही थी। दम्मों की आँखे एक बार झपझपाई, उसने आंख बंदकर ली और दोनों हाथों की उंगलिया आपस में उलझाकर हाथ जोड़ लिए।(94)

प्रस्तुत उपन्यास में जब दम्मो को प्रसूत पीड़ा के दौरान अस्पताल में लिजाया जाता है तो उस समय दम्मो की हालत काफी नाजुक होती है। अस्पताल में लेटे हुए दम्मो को पास ही से कहीं मंदिर की घंटियों की आवाज सुनाई देती है और घंटियों की आवाज सुनकर दम्मो का हाथ जोड़ कर प्रार्थना करना इस बात को दर्शाता है कि दलित वर्ग के लोग भी धर्म में अथवा धार्मिक कृत्यों में आस्था रखते हैं। *कानपूर टू कालापानी* उपन्यास में लेखक रूप सिंह चन्देल ने वाल्मीकि जाति के गुरू महाऋषि वाल्मीकि के आश्रम की चर्चा गैर-दलित पात्र दुर्गा प्रसाद सिंह जो कि जाति का ठाकुर है और अपने भतीजे सरजू को वाल्मीकि आश्रम के दर्शन करवाने ले जाता है के माध्यम से की हैः

> अब मैं तुम्हें वह पौराणिक आश्रम दिखाऊंगा, जिसे बाल्मीकि आश्रम क्हा जाता है। बाल्मीकि आश्रम !“सरजू की उत्सुकता बढ़ी।” वहाँ कोई सन्यासी रहते है, उसने पूछा?“रहते थे” आज भी कोई साधू रहता होगा। पता नहीं लेकिन राम के समय बाल्मीकि नाम के संत थे, जिनका आश्रम है वह। उन्होंने रामायण लिखी थी।(24)

दलित वर्ग के धार्मिक स्थलों का यदि गैर-दलित जाति के लोग भ्रमण करते भी हैं तो सिर्फ एक ऐतिहासिक स्थल के नाते। इसके अतिरिक्त उनके मन में दलित जातियों के देवी-देवताओं और उनसे जुड़े धार्मिक स्थलों के प्रति कोई आस्था नहीं होती। *तर्पण* उपन्यास में गैर-दलित लेखक शिवमूर्ति ने दलित समुदाय के लोगों में धर्म के प्रति आस्था और विश्वास को दलित पात्र पिआरे के माध्यम से प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत उपन्यास में दलित जाति का नेता बलात्कार पीड़ित दलित युवती रजपतिया के पिता को थाने कचहरी में जाकर झूठा बयान देने के लिए उकसाता है परन्तु पियारे धर्म और ईश्वर का वास्ता देकर झूठ बोलने से मना कर देता हैः

> शुरू से धर्म कर्म में यकीन करता रहा है पियारे ! बड़ी बेटी के साथ हुए अन्याय से भगवान की न्यायप्रियता के प्रति उसकी आस्था डगमगाई जरूर लेकिन बाद में भाई जी के साथ होने पर उनमें लाख तर्कों के बावजूद भगवान के आस्तित्व को नकारने लायक अनास्था उसमें नहीं पैदा हो सकी। झूठ बोलना तो भगवान को नाराज करना ही होगा।(25)

प्रस्तुत उपन्यास में दलित जाति का नेता दलित पीड़ित युवती रजपतिया के पिता पिआरे को थाने कचहिरी में जाकर झूठा बयान देने के लिए उकसाता है, परन्तु पियारे धर्म और ईश्वर का वास्ता देकर झूठ बोलने से मना कर देता है, यहीं नहीं धर्म में आस्था के चलते ये लोग देवी-देवताओं को याद करके उन्हें प्रसाद चढ़ाने की मन्नत मानते हुए सम्बन्धित कार्य के सफल होने की प्राथना करते हैं। संकट के समय हर व्यकित अपने ईष्ट देव को याद करता है और संकट बचाव के लिए प्रार्थना भी करता है। पंजाब में दलित जाति के लोग भी धर्म में आस्था के चलते भगवान को याद करना नहीं भूलते। *अन्नदाता* उपन्यास में बलदेव सिंह ने दलित समुदाय की ईश्वर में आस्था को दलित पात्र किशने के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> हे वाहेगुरू, कुल्ल संसार नू सुखीं रखीं, किसे नू औखी घड़ी न विखाई ! हे भगत रविदास आपणे भगतां ते मेहर करीं....किशना हत्थ जोड़ के अरदास करन लग्गा।(84)

इस प्रकार दलित समुदाय के लोग भी अन्य हिन्दू जातियों की तरह हर समय भगवान को याद करते हैं और अपने परिवार और संसार के लिए सुख की कामना करते हैं। धर्म में व्याप्त जातिवाद के महत्व के कारण तथा धार्मिक कृत्यों में आस्था होने के कारण दलित समाज के लोग चाहते हैं कि उनके धार्मिक सम्प्रदाय अलग हो उन्हें किसी दूसरी जाति के धार्मिक स्थलों में जाकर सिर न झुकाना पड़े। इन धार्मिक स्थलों को यह लोग सामाजिक प्रतीक के रूप में देखते हैं। पंजाब में धर्म में विषमता की समस्या को पंजाबी उपन्यास *पंडोरी प्रोहितां* में गैर-दलित लेखक निंदर गिल्ल ने प्रस्तुत किया हैः

> काश साडा मजहबी सिक्खा दा वी कोई आपणा अलग गुरू घर हुन्दा, (हुण रविदासिए रविदास नू भगत रविदास दी थां ते गुरू रविदास कहण लग पए सन। ते उसदी रचना नू गुरबाणी) ते असी वी उसदा अवतार दिवस इहनां वांग धूम-धाम नाल मनाऊंदे।(80)

पंजाब में जहाँ गुरू परम्परा के कारण सिक्ख धर्म के चलते दलित जातियों की गुरूदुआरों में आस्था देखने को मिलती है वहीं हिन्दू धर्म से जुड़े देवी-देवताओं के प्रति आस्था को उपन्यास *हनेरी रात दे जुगनू* में दलित लेखक अज़ीज सरोए ने दलित बस्ती में बने एक कच्चे मंदिर के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> बस्ती दे बिल्कुल विच्चकार पिलिल्याँ इट्टा दी बणी होई छोटी जिही चौकड़ी। चौकड़ी ऊपर एक मट्टी बणी होई है। इह मट्टी सरों दे तेल अतै धुएँ नाल थिन्दी होई है। मट्टी दे बिल्कुल जड़ विच्च दस्स फूट लम्बा

> बांस जिहड़ा कि रंग-बिरंगीयां चुन्नीयां, दुपट्टिआं मोर दे खम्बां नाल सिंगारिआं होइया है। इह चौकड़ी गुरू पीरां दी याद विच्च बणाई गई है। वक्त मिलण ते वेहड़े दे सीधे-साधे लोक आपणे मन दा भार इत्थे मत्था टेक के हौला करदे हन।(19)

दलित जातियों में धर्म के प्रति आस्था के चलते दलित समुदाय के लोग हर देवी-देवता की पूजा करते हैं और जीवन के प्रत्येक पक्ष से जुड़े सुख-दुख के समय इन देवी देवताओं को मनाना भी नहीं भूलते। हिन्दू धर्म से जुड़े देवी-देवताओं के प्रति दलित जातियों की आस्था को उपन्यास *हनेरी रात दे जुगनू* में दलित लेखक अज़ीज सरोए ने प्रस्तुत किया हैः

> इत्थे लकड़ दी बणी होई हनुमान दी मूर्ति सरों दे तेल नाल गच्च होई पई सी। हर मंगलवार इत्थे हनुमान दी पूजा हुन्दीं है। व्याह शादी वेले वी लोक इत्थे आ के मिट्ठे चोलां दा प्रसाद चड़ा के जांदे हन। (37)

पंजाबी उपन्यास *परणेश्वरी* में लेखक देशराज काली ने दलित जाति की ग्रामीण औरत जंगीरों के माध्यम से सिद्ध बली को चूरमा चढ़ा कर प्रसन्न करने के उदाहरण को प्रस्तुत किया हैः

> जंगीरों ने बड़ी फुर्ती नाल चूरमा वी तैयार कर लिया। सूरज वी उन्नी ही तेजी नाल पच्छम वल सरक रिहा सी। टोली वाले आपणे डेरू कस्स रहे सन ...इक्क ने डेरू ते हल्की जिही छटी दी छोह दित्ती तां डऊं-ऊ-ऊ दी बड़ी मिट्ठी आवाज आई। हुण सारे चेले दी उडीक कर रहे सन। सिद्ध बली दे थड़े ते चूरमां ले के जाण तो पहला सारीआं रस्मां चेले ने ही निभाऊणीआं सन।(9)

पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में दलित जाति के लोग भी सभी धर्मों तथा धार्मिक कृत्यों में आस्था रखते हैं। इस प्रकार पंजाबी और हिन्दी के दलित रचनाकारों ने पंजाब तथा भारत के अन्य क्षेत्रों में दलित समुदायों की धर्म के प्रति आस्था को व्यकत किया है। उपन्यास *विद्रोह* में दलित लेखक कैलाशचन्द्र ने धर्म के प्रति आस्था को दलित जाति के विक्रम की माता फूलों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> चल ठीक है बदल लियो घर तेरी नौकरी लगी है, अपने देवी-देवताओं की कुछ भेंट पूजा तो कर दियो न। फूलों के पुराने संस्कार जागे .....क्यों उनके आशीर्वाद से ही तेरी नौकरी लगी है । भेंट पूजा तो करनी पड़ेगी "तुझे"।(25)

इस प्रकार उपन्यास के दलित पात्र विक्रम को जे.ई की नौकरी मिल जाने पर उसकी मां फूलों के द्वारा विक्रम की नौकरी लगने का श्रेय देवी-देवताओं को दिया जाता है। दलित जातियों में व्यकित अमीर हो या फिर गरीब दोनों तरह के परिवारों में धर्म तथा धार्मिक कृत्यों के प्रति आस्था देखने को मिलती है। भारत में दलित जातियों की धर्म में आस्था को कैलाशचन्द्र चौहान के *विद्रोह* उपन्यास में दलित पात्र स्नेहा और राघवेन्द्र के वक्तव्य के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> वह उस कमरे में भी गई, जहाँ उन्होंने एक छोटा सा मंदिर स्थापित किया हुआ था। उसमें शेरावाली, विष्णु, सीताराम, भोले शंकर, लक्षमी, गणेश की फोटो लगी हुई थी। आगे की तरफ एक छोटी सी मूर्ति भी थी जो कि साईबाबा की थी। नीचे एक पीतल का चिराग और हाथ से बजाने वाली पीतल की एक छोटी सी घंटी भी थी। मंदिर के सामने बैठने के लिए गद्दी थी।जिस पर बैठ कर घर के सदस्य पूजा करते थे। (75)

स्नेहा राघवेंदर के घर उसके माता पिता से मिलने जाती है तो राघवेन्द्र के घर के एक कमरे में एक मंदिर बनाया होता है जिसमें हिन्दू धर्म से जुड़े सभी देवी-देवताओं की फोटो लगी हुई होती हैं। इस प्रकार के धार्मिक कार्यों से दलित परिवारों की ईश्वर में आस्था का पता चलता है। *हमलावर* उपन्यास में दलित लेखक विपिन बिहारी ने दलित समुदाय के लोगों की ईश्वर में आस्था को दलित पात्र चनमा और भजन के वक्तव्य के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> बेटा चुप रह ! चनमा को भजन की बाते अच्छी नहीं लग रही थी। उस पर तो भकित का जैसे भूत स्वार था....पंडित जी जो भी कुछ कहे बह्म की लकीर, कोई भी प्रश्न खड़ा करना नहीं है। ब्राह्मण ब्रह्मा मुख से पैदा जीव है। ब्रह्ममुख कभी मिथ्या कर ही नहीं सकता। वह तो आम जनों की मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करता है। (84)

प्रस्तुत उपन्यास में दलित जाति की चनमा की धर्म तथा धार्मिक कृत्यों में आस्था को प्रस्तुत करते हुए चनमा तथा भजन के धर्म सम्बन्धी वक्तव्य को प्रस्तुत किया गया है। दलित जाति का पात्र भजन चनमा को धर्म के नाम पर होने वाली लूट से अवगत करवाने का प्रयास करता है, लेकिन धर्म में आस्था के चलते चनमा भजन की बातों को नकार देती है। हिन्दी के दलित उपन्यासकारों ने जहाँ एक तरफ दलित समुदाय की धर्म में आस्था को प्रस्तुत किया है वहीं दूसरी तरह हिन्दी उपन्यास *भंवर* में दलित लेखक कैलाशचन्द्र ने दलित समाज के लोगों की धर्म के प्रति अनास्था को प्रक्ट करते हुए परिवर्तन की स्थिति को प्रस्तुत किया हैः

> जन्म मरण लड़का, लड़की होना सब प्राकृत है इसमें कोई कुछ नहीं कर सकता। जन्म लेते ही हमें आस्था, धर्म की घुट्टी पिलानी शूरू कर दी जाती है, इसलिए हम सब इन बातों के गुलाम हो जाते हैं और

> हल्का सा संकट आते ही हमें भगवान धर्म याद आने लगता है। होता सब प्राकृतिक रूप से है, लेकिन लगता है जैसे कोई अदृश्य शकित हमारी पुकार सुन लेगी और हमारी समस्या का समाधान करेगी।(57)

दलित जातियों में शिक्षा के प्रसार से ये जातियां धार्मिक अंधविश्वासों से बाहर निकलने के लिए प्रयासरत्त है। वर्तमान समय में शिक्षा के कारण दलित जातियों की सोच में भी परिवर्तन आया है लेकिन अब ये लोग इस सोच से बाहर निकल कर प्रत्येक सुख-दुख को जीवन के सत्य को पहचान रहे हैं जो कि दलित जातियों में आए परिवर्तन को दर्शाता है। दलित जातियों में धर्म के प्रति आए इस परिवर्तन को भंवर उपन्यास में कैलाशचन्द्र चौहान ने प्रस्तुत किया हैः

> भगवान नाम की चीज होती है कि नहीं। इस पर वह दिमाग इस्तमाल नहीं कर सकता। पैदा होने से बड़े होने तक भगवान का नाम मन मस्तिष्क में इतना रम जाता है कि छोटे से छोटे काम, दुख मुसीबत और खुशी में भी अनायास उसका नाम ध्यान में आ जाता है और हाथ जोड़कर या मन ही मन उससे प्रार्थना करने लग जाते हैं।(71)

प्रस्तुत उपन्यासों में दोनों ही भाषाओं के लेखकों ने दलित समाज में धर्म के प्रति आस्था को *मगहर की सुबह* उपन्यास में दम्मो, *कानपूर टू कालापानी* में सरजू, *तर्पण* में पियारे, विद्रोह में विक्रम की माँ फूलो, तथा राघवेंदर का परिवार और *हमलावर* में चनमा के माध्यम से प्रस्तुत किया है। पंजाबी उपन्यास *अन्नदाता* में बलदेव सिंह *पंडोरी प्रोहितां* में निंदर गिल्ल *हनेरी रात दे जुगनू* में अज़ीज सरोए तथा *परणेश्वरी* में देशराज काली ने धर्म में आस्था के चलते दलित जातियों की धार्मिक कृत्यों में आस्था को प्रस्तुत किया है।

5.1.3 अंधविश्वास और रूढ़िवादिता

अंधविश्वास धर्म में अत्यधिक आस्था होने के कारण ही पनपते हैं। अंधविश्वास और रूढ़िवादिता को लेखक यशपाल ने *यशपाल के निबंध खण्ड* पुस्तक में परिभाषित करते हुए कहा हैः

> मनुष्य ने जब अपने चारों और फैले प्राकृतिक पारावार को समझने में अपने आप को असमर्थ पाया। जब वह प्रत्येक जड़-वस्तु में किसी भली-बुरी आत्मा को मानकर उससे मुक्ति पाने के लिए कई तरह के विधान करता है और प्रत्येक घटना को किसी शक्ति के घटित होने का विश्वास करने लगा तो उसमें अनेका नेक अंधविश्वास घर कर गए। दूसरी ओर समाज व्यवस्था को चलाने के लिए कुछ नियमों का पालन, समाज में रहते प्रत्येक जन के लिए आवश्यक था, जिससे सभी अपने जीवन को सही ढंग से जी सके।(214)

दलित समाज में अशिक्षा, अज्ञानता, रूढ़िवादिता इत्यादि के कारण लोग सामाजिक अंध विश्वासों में फंसे मिल जाते हैं। धार्मिक अंध विश्वासों की वजह से आज धर्म की जड़े खोखली हो चुकी हैं। आज भी समाज में परम्परागत रीति-रिवाज से जुड़े अंध विश्वास और रूढ़िवादिता विद्यमान हैं। 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में अंधविश्वासों में जकड़े हुए पंजाब के दलित समाज की स्थिति को पंजाबी के उपन्यास*पंडोरी प्रोहितां* में गैर-दलित लेखक निंदर गिल्ल ने प्रस्तुत किया हैः

> किवे उस दे पंडताऊपणे नाल सम्बन्धित पोथियां नू समझे, उसदे जंत्र-मंत्रा नू जाणे, धागे तवीता नाल सम्बन्धित श्लोका नू तरतीब देवे कर्म कांड दीआं कड़ीयाँ गिणे मिणे, उस दे हासे मजाकां दा सहामणा करे।(7)

प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने दिखाया है कि धर्म को जीवन का अहम हिस्सा मानते हुए दलित समुदाय के लोग जीवन, मुत्यु, जन्म और शादी के मामले में पूरे तरह से अंधविश्वासी और रूढ़िवादी सोच से ग्रस्त दिखाई देते हैं। प्रस्तुत उपन्यास *मुक्ति* में धर्म में अंधविश्वास की समस्या को एस.एस कालड़ा ने दलित पात्र कंती के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> अकसर पंडित जी सच्ची इक्की हजार तो घट्ट किसे नू नहीं सी बखशदे। जे कोई थोड़ा बहुत कहिंदा वी तां औह बड़े मिट्ठे हो के प्यार नाल आखदे “जो सारी आयु आप के लिए संघर्ष करते रहे आप उनके लिए एक बार तुच्छ जिही रकम नहीं खर्च कर सकते। अगर उनकी आत्मा भटकती रही, तुम्हारे कार्य में विघ्न पड़ सकते हैं। पित्रों की आत्मा की शांति के लिए खर्च करने से आप कन्नी कतरा रहे हो। (93)

दलित पात्र कंती की पुत्री लाडो की मृत्यु के बाद पंडित जी पाठ पूजा का खर्च गयारह सौ रूपए बताते हैं जो कि उसके वश की बात नहीं है, परन्तु बेटी की आत्मा की शांति सम्बन्धी अंधविश्वास के कारण दलित पात्र कंती द्वारा अपनी समर्था से अधिक धन खर्च करने के लिए भी तैयार हो जाना दलित जातियों का धर्म के प्रति अंधविश्वास को व्यक्त करता है। धर्म में अत्यधिक आस्था के चलते दलित जातियों में अंधविश्वास की समस्या देखने को मिलती है। सामाजिक जीवन से सम्बन्धित सभी कार्य व्यवहारों में ये लोग पूरी तरह अंधविश्वास और रूढिवादी सोच से ग्रस्त दिखाए गए हैं।

5.1.3.1 पशु-बलि सम्बन्धी अंधविश्वास

भारत में बलि प्रथा प्राचीन काल से ही धर्म का हिस्सा रही है। भेंट देना या बलि देने की प्रथा अत्यंत प्राचीन है। अनिष्ट से बचाव के लिए या किसी महत्वपूर्ण कार्य को निर्विघन संपनता हेतु बलि दिए जाने की प्रथा रही है। कुछ समाजों में

इसका चलन अब बंद हो गया है तथा कुछ समाजों में प्रतीक स्वरूप में है किंतु असभ्य और पिछड़े समाजों में पशु-पक्षियों की बलि दी जाती है और धर्म के नाम पर बेकसूर जानवरों की बलि देकर जनता को अंधविश्वासों में उलझाया जाता है। दलित जातियों में ऐसे फैले अंधविश्वासों और लोगों की रूढ़िवादी सोच को*भंवर* उपन्यास में दलित लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने दलित पात्र कुँवरपाल के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> फंड में इतना पैसा पड़ा होगा कि सब का खर्चा पूरा हो जाएगा। उसे याद आया वह ढेर सारा रूपया यहाँ तक कि नौकरी पर पक्का होने पर मिला पैसा, जो उसने लड़कियों की शादी के लिए बैंक में जमा कर दिया था, वो भी लड़के होने की मुराद पूरी करवाने में घरेलु देवताओं को सूअर, बकरे की बलि चढ़वाने पर लगा दिया। अब लड़का होने के बाद यह सब बलि देनी पड़ेगी। उसने हिसाब लगाया कि कम से कम चालीस-पचास हजार रूपए का खर्च है।(72)

धर्म में अत्यधिक आस्था के चलते अंध विश्वासों से ग्रस्त दलित जाति के लोग इस प्रकार के कर्म काण्डों पर पैसा बर्बाद करने से भी गुरेज नहीं करते। पशु बलि को धार्मिक परम्परा मानने वाले लोग पूर्णतः अशिक्षित अज्ञानी और रूढ़िवादी होते हैं। अंधविश्वासी लोग विभिन्न देवी-देवताओं को खुश करने के लिए पशु बलि देते आ रहे हैं। इसी कारण धर्मिक अंधविश्वास जैसे घिनौने रूप से ग्रस्त है, परन्तु दलित परिवार में प्रत्येक खुशी के अवसर पर ये लोग बलि इत्यादि देना नहीं भूलते। लड़के के जन्म सम्बन्धी अंधविश्वास को दलित लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने *भंवर* उपन्यास में प्रस्तुत किया हैः

> लड़का हुआ है तो लेन-देन के खर्चें तो बढने ही थे। अपने स्टाफ वालों को पार्टी भी देनी पड़ेगी। जहाँ-जहाँ दोनों पति-पत्नी मनौती मांगने

> गए थे, वहाँ भी जाना पड़ेगा। घर के देवताओं को भी बलि देनी पड़ेगी। यानी लड़का क्या हुआ खर्चें का पहाड़ खड़ा हो गया।(64)

दलित समुदाय के लोगों में ऐसे अंधविश्वास इतने जबरदस्त ढंग से घुसपैठ किए हुए होते हैं कि दलित समुदाय के शिक्षित लोग भी आवश्यकता पड़ने पर इन सब कर्म कांडों को करने से पीछे नहीं हटते। उपन्यास *विद्रोह* में दलित लेखक कैलाश चन्द्र ने दलित जातियों के शिक्षित लोगों में भी अंधविश्वास से जुड़े कार्यों में आस्था को पूजा के सुसराल के लोगों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> शादी के तीसरे दिन जीत का बकरा बलि दिया गया। अपने किसी देवता की यूँ पूजा उसके लिए यह कोई नई बात नहीं थी। यह तो अपने समाज में देखती आई थी। कोई घर का भगत इस पूजा को अंजाम दे रहा था। पूरे घर में मांस की अजब तरह की गंध फैल गई थी। जो पूजा की नाक में जैसे चुभ रही हो। मीट पक कर तैयार हुआ। जिस पतीले में मीट पका था। उसमें से ढूंढ ढूंढ कर सिर कलेजा आदि निकाला गया और जहाँ पूजा हो रही थी। भगत ने नई वहू को बुलाया।(91)

दलित जातियों में धर्म में अत्यधिक आस्था के चलते ये लोग प्रत्येक खुशी के अवसर पर देवी-देवताओं को बलि चढ़ाना नही भूलते। फिर चाहे वह दलित समाज के शिक्षित लोग हो या अशिक्षित।

5.1.3. 2 भूतप्रेत एवं देवी-देवताओं सम्बन्धी अंधविश्वास

समाज के सभी वर्गों में भूतप्रेत, प्रेतात्माओं और देवी-देवताओं की स्वारी के सम्बन्ध में अंधविश्वास पाया जाता है। दलित समाज को लोगों में यह अंधविश्वास अधिक देखने को मिलता है। इस प्रकार के अंध विश्वासों को फैलाने और सत्य स्वीकार करने का प्रमुख कारण अशिक्षा और अज्ञानता है, जिसके चलते दलित

जातियों के अशिक्षित लोग इन सब से भयभीत रहते हैं। *मगहर की सुबह* उपन्यास में लेखिका वंदनादेव शुक्ल ने ग्रामीण क्षेत्रों में भूत-प्रेत, देवी-देवताओं की स्वारी सम्बन्धी अंधविश्वास को प्रस्तुत किया हैः

> यूँ तो केतकी सहनशील और सीधी स्त्री थी, लेकिन कभी-कभी उस पर प्रेत सवार हो जाता और वह बुरी तरह चीखती। बाल बिखेर लेती आंखों से आग होठों से गालियाँ फूटती और किसी से कुछ न कहती लेकिन मिसिर जी यदि सामने पड़ जाएं तो उन्हें मारने दौड़ती। एक बार तो साग काटने का हँसिया लेकर दौड़ी थी उनके पीछे..लोगों ने बचाया। (20)

भूतप्रेत, प्रेतआत्मा और देवी देवताओं की सवारियों सम्बन्धी अंधविश्वास को दलित लेखक कैलाशचन्द्र चौहान के *भंवर* उपन्यास में दलित पात्र बिमला के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> बात वहाँ तक पुँहची कि लोग उस पर जिंद का साया बताने लगे कोई कहता लड़का सूखने लगा है, इस पर सूखिया मसान है। आस पड़ोस की बातों को मानते हुए उस पर से भूत उतारने के उपक्रम होने लगे। एक भगत ने बताया कि इस पर बिमला के पीहर की चीज़ यानी भूतनी है ले-देकर बिमला के पीहर की बदनामी हुई।(117)

जब बिमला के बेटे को अचानक बहुत तेज बुखार हो जाता है तो लोग अंधविश्वास के चलते उस पर प्रेत की छाया मानकर उसे डाक्टर के पास न लिजा कर किसी भूत उतारने वाले के पास जाने की सलाह करते हैं। पंजाबी उपन्यास *परणेश्वरी* में लेखक देशराजकाली ने पुच्छिया से सम्बन्धित अंधविश्वास का वर्णन दलित पात्र रावल के माध्यम से किया हैः

> भुल्ला होईया ने। बहूत वड्डिया भुल्ला ....सानू सारा अतीत दिसदै...। असी एक-एक गल्ल दस्स सकदे आं.....भुल्ला ने..अतीत। जठेरे पूजों...साड़ी गल्ल नहीं मन्नी अज्ज तक ...रावल उत्ते फिर पहरा हो गया सी।(31)

किसी भी व्यकित में किसी देवी-देवता की स्वारी या पहरा आने से ये लोग अज्ञानता वश उसके द्वारा की जाने वाली बातों को ये लोग ‘पुच्छिया’ कहते हैं और ‘पुच्छिया’ निकलने पर ये लोग उस व्यकित द्वारा बताई गई बातों पर अमल करते हैं और सम्बन्धित व्यकित को उस आत्मा के प्रतिनिधि के रूप में देखने लगते हैं। जहाँ हिन्दी और पंजाबी के विभिन्न उपन्यासकारों द्वारा दलित समुदाय के लोगों को ज्यादातर अंधविश्वासों में फंसे दिखाया है वहीं दलित समाज के कुछ परिवार पढ़ लिखकर इस सम्बन्धी जागृत हो रहे हैं और इस प्रकार के अंधविश्वासों से बाहर आ रहे हैं। दलित जातियों में परिवर्तन की इस स्थिति को *विद्रोह* उपन्यास में कैलाशचन्द्र चौहान ने प्रस्तृत किया हैः

> फूलों पहले तो अचकचाई! फिर संभलते हुए बोली,“मुझे तो विक्रम ने समझाया मैं समझ गई। इसके बापू की मौत अंध विश्वास के कारण हुई, इसके बापू की ही क्यूं, मेरे दो बच्चे भी इसी कारण मरे। गाँव में भी न जाने कितनी मौते इसकी वजह से हुई। इसलिए मैंने ते विक्रम की बात को समझा और सब छोड़ दिया।”(84)

धर्म से जुड़े अंधविश्वास पर विश्वास न कर पाने वाले कुछ गिने-चुने समझदार लोगों का मन भी आवश्यकता पड़ने पर सब ओर से थक हारकर ऐसी ही चीजों की ओर जा पहुँचता है परन्तु दलित जातियों में शिक्षा की स्थिति में बदलाव आया है और ये इसे ब्रह्मणों द्वारा फैलाया मक्ड़जाल मानते हैं। धर्म से जुड़े अंध विश्वासों के प्रति परिवर्तन

की स्थिति को कैलाश चन्द्र चौहान ने विद्रोह उपन्यास में दलित पात्र पूजा के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> पूजा ने अपने यहाँ तो देखा ही नहीं, वीरवार को बाल नहीं धोते, मंगलवार को मीट नहीं बनाते न ही शेविंग करते और बहूत कुछ विक्रम ने पूजा की मम्मी यानी अपनी बुआ को इन के लिए समझा दिया था कि इन बातों का ध्यान रखना गलत है यह बाह्मणों द्वारा फैलाया मक्ड़जाल है।(94)

प्रस्तुत उपन्यासों में दोनों ही भाषाओं के गैर-दलित तथा दलित लेखकों ने दलित समाज की धर्म में अत्यधिक आस्था के चलते विभिन्न प्रकार के अंधविश्वासों से जकड़े हुए दिखाया है। जिसका मूल कारण अशिक्षा और अज्ञानता है। पंजाब में धर्म से जुड़े अंध विश्वास की समस्या को *पंडोरी प्रोहितां*, तथा *मुक्ति* उपन्यास में प्रस्तुत किया है। वहीं दलित जातियों में पशुबलि से जुड़े अंधविश्वास की समस्या को भंवर,तथा हमलावर उपन्यास में प्रस्तुत किया है। भूतप्रेत देवी-देवताओं से जुड़े अंधविश्वास को *मगहर की सुबह*, *भंवर* और *परणेशवरी* उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि धर्म को जीवन का महत्वपूर्ण अंग स्वीकारते हुए 21 वी सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श के तुलनात्मक अध्ययन में दलित जीवन के विभिन्न धार्मिक आयामों को प्रस्तुत किया गया है। हिन्दी और पंजाबी के दलित तथा गैर दलित उपन्यासकारों ने दलित जातियों के जीवन में धर्म के महत्व को प्रस्तुत किया है कि दलित जाति के लोग किसी न किसी रूप में धर्म से जुड़े रहते हैं। धर्म में जातिवाद अहम भूमिका निभाता है। बेशक धर्म में जातिवाद की जड़े गहरी है, परन्तु फिर भी दलित जातियों में धर्म में आस्था देखने को मिलती है।

वहीं धर्म में आस्था के चलते ये लोग विभिन्न प्रकार के अंधविश्वासों में जकड़े हुए देखे जा सकते हैं।

5.2 दलित विमर्श सांस्कृतिक आयाम

संस्कृति मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष से सम्बन्धित है। यह सीमाओं के बंधन से सर्वथा मुक्त है। मानव जीवन के परिष्कार का आदर्श निश्चित कर उसकी प्राप्ति के उपायों की समष्टि को ही संस्कृति कहते हैं। संस्कृति मानव जीवन के रहन-सहन, आचार- विचार और चिन्तन के फलस्वरूप निर्मित ऐसे संस्कार हैं जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होकर हमारे जीवन को प्रभावित और संचालित करते हैं। 'संस्कृति' का अर्थ है वह दशा अथवा अवस्था जिसका संस्कार अथवा परिष्कार कर दिया गया है। संस्कृति का श्रेत्र अत्यंत व्यापक है। 'संस्कृति' वह समष्टि है जिसे प्राप्त करने के लिए समाज अपना उद्देश्य तथा आदर्श निश्चित करता है। 'संस्कृति' शब्द समाज एवं व्यकित की बौद्धिक गतिविधियों का परिचय देता है। यह समाज से जुड़े विभिन्न सांस्कृतिक आयाम जैसे आचार-विचार, रहन- सहन, उन्नति-अवन्ति, रीति-रिवाज, धार्मिक, राजनीतिक एवं सामाजिक अवस्थाओं एवं परम्पराओं का परिचायक है। संस्कृति के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए *भारतीय संस्कृति* नामक निबंध में बाबू गुलाब राय ने अपने विचार देते हुए कहा हैः

> 'संस्कृति' शब्द का सम्बन्ध संस्कार से है। जिसका अर्थ है संशोधन करना, उत्तम बनाना, परिष्कार करना। अंग्रेजी शब्द 'कलचर' में वही धातु है जो 'एग्रीकल्चर' में है। उसका भी अर्थ पैदा करना, सुधारना है। संस्कार व्यकित के भी होते हैं और जाति के भी। जातीय संस्कारों को ही संस्कृति कहते हैं। (216)

समाज संस्कृति और साहित्य का अटूट सम्बन्ध होता है। समाज में संस्कृति जन्म लेती है और विकसित भी होती है। संस्कृति में परिवर्तन आने पर सामाजिक परिवेश में भी परिवर्तन होता है और समाज में रीति- रिवाज, रहन-सहन, मान्यताओं और विश्वासों में परिवर्तन आने से संस्कृति परिवर्तित होती है, क्योंकि इन रीति-रिवाजों मान्यताओं, विश्वासों आदि से ही संस्कृति विकसित होती है, अर्थात समाज का स्वरूप संस्कृति के अनुरूप ही होता है। इस प्रकार हमारे सांस्कृतिक जीवन और संस्कृति का आधार समाज है तथा समाज को संचारू रूप से संचालित करने वाली पद्धति संस्कृति है अतः समाज और संस्कृति दोनों ही एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। समाज में रह कर ही साहित्यकार साहित्य की रचना करता है। साहित्यकार साहित्य के माध्यम से ही समाज को अभिव्यकित प्रदान करता है। प्रत्येक युग का साहित्यकार उस युग की जीती जागती तस्वीर प्रस्तुत करता है और साहित्य में संस्कृति की अभिव्यकित न हो, ऐसा हो ही नहीं सकता। साहित्य संस्कृति का अंग भी है, उसका इतिहास भी और उसका रक्षक भी। इसलिए कहा जा सकता है कि साहित्य का आधार सामाजिक जीवन है। कोई भी साहित्यकार अपनी संस्कृति से कट नहीं सकता। समाज में प्रचलित रीति-रिवाजों, परम्पराओं, विश्वासों से उसका अछूता रहना संभव ही नहीं है इसलिए संभवतः ही साहित्य में संस्कृति परिलक्षित होती है। वास्तव में साहित्य एक सांस्कृतिक प्रकिया है जो संस्कृति के मूल प्रवाह को अभिव्यकित देती है। 'परम्परा के मूल्यांकन' निबंध में डा. रामविलास शर्मा के संस्कृति सम्बन्धी विचारों को *दलित दस्तक* पुस्तक में कृष्ण दत्त पालीवाल परिभाषित करते हुए कहते हैं--

> साहित्य मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन से संबंद्ध है, आर्थिक जीवन के इलावा मनुष्य एक प्राणी के रूप में जीवन बीताता है। साहित्य में उसकी आदिम भावनाएँ प्रतिफलित होती हैं जो उसे प्राणिमात्र से जोड़ती हैं।

> इस बात को बार-बार कहने में कोई हानि नहीं है कि साहित्य विचारधारा मात्र नहीं है। उसमें मनुष्य का इन्द्रिय, उसकी भावनाएं उसकी आंतरिक प्रेरणाएँ भी व्यजिंत होती हैं ।(84)

अर्थात साहित्य, समाज और संस्कृति एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। सामाजिक क्रिया कलापों और साहित्य में निरंतर एक दूसरे के साथ आदान-प्रदान की प्रक्रिया चलती रही है। प्राचीन काल से आज तक सामाजिक क्रियाकलापों और मान्यताओं में जो भी परिवर्तन हुए हैं। उनमें साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है। जिससे समाज में बदलाव आया है। आधुनिक समय में परिस्थितियों एवं जीवन शैली में परिवर्तन हुआ है जिससे साहित्य भी प्रभावित हो रहा है।

प्रस्तुत अध्याय सांस्कृतिक आयाम के अंतर्गत 21वीं सदी के दलित विमर्श में हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित उपन्यासकारों की रचनाओं में दलित समाज के सांस्कृतिक पक्ष को व्यंजित किया गया है। हिन्दी और पंजाबी के दलित तथा गैर-दलित उपन्यासों में दलित समाज की सांस्कृतिक मान्याताओं की तुलना करते हुए उसमें विकास और परिवर्तन को प्रस्तुत किया गया है। परिवर्तन संसार का अटल नियम है। संसार की कोई भी वस्तु अथवा कोई प्राणी अपरिवर्तित नहीं है। यह परिवर्तन आंतरिक अथवा बाह्य दोनों रूपों में हो सकता है क्योंकि परिवर्तन ही विकास की स्थिति है। वास्तव में मानसिक तथा आध्यात्मिक शक्तियों का विकास ही संस्कृति का मुख्य उद्देश्य होता है और उनका अधिकाधिक विकास ही संस्कृति की कसौटी है। दलित विमर्श के अंतर्गत सांस्कृतिक आयाम से जुड़े बिन्दुओं की तुलना करते हुए विकास और परिवर्तन को प्रस्तुत किया गया है।

5.2.1 पर्वोत्सव तथा मेले

प्रत्येक देश में मेलों तथा उत्सवों का महत्वपूर्ण स्थान है। किसी भी देश के पर्वोत्सव अथवा मेले वहां के सांस्कृतिक जीवन के प्रतीक माने जाते हैं। आज भी भारत में ये उत्सव विभिन्न वर्गों को लोग मिलजुल कर मनाते हैं। ये सांस्कृतिक मेले तथा पर्वोत्सव लौकिक तथा आलौकिक दोनों प्रकार की खुशियों से सम्बन्धित होते हैं। प्रस्तुत विमर्श के अंतर्गत दलित जीवन से जुड़े सांस्कृतिक पक्ष को *मगहर की सुबह* उपन्यास में गैर-दलित लेखिका वंदनादेव शुक्ल ने प्रस्तुत किया हैः

> होता यू है कि होली के दिन उनके अधीनस्थ गदराये बदन की जवान मजदूरनियां हाथ-हाथ भर घुँघट ओढे सुबह-सुबह ही धमक पड़ती हैं मिसिर जी के घर ....हाथों में रंगों के औजार और मुँह पर उलाहने लिए, ‘बाऊजी, किते घुसे बैठे हो घरें, तनिक बहार त निकरो.....और फिर शुरू होती धमाचौकड़ी मिसिर जी के आंगन में। (61)

प्रस्तुत उपन्यास में होली के त्यौहार के समय ग्रामीण क्षेत्रों में निम्न जाति के लोगों में भी इस प्रकार के उत्सवों को लेकर भारी श्रद्धा और उत्साह देखने को मिलता है। दलित समाज जो कि हिन्दू वर्ण व्यवस्था के अनुसार सबसे निचले पायदान पर है हिन्दू धर्म का हिस्सा होने के कारण ये लोग भी त्यौहारों तथा व्रत पूजा इत्यादि में उतनी ही आस्था रखते हैं जितनी कि हिन्दू समाज। दलित जीवन के सांस्कृतिक पक्ष से जुड़े पर्वोत्सव के वर्णन को *मगहर की सुबह* उपन्यास में गैर-दलित लेखिका वंदनादेव शुक्ल ने प्रस्तुत किया हैः

> उस दिन महालक्षमी की पूजा थी। पूरा दिन निर्जला व्रत रही मैना और शाम को आटे के गुन्ने बनाकर बगल की इमरती बुआ को पासाने उनके घर गई। बुआ को गुन्ने देकर उनके पाँव छुएँ....बुआ ने असीस से उसकी झोली भर दी, दूधों नहाओं पूतों फलों दुलहिन....।(61)

इस प्रकार लेखिका ने दलित समाज में मनाए जाने वाले पर्वोत्सव होली तथा दीवाली में महालक्ष्मी की पूजा के माध्यम से इनके सांस्कृतिक सरोकारों को प्रस्तुत करते हुए दिखाया है कि ये लोग सब त्यौहार मिल जुल कर मनाते हैं और इस दौरान घर के बड़े बूढों का आशीर्वाद लेना भी नहीं भूलते। पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों के दलित समाज के सांस्कृतिक सरोकारों को चयनित रचनाकारों ने प्रस्तुत किया है कि किस प्रकार ये लोग भारतीय संस्कृति को अपनाए हुए हैं फिर चाहे वह हिन्दू धर्म के हो या मुस्लिम धर्म का, या फिर स्वर्ण अथवा दलित जाति का। पंजाबी उपन्यास *पंडोरी प्रोहितां* में गैर-दलित लेखक निंदर गिल्ल ने भी पंजाब में दलित जातियों द्वारा मनाए जाने वाले पर्वोत्सव को प्रस्तुत किया हैः

> मैले त्यौहार के दिन खासकर ईद मौके औह पिंड दे होर तेली, लुहार, भराई, मरासी, मुस्लमान इत्यादि नाल मिलदे वरतदे सन। कशमीरी नी मिलदे वरतदे सन। औह ही उन्नां कौल मसीत आऊंदे सन।(153)

दलित समाज के लोगों की धर्म में आस्था के चलते यह लोग धार्मिक जीवन से जुड़े मेले इत्यादि में भी बढ़ चढ़ कर भाग लेते हैं। पंजाबी उपन्यास *शांतिपर्व* में दलित लेखक देशराज काली ने पंजाब में दलित समाज के सांस्कृतिक जीवन से जुड़े पक्ष को प्रस्तुत किया हैः

> इक्क बहुत वड्डा मेला लगदा सी फगवाड़े दे कौल, चक्क हकीम पिंड 'च'। उत्थे बहुत वड्डा कट्ठ हुन्दा सी। उत्थे गुरू रविदास मंदिर सी। उत्थे जिहड़ा महंत सी ओह पोलीटीकल सूझ बूझ वी रखदा सी....बकायदा जिद्दा विसाखी लगदी है इद्दा मेला भरदा।(43)

हनेरी रात दे जुगनू नावल में दलित लेखक अज़ीज सरोए ने पंजाब में दलित समाज के लोगों के धार्मिक जीवन से जुड़े मेलों में आस्था को गुगा मैड़ी के मेले के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> पिछली बार जदों गूगा मैड़ी दे मेले ते पिंडों टरालीयां गईआं सी तां बोधा ते सुरजीतों गिट-मिट करके मेला वेखण गए सी। सुरजीतों संतरी रंग दे झोले नू मठ्ठिआं ते गुलगलिया नाल भर के लिआई सी। दोहां ने तीन दिन रल के मेला देखिआ। सुरजीतों दे नाह नुक्कर करदिआं बोधे ने उसनू चण्डोल वी झुलाई सी।..बई मेला तां बोधे ते सुरजीतों धाणकी ने वेखिआं। (31)

निर्धनता के बावजूद भी ये लोग सांस्कृतिक जीवन से जुड़े मेले तथा पर्वोत्सव को बड़ी खुशी के साथ मनाते हैं। उपन्यास *परणेश्वरी* में दलित लेखक देशराजकाली ने पंजाब के ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में खवाजे की दरगाह पर हो रहे मेले का वर्णन किया हैः

> पासल वाले कवॉल लग्गे होए सन, अज्ज सरकार दा मेला वाहवां भरिआं होईया सी, नंजू पाड़े नू कहिंदा रिहा सी कि साईकल तेज चलावे.....मेले ते कवाल सजदा कर रहे सन, मत्त छेड़ फकीर की गोदड़ी नू मत्ते गोदड़ी दे विच्च लाल होवे....मेला पूरे जोबन पर सी। लोक दूरों-दूरों ढोल-ढमाकिआं नाल वाजिआ गाजिआं नाल अपणे बच्चिआं नू मत्था टिकाऊण लिया रहे सी...। (84-85)

इस प्रकार लोक उत्सवों के समय लोग अपनी श्रद्धा को धार्मिक लोकगीतों(भजन) के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं और इस प्रकार के सांस्कृतिक आयोजनों में बढ़चढ़ कर भाग लेते हैं।

शहरों तथा ग्रामीण दलित समाज के सांस्कृतिक जीवन से जुड़े पक्ष से सम्बन्धित बिन्दु पर्वोत्सव और मेलों का वर्णन गैर-दलित लेखिका वंदनादेव शुक्ल ने *मगहर की सुबह* में, शिव मूर्ति ने*तर्पण*, निंदर गिल्ल ने *पंडोरी प्रोहितां*, देशराज काली ने *शांतिपर्व*, अज़ीज सरोए ने *हनेरी रात दे जुगनू* तथा देशराजकाली ने *परणेश्वरी* उपन्यास में प्रस्तुत किया है। पंजाबी उपन्यास *सलफास* में रामस्वरूप अणखी ने, बलदेव सिंह ने *अन्नदाता* में, अज़ीज सरोए ने *केही वगै हवा* उपन्यास में प्रस्तुत नहीं किया। हिन्दी लेखकों में रूपसिंह चन्देल ने *दगैल* तथा *कानपुर टू कालापानी* में तथा कैलाशचन्द्र चौहान ने *विद्रोह* तथा *भंवर* उपन्यास में दलित लेखक विपिन बिहारी ने हमलावर तथा मरोड़ उपन्यास में इस पक्ष को प्रस्तुत नहीं किया।

5.2.2 लोक संस्कृति

'लोक संस्कृति' संस्कृति का जीवन्त पक्ष है। वास्तव में जन साधारण समाज ही लोक कहलाता है। 'लोक संस्कृति' में वर्ग भेद रहित विस्तृत और प्राचीन परम्पराओं की श्रेष्ठता के साथ आधुनिक सभ्यता और संस्कृति का कल्याण विकास निहित रहता है। 'लोक-संस्कृति' को परिभाषित करते हुए हरीश कुमार *फणीशवरनाथ रेणु के उपन्यासों में लोक संस्कृति* पुस्तक में कहते हैं

> समाज और लोग संस्कृति का गहरा सम्बन्ध होता है क्योंकि संस्कृति समाज की ही होती है। जिसे समाज अपनाए होता है ....और इस संस्कृति की रचना समाज के द्वारा होती है। (86)

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी के दलित तथा गैर-दलित उपन्यासकारों ने लोक संस्कृति के अंतर्गत लोकगीत, लोक प्रथाओं, और लोक रीतियों का वर्णन किया है जो

कि दलित समाज के जीवन से जुड़ी हैं को प्रस्तुत अध्याय में तुलना का आधार बनाया गया है।

5.2.2.1 लोक गीत

लोकगीत लोक साहित्य का सर्वाधिक लोक प्रिय अंग है। इसमें सरलता, सरसता, मधुरता और लय का होना स्वाभाविक है। इन लोक गीतों को सुनने के बाद व्यकित भाव विभोर हो उठता है। लोक गीत लोक जीवन के प्रत्येक पक्ष से सम्बन्धित होते हैं। सच तो यह है कि लोक गीत हमारे जीवन का एक विशेष अंग होते हैं। *मगहर की सुबह* उपन्यास में गैर-दलित लेखक वंदनादेव शुक्ल ने दलित युवती मैना के विवाह के माध्यम से विवाह के समय ग्रामीण दलित जातियों में गाए जाने वाले लोक गीतों को मगहर की सुबह उपन्यास में ग्रामीण दलितों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

तोरे सिर की गगरिया कैसे गिरी

गलियों में मिल गए राजा ससुर जी

उन्हीं को घुंघट तानन लगी

मोरे सिर की गगरिया ऐसे गिरी(23)

दलित जातियों के रस्मों रिवाजों में एक विशेष रस्म विवाह से पहले भात न्यौतने की होती है। इस रस्म में दूल्हे अथवा दुल्हिन की माता अपने मायके जाकर अपने माता-पिता व भाईयों को विवाह का न्यौता देती है और वर तथा वधु के नाना-नानी के परिवार के लोग विवाह में भात की रस्म स्वरूप अनेकों उपहार लेकर आते हैं। इसी रस्म को ही भात की रस्म कहते हैं और इस रसम को निभाते समय दलित समाज के लोगों के द्वारा लोकगीत गाए जाते हैं। उपन्यास *भंवर* में लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने दलित समाज में लड़के व लड़की के विवाह के समय विवाह से एक दिन पहले भात

लेने की रस्म तथा इस रस्म के समय गाए जाने वाले लोकगीत का वर्णन पूजा की माता के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

अरज मेरी सुनों भैया,

समय पर भात ले आना

ससुरजी को सूट ले आना,

सास को साड़ी ले आना

अगर इतना न हो भईया,

तो खाली हाथ आ जाना

अरज मेरी सुनों भैया

समय पर भात ले आना।(137)

विद्रोह उपन्यास में लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने शहरी तथा ग्रामीण दलित समाज में भात की रस्म का वर्णन किया है जिसमें वर तथा वधु पक्ष के लोगों द्वारा विवाह में आए वर तथा वधु के मामा-मामी, नाना-नानी का लोकगीत गाकर स्वागत करने का वर्णन किया हैः

मेरे भातइया भात ले के आए

जरा देखना

झूमर भी लाए, चुनरी भी लाए

झूमर के मोती हवा में उड़ जाए

कुण्डल भी लाए कंगना भी लाए

कुण्डल के मोती हवा में उड़ जाए

जरा देखना

बिछवे भी लाए पायल भी लाए

पायल के घंघरू हवा में उड़ जाए

जरा देखना।(64)

आगे-आगे गीत गाती औरतें और पीछे-पीछे सजे संवरे और हाथ में बैग लिये भाती अर्थात वर तथा वधू के नाना-नानी और परिवार के अन्य सदस्य बैग और बकसे के अंदर भात में देने हेतु सामान था। भात देने की रस्म की प्रक्रिया शूरू होती है।प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने पूजा के विवाह के माध्यम से दलित जातियों में भात की रस्म का वर्णन किया है।

भतइया आए बैठे हैं आंगन दिल खोल के

बहन की तो तीहल लाए, लाए पैंट कोट

सासू रानी यूँ उठ बोली,देखों तो ये खोल के

बड़े तो नइयें कहीं छोटे तो नइयें,

देखों जरा खोल के, भातइया आए (65)

पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में लड़के के विवाह के समय गाए जाने वाले लोकगीत सिट्ठणिओं का वर्णन पंजाबी उपन्यास *हनेरी रात के जुगनू* में दलित लेखक अज़ीज सरोए ने दलित पात्र जगतू के विवाह के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

किद्धर गईया वे जगतू तेरी दादकीआं ..

असी हाजर खड़ीआं वे जगतू तेरी दादकीआं

अज्ज दा दिन में मसां लिया,सुख सीरणीणां नाल

वे मैं भर-भर वंडा मुट्ठिआं, वे वीरन मेरिआं..

बड़े हौसले नाल....।(34)

इन लोग गीतों को वर के ननिहाल और दादके परिवार की औरतें गाती हैं और हंसी ठिठौली के माध्यम से एक दूसरे को ताआने देती हैं। लड़के के विवाह के समय बरात की विदाई के लोकगीत सिट्ठणीओं को पंजाबी उपन्यास *केही वगे हवा* उपन्यास में अज़ीज सरोए ने प्रस्तुत किया है। इन लोग गीतों को वर के ननिहाल और दादके परिवार की औरतें गाती हैं और हंसी ठिठौली के माध्यम से एक दूसरे को ताआने देती हैं--

पहली सिलाई वे दिओरा रस भरी...

दूजी वे गुलनार......

तीजों सलाई तां पावां, जे मोहरा देवे,

वे अंत प्यारिआं वे चार ।(35)

पंजाब के ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में लड़के के विवाह के समय बारात के स्वागत के रूप में गाए जाने वाले लोक गीतों को पंजाबी उपन्यास *केही वगे हवा* में दलित लेखक अज़ीज सरोए ने प्रस्तुत किया हैः

बरातीओं कलड़े क्यों आए वे अज्ज दी घड़ी

नाल भैणा नू न लिआए, वे अज्ज दी घड़ी (35)

इन लोक गीतों को सिट्ठणीआं क्हा जाता है। इन लोकगीतों को वर के ससुराल पक्ष की औरतें बारातियों से ताअने देकर बात करती हुई गाती हैं। विवाह शादियों को अतिरिक्त रोजाना जीवन में भी मनोरंजन के प्रसाधन के तौर पर भी लोक गीत गाए जाते हैं। मनोरंजन से सम्बन्धित लोकगीतों का कोई भी विषय हो सकता है। पंजाबी के उपन्यास *पंडोरी प्रोहितां* में गैर-दलित उपन्यासकार निंदर गिल्ल ने पंजाब में गाए जाने वाले लोक गीतों का जिक्र किया हैः

> पंजाब दे लोकगीतां विच्च कम्मीआं कीरतीआं, मेहनतकशां, कारीगरां दा मजाक उड़ाया गया है। ते वेहलड़, वैलीआ, बदमाशां, पुट्ठे कम्म करन वाले आशकी पट्ठिआं, कैंठे वाले कम्म चोरां, सभआचार लई सिर दर्दी बणे सरदारां, चोरां, लुटेरिआं, लुच्चिआं, लफंगिआ, चिट्टे चम्म दे चहेतिआं, खड़कदे धुहवे चादरे वालियां, बदतमीजां दी सिफत कीत्ती गई है।(43)

पंजाब के लोकगीतों के नायक उच्च जाति वाले हैं न कि निम्न मजदूर । निम्न क्षेणी को तो सिर्फ इन गीतों में हास्य का पात्र बनाया जाता है। पंजाबी उपन्यास *हनेरी रात दे जुगनू* नावल में दलित लेखक अज़ीज सरोए ने दलित पात्र पाखर के माध्यम से प्रत्येक अवसर पर तुक्क बंदी करके बनाए गए गीतों को भी प्रस्तुत किया हैः

> तौर मटकीली ए बई, तौर मटकीली ए,
>
> एक हथ्थ डांग, दूजे हथ्थ च पतीली ए(42)

लोक गीतों का सम्बन्ध जीवन के प्रत्येक पक्ष से होता है फिर चाहे खुशी हो या गमी हो या फिर धार्मिक सम्मेलन। धर्म में आस्था और श्रद्धा को व्यकत करने के लिए जन

मानस द्वारा लोक गीतों का सहारा लेकर अपने भावों को व्यक्त किया जाता है। उपन्यास *परणेश्वरी* में दलित लेखक देशराज काली ने पंजाब में दलित समाज के धार्मिक जीवन से सम्बन्धित लोक गीतों को भी प्रस्तुत किया हैः

खवाजा-खवाजा पुकारदी फिरां खवाजा

खवाजा साडा ता दीन-इमान है जी।

जिध्धर नज़र मारा उध्धर दिसण चिशती

खवाजा साहब द खास महिमान है जी

.....चिशती शाबरी नज़ामी रंग रंगीए,

ख़वाजा दे कोलों भीख मंगीए....।

डेरा विच्च अजमेर जा के ला लईये ।

भीख मंगदे जरा वी न संगीए,

खवाजा दे कोलो भीख मंगीए....। (84)

हिन्दी और पंजाबी के दलित तथा गैर-दलित साहित्यकारों ने दलित जीवन से जुड़े लोकगीतों को आलोच्य उपन्यासों में प्रस्तुत करते हुए दर्शाया है कि दलित समुदाय के लोगों के जीवन में भी सांस्कृतिक पर्वों का बहुत महत्व होता है। हिन्दी के गैर-दलित लेखिका वंदना देव शुक्ल ने *मगहर की सुबह* उपन्यास में, पंजाबी दलित लेखक देशराजकाली ने *परणेश्वरी* उपन्यास में प्रस्तुत किया है। दलित लेखक कैलाशचन्द्र ने *विद्रोह* तथा *भंवर* में पंजाबी दलित लेखक अज़ीज सरोए ने *हनेरी रात दे जुगनू* और *केही वगै हवा* में प्रस्तुत किया है।

5.2.2.2 लोक प्रथाएँ

लोक प्रथाएँ लोक जीवन का जरूरी अंग मानी जाती हैं। यह प्रथाएँ प्राचीन समय से किसी न किसी रूप में किसी समाज अथवा जाति विशेष के साथ जुड़ी रहती हैं जिसका पालन सम्बन्धित समाज अथवा जाति विशेष के द्वारा किया जाता है। जहाँ दलित जीवन के सांस्कृतिक पक्ष से जुड़ी प्रथाओं का वर्णन चयनित रचनाकारों ने अपनी रचनाओं में किया है। वहीं वर्तमान समय में इन प्रथाओं में विकास और परिवर्तन की स्थिति को प्रस्तुत किया गया है।

प्रर्दा प्रथा

लोक प्रथाएँ ज्यादातर गृहस्थों के द्वारा अपनाई जाती हैं। इन प्रथाओं के अंतर्गत उपन्यासकारों ने प्रर्दा प्रथा तथा दहेज प्रथा का वर्णन किया है। प्रदा प्रथा का पालन दलित समाज के शहरी तथा ग्रामीण परिवारों के द्वारा किया जाता है, जिसमें सभी विवाहित स्त्रियाँ साड़ी के पल्लू को गज्ज भर आगे करके सिर से चेहरे पर डाल लेती हैं। यह सब दलित जातियों में व्याप्त पर्दा प्रथा के चलते ही होता है। प्रस्तुत उपन्यास *मगहर की सुबह* में वंदनादेव शुक्ल ने प्रर्दा प्रथा का वर्णन दलित पात्र मैना के माध्यम से किया हैः

> बैलगाड़ी ने बस अड्डे के पास उन्हें उतार दिया था जो कि कुछ दूरी पर था। मैना गज्ज भर का घुंघट किए मिसिर जी के पीछे-पीछे चली जा रही थी....बस आने में थोड़ी देर थी, मिसिर जी ने एक जगह देखकर मैना से कहा 'दुल्हिन इहां बैठ जाओं....हम अभी आत है तम्माकू लेके।(31)

पर्दे की यह प्रथा घर की हर औरत जो शादी ब्याह करके आई हुई होती है को निभानी पड़ती है, फिर चाहे वह औरत नई बहू हो या फिर बुजुर्ग औरत घर की

बहुओं के लिए इसका समान महत्व होता है, और इसका पालन करना जरूरी होता है। *भंवर* उपन्यास में लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने प्रर्दा प्रथा का वर्णन दलित पात्र शांति के माध्यम से किया हैः

> हलका घुंघट करके बैठी शांति केवल मुस्कराई। सास ही बोली " डाक्टर साहब आप लोगों की दुआ का ही असर है। ऐसी दवाई दो कि यह जल्दी ठीक हो जाए" चिंता मत्त करो। (79)

वर्तमान समय में दलित समाज की शिक्षित औरतों के द्वारा प्रर्दाप्रथा जैसी समस्या के विरूद्ध आवाज उठाई जा रही है, जो कि दलित जातियों में परिवर्तन का सूचक है। कैलाशचन्द्र चौहान के *विद्रोह* उपन्यास की दलित पात्र पूजा पढ़ीलिखी होने के कारण प्रर्दा प्रथा का विरोध करती हैः

> तुम्हारे घर की रीत यहाँ नही चलेगी, समझी बड़े लोग कुछ कहते हैं तो सोच समझ कर ही कहते होंगे। पीहर के रिवाज पीहर (मायके) में रह गये। तुम्हें यहाँ रहना है यहीं की तरह रहना होगा। तुम इस घर की बहू हो। मैं बहू ही बनकर रहती हूँ, कौन सा बेटी बनकर रहती हूँ। घुंघट में रखना था तो पढ़ीलिखी क्यों लेकर आए, अनपढ़ लेकर आते ना। (98)

महेंन्द्र की माँ अर्थात पूजा की सास के द्वारा पूजा को घूंघट न करने के लिए ताअने दिए जाते हैं परन्तु पूजा के द्वारा घुंघट अर्थात प्रदा प्रथा का विरोध किया जाता है।

दहेज प्रथाः- दहेज का अर्थ उन उपहारों से है, जो एक पिता या अविभावक द्वारा अपनी बेटी को उसकी शादी के समय दिए जाते हैं। प्राचीन काल में अपने स्वयं के घर को स्थापित करने के लिए नव वर वधू को एक प्रकार की सहायता के रूप में दिया जाता था। वर्तमान समय में भारत सरकार ने इस प्रथा पर प्रतिबंध लगा दिया है

परन्तु अब भी लोक इसका पालन करते हैं। जिसे अब नगदी की जगह घरेलु समान देकर किया जा रहा है। यह प्रथा एक सामाजिक बुराई का रूप धारण कर चुकी है। वर्तमान समय में बिना दहेज के लड़की की शादी करना बेहद मुश्किल हो गया है। इन दिनों ये एक बड़ी सामाजिक समस्या बन गई है और दलित समाज भी इससे अछूता नहीं है। *विद्रोह* उपन्यास में पूजा की शादी में दिए जाने वाले दहेज का वर्णन विक्रम और प्रकाश के वक्तव्य के माध्यम से किया हैः

> लगता है कि फूफा के मरने पर मिला सारा पैसा इसी शादी में लगा दिया, वो पैसा ही नहीं कर्ज़ भी ले लिया जाट से। मकान के कागज़ इसके पास गिरवी रख दिए.....काम तो ठीक है बुआ, लेकिन इतना खर्च करने की भी क्या जरूरत थी? विक्रम बोला। क्या करे बेटा, इज्जत की खातिर करना पड़ा। लड़की के लिए अच्छा घर बार मिल गया....फिर लड़के वालों का दबाव भी था कि शादी का इन्तजाम बढ़िया से होना चाहिए....(68)

दहेज प्रथा के कारण लोग शादी ब्याह में बढ़ चढ़ कर खर्च करते हैं और उपहार के साथ-साथ वधू पक्ष के द्वारा विवाह का प्रबंध भी उच्च स्तर का किया जाता है, ताकि सब कुछ वर पक्ष के अनुसार हो सके इसके लिए वह कर्ज लेने में भी संकोच नहीं करते।

जहाँ हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में गैर-दलित तथा दलित लेखकों ने दहेज के नाम पर शादी विवाह में कर्ज़ लेने की प्रवृति को प्रस्तुत किया है वहीं उपन्यास *विद्रोह* में कैलाशचन्द्र चौहान ने दलित पात्र विक्रम के माध्यम से दहेज रूपी दिखावे के लिए लोगों को सुचेत करने का प्रयास भी किया है जो कि शिक्षित दलित जातियों में परिवर्तन को दर्शाता हैः

> हमारे समाज को पता नहीं कब समझ आएगी। बच्चों की शिक्षा या उनके व्यवस्था पर कुछ खर्च करें तो उनका कैरियर बने, लेकिन लोक दिखावा रीति रिवाजों के नाम पर लुटते-पिटते रहेंगें और कर्ज़ के बोझ तले दब जाऐंगे। जितना बजट है उतने में ही शादी ब्याह निपटाने चाहिए, कर्ज़ करने की क्या जरूरत है ....विक्रम को खुशी के मौके पर मानसिक परेशानी ज्यादा हो गई थी।(68)

दलित समाज में दहेज की प्रथा गैर-दलित जातियों की देखादेखी ही शुरू हुई है परन्तु गैर दलित जातियों की तरह दलित जाति में इसके लिए कोई कड़े नियम नहीं है। *मरोड़* उपन्यास में विपिन बिहारी ने दलित समाज में दहेज की समस्या को कपिल देव और प्रभा देवी के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> आज के समय में हमारे समक्ष सबसे बड़ी समस्या है लड़कियों की शादिओं में दान-दहेज देने के बाद भी मनचाहा घर व वर नहीं मिलता । घर अच्छा न मिले तो लड़कियों की जिन्दगी नर्क बन जाती है। इस पर अभी से ही सोचना चाहिए, प्रभा देवी चिंतातुर लग रही थी। अभी वह इस शादी-ब्याह जैसे विषय से हटना नी चाहती थी......मैं जानता हूँ लेकिन अभी से ही हम क्यों और सिरदर्द बढाएं,लड़कियां ब्याहने योग्य होंगी तब सोचेंगे। (84)

प्रस्तुत विमर्श में दोनों ही भाषाओं के गैर-दलित तथा दलित लेखकों ने दलित समाज के सांस्कृतिक पक्ष से जुड़ी लोक संस्कृति के अंतर्गत विवाह शादी तथा अन्य पक्षों से जुड़े लोक गीतों को *मगहर की सुबह, भंवर, विद्रोह, हनेरी रात दे जुगनू, पंडोरी प्रोहितां,* तथा *परणेश्वरी* उपन्यास में प्रस्तुत किया है। लोक प्रथाओं में दहेज प्रथा प्रर्दाप्रथा का वर्णन *मगहर की सुबह, भंवर,* इत्यादि उपन्यासों में देखने को मिलता है

। दलित जातियों में दहेज प्रथा का वर्णन *विद्रोह* उपन्यास में किया गया है। दलित समाज में व्याप्त प्रथाओं में दहेज प्रथा तथा प्रर्दा प्रथा में परिवर्तन की स्थिति का वर्णन *विद्रोह* उपन्यास में कैलाशचन्द्र चौहान ने प्रस्तुत किया है।

5.2.3 रीति रिवाज

समाज में रीति रिवाज परम्पराएँ या संस्कार पीढ़ी-दर पीढ़ी मानव जातियों में चले आए हैं। इनका सम्बन्ध दैनिक चर्या या जीवन की प्रमुख घटनाओं से होता है। कभी-कभी ये धर्म और त्यौहारों से भी सम्बन्धित होते हैं। रीति रिवाजों के इस चलन से समाज का कोई वर्ग अछूता नहीं है। दलित समाज में व्याप्त विभिन्न रीति रिवाजों को आलोच्य उपन्यासों में दलित तथा गैर-दलित लेखकों द्वारा प्रस्तुत किए गए हैं।

5.2.3.1 बच्चे के जन्म समय रीति रिवाज

भारतीय समाज में बच्चे के जन्म के समय कई संस्कारों का पालन किया जाता है। प्रस्तुत उपन्यास में बच्चे के जन्म के समय से सम्बन्धित 'छोछक' नामक संस्कार का वर्णन किया गया है जिसमें बच्चे के नाना के परिवार के पक्ष से कुछ उपहार तथा वस्त्र इत्यादि बच्चे को तथा उसके माता पिता को भेंट स्वरूप दिए जाते हैं और इस प्रकार इन रस्मों रिवाजों का निर्वहन करने के लिए ये लोग कर्ज़ लेने से भी संकोच नहीं करते। *भंवर* उपन्यास में लेखक कैलाशचन्द्र ने शहरी तथा ग्रामीण दलित समाज द्वारा बच्चे के नाना के परिवार के द्वारा की जाने वाले रीति-रिवाजों का वर्णन किया हैः

> दो हजार रूपए ने कुछ ऐसा रंग दिखाया कि छोचक के कार्यक्रम से चार दिन पहले उसे पैसे भी मिल गए। सबसे पहले उसने मेठ को

> ब्याज सहित उसके पैसे लौटाए। छोचक वाले दिन कुँवरपाल की ससुराल वालों ने उसके परिवार के लोगों रिश्तेदारों ने ढेर सारे उपहार दिये......कुआं पूजने की रस्म भी पूरी की। लड़के का नामाकरण भी हुआ..।(76)

5.2.3.2 विवाह सम्बन्धी रीति रिवाज

विवाह एक सामाजिक संस्था है जिसके होने से व्यस्क युवक-युवतियों को अपना घर बसाकर साथ-साथ रहने की वैध सामाजिक स्वीकृति प्राप्त होती है। विवाह के समय आम जन-जीवन में कुछ रीति-रिवाजों का पालन किया जाता है जिनका वर्णन दलित तथा गैर-दलित साहित्यकारों ने किया है। *मगहर की सुबह* उपन्यास में लेखिका वंदनादेव शुक्ल ने दलित जातियों में विवाह सम्बन्धी रीति-रिवाजों को प्रस्तुत किया हैः

> राजो की शादी हो चुकी और अब वो अपनी बहू मैना के साथ लौट आया था। घर में बहू दिखाई का आयोजन था। पूरा आंगन बहू-बेटियों और बड़ी बूढ़ियों से भरा हुआ था, केतकी घर में भाग-भाग कर तमाम कामकाज निपटा रही थी। (23)

प्रस्तुत उपन्यास में लड़के के विवाह के पश्चात उसकी पत्नी का चेहरा दिखाई की रस्म होती है। मैना की चेहरा दिखाई की रस्म उसकी सास केतकी के द्वारा करवाई जाती है। विवाह के पश्चात पग फेरा की रस्म पर मैना मायके आई तो उसकी विदाई के समय उसके माता पिता द्वारा मैना को विदा करने के लिए गाँव की सीमा तक ज़ोर-ज़ोर मरदंग बजा कर पिता द्वारा किए जाने वाले रिवाज को निभाया जाता है, उदाहरणः

> अम्मा-बापू ठेठ 'कुइया माता' के मंदिर तक छोड़ने आये जो कि गाँव की सीमा थी और जहाँ से बैलगाड़ी में बैठकर बस अड्डे तक पहुँचा जाता था। बापू 'सगुन' संग लिए अपना मरदंग गले में टांगे थे....और जब मैना ने उनकी ओर देखा तो अम्मा बोली थी, बिटिया सगुन होवे है। बापू ने खूब मरदंग बजाया। जब तक कि बैलगाड़ी जंगल को मुड्ड और मरदंग की पूड़ी फट न गयी।(30- 31)

अर्थात दलित समाज के लोग गरीबी और निर्धनता के चलते छोटे-बड़े अवसरों पर हर प्रकार के रीति रिवाजों को निभाना नहीं भूलते। *भंवर* उपन्यास में दलित लेखक कैलाशचन्द्र ने इन रीति रिवाजों के पीछे छुपी निर्धनता को भी उजागर किया हैः

> पाँच छेः बहनों को तीज-त्यौहार, बच्चे होने पर उनका छोछक भरना, सास ससुर के मरने पर भी मान सम्मान देना, खिचड़ी देना तेहरवी पर पगड़ी रस्म पर खर्चा करना आदि रीति रिवाज पूरे करने में ही उसकी हालत खराब रहती है। ऐसे समाज के भाईयों की ओर भी ज्यादा, जो पहले से शोषित और पीड़ित समाज के अंग हैं और उनकी आमदनी भी सीमित है ।(137)

इस प्रकार लेखक ने इन रीति रिवाजों के पीछे छुपी वास्तविक सच्चाई को भी उजागर किया है कि अर्थाभाव के कारण ये लोग पहले ही शोषित और पीड़ित हैं। ऊपर से समाज के यह रीति-रिवाज जिनकों पूरा करने में इस समाज के परिवारों की हालत खराब रहती है। विवाह शादी इत्यादि के समय भात भरने की रस्म का भी लेखक ने वर्णन किया है।

> भातई होना चाहिए बस। चाहे भातई लाख रूपए खर्च करके भात भरे या सवा रुपए देकर, इसमें कोई फर्क नहीं पड़ता। अमीर भातई हुआ

> तो शादी में जग लुटा देगा, आधी शादी तो वही कर देगा। उसकी नाक भी ऊँची होगी, लड़की का भी ससुराल में मान बढ़ेगा ...सब वाह-वाह करेंगे। गरीब भातई हुआ तो जैसे तैसे करके ससुराल में अपनी बहन का सम्मान बचाने की कोशिश करेगा, चाहे कर्ज़ा करना पड़े। भात भरने में घर मकान, खेत गिरवी रखते या बिकते देखें हैं। (77)

इस प्रकार यह रस्म दलित समाज में पूरी शिद्धत के साथ निभायी जाती है ताकि लड़की को ससुराल से कोई ताअना इत्यादि न सुनना पड़े। दलित जातियों में शादी विवाह के समय की जाने वाली भात की रस्म का वर्णन *विद्रोह* उपन्यास में कैलाशचन्द्र ने प्रस्तुत किया हैः

> उसके बाद भात देने की प्रक्रिया शुरू हुई। शुरूआत में दरवाजे की चौखट पर आटे से पूरकर पटड़ा रखा गया। बुआ आकर खड़ी हुई, उसके हाथ में थाली थी। जिसमें कुछ लड्डू हल्दी,चावल के कुछ दाने तथा जलता हुआ दिया था। पीछे महिलाएँ खड़ी थीं। (65)

भात लेने से पहले भात का सामान लेकर आए लोगों का स्वागत, उनकी आरती उतार कर किया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में औरतें यह कार्य विधि विधान से करती हैं। भात की इस रस्म का अपना ही विशेष महत्व होता है। भात में आए सामान को आस-पड़ोस को दिखाया जाता है। भातीयों द्वारा लाए गए सामान को देखने के लिए आस-पड़ोस की भीड़ उमड़ पड़ती है।

> बुआ के सामने भीड़ हो गई। भात लेने के समय आस पड़ोस से भी महिलाएँ, पुरषों बुजुर्गों को बुला लिया था। सभी की उत्सुकता थी, भात में भाती क्या देंगे? यह किसी का रिकार्ड तोडेंगे या नहीं...सबसे

> पहले विक्रम के ताऊ पटड़े पर खड़े हुए। बुआ ने उनकी आरती की। बुआ को उन्होंने चुनरी चढ़ाई, महिलाओं ने चुनरी पर गीत शुरू कर दिया। विक्रम के ताऊ जी ने 21सौ रूपए का हार पहनाया....रस्म के पश्चात बुजुर्ग नीचे दरी पर बैठ गए।(66)

उपन्यास *मरोड़* में लेखक विपिन बिहारी ने शहरी तथा ग्रामीण समाज में लड़की के विवाह के पश्चात ससुराल पक्ष के द्वारा की जाने वाली बहू भोज की रस्म का वर्णन किया हैः

> बहू भोज का दौर देर रात तक चलता रहा। खाने वाले का तांता लगा रहा। हर तरफ से कपिल देव ऐश्वर्यवान लग रहे थे। एक दलित भी इतना सामर्थ हो सकता है, सभी की जुबान पर उनके ऐशवर्य की बुदबुदाहट थी। कपिल देव सोच सोचकर गौरान्वित हो रहे थे। जैसे-जैसे समय बीतता जा रहा था। बहुत सारे लोग आए दरवाजे पर, मैने तो कल्पना नहीं की थी। बहूभोज समाप्त होने पर हांफती हुई सी चिंतादेवी कह रही थी कपिल देव से।(75-76)

बहू भोज की रस्म में ब्याह कर लाई गई बहू को सबसे मिलाया जुलाया जाता है और सभी रिश्तेदारों, आस-पड़ोस, मित्रों को बहूभोज के नाम पर खाना खिलाया जाता है अर्थात दावत दी जाती है। पंजाब में दलित समुदाय में लड़के के विवाह के समय निभाई जाने वाली रस्म सहराबंदी का वर्णन पंजाबी उपन्यास *केही वगे हवा* में लेखक अज़ीज सरोए ने किया है जो कि दुल्हे की बहनों के द्वारा निभाई जाती हैः

> सहराबंदी वेले छोटों ते गेजो दोसड़ा लई खड़िआं सी। जगतू गुलाबी पग्ग बन्न के चड़दे वल्ल गदैले ते बैठा सी। पीछे खड़ीआं मेलणां गोण

> छोह रहीआ सी, वड्डी भैण ने सेहरा बन्निआं तां गोण शुरू हो गया। (34)

5.2.3.3 मृत्यु सम्बन्धी रीति रिवाज

जीवन और मृत्यु साथ-साथ चलते हैं जिस प्रकार जीवन को जीना साश्वत सच्चाई है उसी प्रकार मृत्यु भी जीवन के साथ जुड़ा एक अटल सत्य है। लोक जीवन में इन्सान के जन्म से लेकर मृत्यु तक के सभी क्रिया-कलापों का विशेष महत्व है। हिन्दी और पंजाबी के दलित तथा गैर-दलित उपन्यासकारों ने दलित जीवन के सांस्कृतिक पक्ष से जुड़े रीति रिवाजों को उपन्यासों में प्रस्तुत किया है। पंजाबी उपन्यास *अन्नदाता* में लेखक बलदेव सिंह ने पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में मृत्यु के समय निभाए जाने वाले रीति रिवाजों का भी वर्णन किया हैः

> रीति अनुसार बाबा रामदास दे फुल्ल जलप्रवाह कर दित्ते गए। फेर ओह हरि की पोड़ी पर गए अपणे पिंड द पंडित लभ्ब के दान पुन्न कित्ता। अतै पंडतां दी वही विच्च बाबा रामदास दा विवरण लिखवाईया .....आथण नू रिशीकेश पहुँच गए। उत्थे इक्क धर्मशाला विच्च रात कट्टी (111)

उपन्यास *पंडोरी प्रोहितां* में लेखक निंदर गिल्ल ने पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में दलित समुदाय के लोगों द्वारा मृत्यु के समय विधिवत किए जाने वाले रीति रिवाजों का वर्णन किया हैः

> औह मरन वाले नू नहां के, उस दे वड्डे मुण्डे दे हत्थ आटे दा लड्डू बणा के मंत्र पड़दा सी दान करवाऊंदा सी, कपाल क्रिया करवाऊंदा सी, फुल्ल चुगण विच्च मदद करदा सी।(112)

शहरी दलित समाज में मृत्यु के समय के रीति-रिवाजों का वर्णन पंजाबी नावल *मुक्ति* में एस.एस कालड़ा ने प्रस्तुत किया हैः

> आह जिहड़े लाडो दे क्रिया क्रम लई पंडित जी ने ग्यारा सो रूपए मंग लए गल्ल ता उसदी आ। कित्थों इक्टठे करा मैं ग्यारा सो रूपए। इस दो सो विच्च ता कुछ बचदा ही नहीं, जेकर माड़ी मोटी चाहपाणी घटावां वी तां वी महीने मगरों दस पंज ही बचणगे। हुण कंती नू हर वेले लाड़ो दे क्रिया क्रम दी सोच लग्गी रहिंदी।(102)

दलित जाति के लोग क्रियाक्रम के नाम पर पंडितों को दान दक्षिणा भी देते हैं। इसमें बेशक निर्धनता आड़े आती है, परन्तु यह लोग क्रिया क्रम के नाम पर पीछे नहीं होते। समाज में रहने वाले प्रत्येक व्यकित का जीवन इन रीति-रिवाजों से घिरा हुआ है जिनकी छाया में समाज जी रहा है। रीति रिवाज उतने ही पुराने हैं जितना की मानव जीवन, यह रीति रिवाज हमारी सांस्कृतिक धरोहर होते हैं और हमारी पहचान भी। दलित समाज में भी जीवन के हर खुशी गमी के अवसर पर हर प्रकार के रीति रिवाजों का पालन किया जाता है वहीं बाह्मणों द्वारा कर्मकांडों के नाम पर उनका शोषण भी किया जाता है।

प्रस्तुत विमर्श में हिन्दी और पंजाबी दोनों भाषाओं के लेखकों ने ही दलित समाज से जुड़े रीति रिवाजो को प्रस्तुत किया है। जिसमें विवाह सम्बन्धी रीति रिवाजों का वर्णन कैलाशचन्द्र चौहान ने *भंवर*, *विद्रोह*, वंदनादेव शुक्ल ने *मगहर की सुबह* तथा विपिन बिहारी ने *मरोड़* उपन्यास में प्रस्तुत किया है। बच्चे के जन्म के समय के रीति रिवाजो का वर्णन *भंवर* उपन्यास में तथा मृत्यु सम्बन्धी रीति-रिवाजो का वर्णन बलदेव सिंह ने *अन्नदाता*, तथा निंदर गिल्ल *ने पंडोरी प्रोहितां* उपन्यास में प्रस्तुत किया है।

निष्कर्षतः क्हा जा सकता है कि प्रत्येक समाज के रहन सहन, खान पीन, रीति रिवाज मान्यताएँ उस समाज की संस्कृति का अटूट अंग होते हैं। 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श तुलनात्मक अध्ययन के अंतर्गत दलित समाज के सांस्कृतिक पक्ष को प्रस्तुत किया गया है जिसके अंतर्गत दलित समाज के जीवन से जुड़े पर्वोत्सव तथा मेलों का वर्णन किया गया है। दलित जीवन से जुड़ी लोक संस्कृति को प्रस्तुत करते हुए दलित समाज से जुड़े लोकगीतों को प्रस्तुत किया है। दलित समाज से जुड़ी प्रथाएँ प्रर्दा प्रथा तथा दहेज प्रथा जैसी समस्या तथा उसमें परिवर्तन की स्थिति को प्रस्तुत किया गया है। दलित जातियों विवाह, मृत्यु, तथा बच्चों के जन्म के समय किए जाने वाले रीति रिवाजों को चयनित लेखकों ने अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किया है।

अध्याय 6

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्शः एक तुलनात्मक अध्ययनः समसामयिक समस्याओं के सांकेतिक निवारक बिन्दुओं का विश्लेषण

साहित्यकार जब साहित्य का सृजन करता है तो वह समाज में व्याप्त जीवन के सभी पक्षों से सम्बन्धित समस्याओं तथा विद्रुपताओं से पाठकों को अवगत करवाता है इसलिए ही साहित्य को समाज का दर्पण क्हा जाता है। साहित्यकार का यही मूल धर्म भी है कि वह अपनी रचना में किसी पात्र, प्रसंग, घटना आदि के माध्यम से इन समस्याओं के समाधान के प्रयास के लिए संकेत करता है। “21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श तुलनात्मक अध्ययन(चयनित उपन्यासकारों के संदर्भ में” विषय पर तुलनात्मक अध्ययन करते हुए पाया गया कि दोनों ही भाषाओं के दलित तथा गैर-दलित लेखकों द्वारा वर्तमान समय में दलित समाज के जीवन के विविध आयामों से सम्बन्धित समस्याओं को इंगित कर उनके निदान का प्रयास किया गया है। वास्तव में पृथ्वी पर मानव सृष्टि के साथ ही समस्याओं का भी आस्तित्व रहा है अर्थात समस्याओं का आस्तित्व भी मानवीय जीवन के साथ ही संभव है। जब कोई समस्या व्यकित स्तर से ऊपर उठ कर समाज को प्रभावित करती है तो वह सामाजिक समस्या बन जाती है। प्रस्तुत अध्याय में दलित समाज के जीवन से जुड़ी विभिन्न समस्याओं को दर्शाया गया है जिनका वर्णन चयनित रचनाकारों ने अपनी रचनाओं में किया है।

वंदनादेव शुक्ल

मगहर की सुबह उपन्यास में लेखिका वंदना देव शुक्ल ने ग्रामीण क्षेत्रों में दलित परिवारों में निर्धनता और गरीबी को समस्या माना है कि अर्थाभाव के कारण दलित जातियों के लोग या तो अपने बच्चों को शिक्षा दे ही नहीं पाते और अगर मुश्किल से उनकों पढ़ाते भी हैं तो सिर्फ प्राईमरी या सेकेंडरी कक्षा तक ही। चाह कर भी दलित जाति के बच्चे उच्च शिक्षा नहीं ग्रहण कर पाते। अशिक्षा अथवा कमशिक्षा के कारण

दलित जातियां सरकार द्वारा दी गई सरकारी सहूलियत का लाभ न ले पाने को लेखिका ने समस्या माना है, वहीं समस्या के समाधान हेतु लेखिका ने दलित जाति के लोगों को प्रोढ़ शिक्षा के प्रति जागरुक भी दिखाया है “भाभी प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र में फार्म भर दिया है, उन्होंने क्हा है सीधे ग्यारहवीं कर सकती हो प्राइवेट,‘रज्जों ने बताया”।(61)।लेखिका ने दलित समाज में व्याप्त गरीबी को एक बड़ी समस्या मानते हुए प्रस्तुत उपन्यास की दलित युवती मैना तथा उसके परिवार को गरीबी से प्रभावित दिखाया हैः

> पेट और भूख का राक्षस कोई वजह थोड़े देखता है। भूख और लाचारी की आंखे तो सिर्फ भोजन खोजती हैं। भूख जिन्हें फकत हरियाली के सपने आते है, उसके न होने से वह चंडीका बन जाती है .....भूख विवशता पीड़ा सब स्त्रीलिंग ही तो है! एक सीमा के बाद वो भी भभक उठती है।(54)

वर्तमान समय में बेरोजगारी की समस्या भारत की प्रमुख समस्याओं में से एक है जिससे समाज का प्रत्येक वर्ग प्रभावित है। बेरोजगारी की इस मार से भारतीय वर्ण व्यवस्था में निम्न माने जाने वाला वर्ग अर्थात दलित समाज भी नहीं बच पाया है। दलित समाज में व्यापत बेरोजगारी को लेखिका ने समस्या माना हैः

> लेकिन साब, पीढ़ियो से काम करते लोग जो पढ़े लिखे भी नहीं हैं ,क्हां जाएं? लेकिन मजदूर भरोसे पर जीता है साब और वो अपनी ऊर्जा शकित बल्कि अपना पूरा जीवन सब अपने काम के लिए झोंक देता है। कहे कि अपने मालिकों के लिए और फिर हमें समय भी कहां मिला निर्णय लेने का ? इतनी जलदी आप लोगों ने निर्णय लिया मिल्ल बंद करने का कि हम मजदूर इस पर यकीन कर पाते या इसे सोच पाते,

> ताला ही पड़ गया मिल्ल में। हमारे पास न शिक्षा है न औहदेदार लोगों के सम्बन्ध....कहाँ जाए अपने परिवार को लेकर आप ही बताएं?....कुछ के तो भूखे मरने की नौबत आ रही है साब! मिश्रा जी ने जजबात पर काबू रखते हुए क्हा।(42)

वर्तमान समय में बेरोजगारी विकराल रूप धारण कर चुकी है। आज पढ़े लिखे लोगों को रोजगार बड़ी मुश्किल से मिलता है ऐसे समय में अशिक्षित व्यकित की हालत तो और भी ज्यादा खराब हो जाती है। प्रस्तुत उपन्यास *मगहर की सुबह* में लेखिका ने शहरी दलित अशिक्षित मजदूरों की दयनीय स्थिति को प्रस्तुत किया है कि मिल्ल बंद होने के कारण बेरोजगार हो चुके दलित वर्ग के लोगों के पास न तो शिक्षा है और न ही सिफारिश और जीवन यापन के लिए अन्य कोई साधन भी नहीं है जिससे ये लोग अपने परिवारों का गुजारा चला सके। बेरोजगारी के कारण इनके भूखे मरने की नौबत आ जाती है और ऐसी स्थिति में इनके पास आत्म हत्या करने के सिवाय और कोई रास्ता नहीं होता।

लेखिका ने आर्थिक शोषण को समस्या मानते हुए दलित जातियों को आर्थिक शोषण के प्रति आवाज उठाने के लिए प्रेरित किया है अर्थात लेखिका ने मजदूर दलित जातियों में आर्थिक शोषण को समस्या माना है और आर्थिक शोषण के खिलाफ आंदोलन में औरतों को सहभागिता करने और आर्थिक शोषण के खिलाफ आवाज उठाने के लिए भी प्रेरित किया हैः

> इंटक के नेता राजवीर सिंह महिलाओं को घर से बाहर निकलने के लिए उक्सा रहे हैं। भाषण में कह रहा था मजदूर भाईयों ...8 अगस्त सन् 1908 में अमरीका की एक फैक्ट्री में ऐसे ही मिल मालिकों ने मजदूरों पर ज्यादती की थी तब वहां कि हजारों महिलाओं ने

> विश्वव्यापी आंदोलन किया था आज तक वही दिन 8 अगस्त को महिला दिवस के रूप में मनाया जाता है। महिलाएँ भी तो इस प्रताड़ना की सहभागी है हमें इन दरिंदों के आगे झुकना नहीं है। अब हम सभी मर्दों–स्त्रियों को कंधे से कंधा मिलाकर आगे की रणनीति तय करनी है।(47)

प्रस्तुत उपन्यास में लेखिका ने दलित जातियों में जाति आधारित राजनीति को समस्या माना है। दलित जातियों को वोट बैंक मान कर उनके मत्तों से चयनित होकर स्वर्ण जातियों के लोग इनका जमकर शोषण करते हैं और शोषण में पिछ्ड़ी दलित जातियों से चयनित नेता लोग भी अपनी अहम भूमिका निभाते हैं। दलित जातियों से चयनित उम्मीदवारों को अगड़ा जाति के स्वर्ण अपने हाथ की कठपुतली बनाते हैं और उनकी आड़ में अपने सभी जायज और नाजायज कार्य करवाते हैं। चुनाव के बाद पिछ्ड़ी दलित जातियों से निर्वाचित होकर आए प्रत्याशी भी अवसर का पूरा लाभ उठाते हुए अपने स्वार्थ को पूरा करते हैः

> सत्ता परिवर्तन के बाद 'दलित' व पिछ्ड़ी जातियों, के लोग जो इन उदारवादी नीतियों का लाभ ले रहे थे, वे दलित नेताओं और स्वर्णों के हाथ की कठपुतली थे। ऐसे समय में दलित जिनका वर्ण वहीं था, पर वर्ग बदल चुका था।(84)

प्रस्तुत उपन्यास में लेखिका ने आर्थिक शोषण की समस्या से जूझते दलित मजदूर लोगों को डरा धमका कर उनका मानसिक तथा शारीरिक शोषण और पुलिस प्रशासन के व्यवहार को भी समस्या माना हैः

> सूखे मूँह धंसी आँखे में फिक्की आशाएँ लिए भूखे प्यासे मजदूर जत्थों में उकड़ूं बैठे या थके- हारे लेटे दिखाई देते हैं। छोटी बड़ी सभाएं नारे

> योजनाएं और पूरे क्षेत्र में पुलिस का जमावड़ा। वे लोग हाथ में डंडे और खुद को बचाने के कुछ औजार लिए यहां-वहां घूमते रहते, मजदूरों को बात-बेबात हड़काते रहते। किसी दंगे फसाद की संभावना के चलते पूरा उद्योग नगर पुलिस छावनी में तबदील कर दिया गया था। ये उन्हीं मजदूरों के लिए तैनात किए गए थे जिनमें ठीक से बोलने की ताकत भी शेष नहीं बची थी।(47)

शिवमूर्ति

शिवमूर्ति ने *तर्पण* उपन्यास में पुलिस प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा उससे प्रभावित दलित जातियों को समस्या माना है। जिसके चलते दलित समाज के लोगों को इंसाफ नहीं मिल पाता और पुलिस विभाग पैसे लेकर पूँजीपति लोगों का ही साथ देता हैः

> थाने से छूट गया लगता है। मामले को रफा-दफा करवा आया। सुनते है इसके मामा का कोई रिस्तेदार है पुलिस में। तो क्या सिर्फ दिन भर की गिरफतारी के लिए इतनी कोशिश पैरवी की गई।......खाली कोशिश पैरवी नहीं काम आती थाना पुलिस में ले जा के मोटी थैली कुर्रे दिया होगा........... गिरफ्तारी तो माल ऐंठने के लिए की गई होगी। हरिजन उत्पीड़न की दरखास्त पड़ी नहीं, कि थाना कि दिहाड़ी पक्की हुई।(45-46)

प्रस्तुत उपन्यास में लेखक शिवमूर्ति ने पुलिस प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा पुलिस प्रशासन द्वारा दलित जाति के उत्पीड़न और जातिवाद को समस्यां माना है।

रूप सिंह चन्देल

रूप सिंह चन्देल ने उपन्यास *दगैल* में अशिक्षा, कमशिक्षा, बेरोजगारी तथा आर्थिक कारणों से प्रभावित दलित स्त्री की स्थिति को समस्या माना है। आर्थिक तंगी की सबसे अधिक मार दलित वर्ग की औरतों पर पड़ती है। बेरोजगारी के कारण पुरूषों को काम न मिलने के कारण दलित समाज की औरतें और लड़कियां घरों में साफ-सफाई का काम-काज करके गृहस्थी की गाड़ी चलाने का प्रयास करती हैं। प्रस्तुत उपन्यास में दलित स्त्री पात्र सुनीता और उसकी मां घरों में साफ-सफाई करके अपने परिवार का गुजारा चलाती हैं और सुनीता आर्थिक अभावग्रस्तता के कारण छठी सातवी कक्षा से आगे पढ़ नहीं पातीः

> सुनीता के पिता ने भाईयों से पैसे लिए और सिधौरां कलां में किराएँ के मकान में शिफट हो गया। जब तक मकान के पैसे रहे वह घर में पड़ा रहा। सुनीता की माँ जानती थी कि जिस दिन पैसे समाप्त हो जाऐंगे वह सड़क पर होगी.....उसने शकित नगर में काम पकड़ लिया और उसके बाद से वह उन घरों में ही काम कर रही थी.....लगभग बीस वर्षों से। इसलिए कमल गुप्त की मौसी के प्रस्ताव पर उसने विचार किया और विक्रांत के यहां काम करने के लिए सुनीता को प्रोत्साहित किया। सुनीता भी अकेली कमाती माँ की समस्या से पीड़ित थी। घर में पड़ी वह कल्पना करती रहती कि काश माँ का हाथ बटाने के लिए उसे भी घरों में काम करने जाने कि विवशता न रही होती तो वह भी कुछ पढ़ लेती।(99)

दलित परिवार की औरतों को अकसर घरों में काम काज करते समय इस प्रकार की समस्या का सामना करना पड़ता है कि जिसमें उनके साथ शारीरिक शोषण का प्रयास किया जाता है। दलित परिवारों की जो युवतियां घरों में साफ-सफाई का काम करती हैं वह उनकी आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण ही करती हैं ताकि मां-बाप

के साथ घर की जिम्मेदारी का बोझ उठा सके, परन्तु गैर दलित जाति के लोग जिनके यहां वह काम करती हैं वह उनकी इस मजबूरी का फायदा उठाकर उनके शारीरिक शोषण का प्रयास करते हैं-

> उसके बाद सुनीता तीन सालों तक दूसरे घरों में काम करती रही थी लेकिन बढ़ती जवानी के साथ लोगों की नज़रे उसके शरीर का और अधिक निरीक्षण करने लगी थीं। एक दिन जब एक घर के लाड़ले ने, जो उसी की उम्र का था और बाहरवी में पढ़ रहा था,उससे गंदा प्रस्ताव कर दिया, जिसके बदले पाँच सो रूपए देने की बात कही उसने। अगले दिन से ही सुनीता ने काम छोड़ दिया। (101)

गैर-दलित जातियों के युवकों के द्वारा दलित जातियों की अशिक्षित अथवा कम शिक्षित लड़कियों के शोषण को उपन्यासकार ने स्वर्ण युवक नवीन तथा दलित युवती वीना के माध्यम से प्रस्तुत किया है। नवीन अपने घर की कामवाली बाई वीना पर नशे की हालत में धुत्त होकर उसका बलात्कार करने का प्रयास करता हैः

> बीना कुछ नहीं बोली। झाड़ू लगा बाहर निकल गयी। पाँच मिनट में ही वह पोचा लगाने आ पहुँची। उसने बैठकर पोचा लगाना शुरू ही किया था कि नवीन तेजी से बिस्तर से उठा और उसने कमरे का दरवाजा बंद कर कुण्डी लगी दी। बीना हाथ में पोचा पकड़े खड़ी थी। नवीन को उद्देश्य समझते उसे देर नहीं लगी.......बाबू क्या बात है??? " कुछ नहीं तुम जो चाहोगी ....दूँगा"। और झपटकर बीना को बिस्तर पर लजाने का प्रयास करने लगा। (39)

लेखक रूप सिंह चन्देल ने आर्थिक कारणों से नारी शोषण को दलित समाज में एक बड़ी समस्या माना है वहीं *कानपुर टू कालापानी* उपन्यास में लेखक ने जातिवाद को समस्या माना है।

बलदेव सिंह

गैर-दलित उपन्यासकार बलदेव सिंह ने अपने उपन्यास *अन्नदाता* में पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक कारणों से प्रभावित दलित स्त्रियों और बेरोजगारी को समस्या माना है। बेरोजगारी के कारण उन्हें कई ऐसे कार्य करने पड़ते हैं जिनको की समाज उचित नहीं मानता और ऐसी स्थिति में उनका शोषण करने में पुलिस प्रशासन भी पीछे नही रहता। पुलिस प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार को भी लेखक ने समस्या माना हैः

> फेर खुश करन दा सिलसिला इस अफसर तो ही शूरू करिए, की खयाल है गुरदीप कौर दा? हाँ चलिए फेर थाणेदार ने पैपर वेट घुमाईयां। दीपा ससोपंज विच्च ही बैठी रही। कुवाटर नाल ही है पिछले पासे....नहीं पलीज अज्ज नहीं कल्ल नू आ जाऊ, दीपां ने हत्थ जोड़े। दीपा दा तरसयोग बणिआ चेहरा देख के, शुक्ला साहब थोड़ा नर्म पै गए, खुश होए शिकार नू खाण तो पहला, ओ जंगली बिल्ले वांग, शिकार नाल खेड़ के उतेजित हुन्दे हन।(230-231)

पंजाबी लेखक बलदेव सिंह बेरोजगारी, और आर्थिक कारणों से शोषित दलित नारी की स्थिति को समस्या के रूप में देखते हैं।

एस.एस. कालड़ा

पंजाबी लेखक एस.एस. कालड़ा ने उपन्यास *मुक्ति* में पंजाब के दलित परिवारों में अर्थाभाव से जूझते दलित परिवारों की दयनीय स्थिति को समस्या माना है कि यह लोग बीमारी के समय चाह कर भी अपना इलाज अच्छे अस्पताल में नहीं करवा सकते और न जाने कितने ही लोग बगैर ईलाज के मौत की बलि चढ़ जाते हैं। प्रस्तुत उपन्यास *मुक्ति* में दलित पात्र बल्लू की माता प्रसूत पीड़ा के कारण दम तोड़ देती है क्योंकि बल्लू की नानी के पास डाकटर की फीस और दवाईयों के लिए पैसे नही होतेः

> जदो बल्लू दे जन्म लैण दा समां आया तां बल्लू दी नानी झुग्गीआं विच्च रहिंदी इक दाई नू फड़ लिआई....विच्चे विच्च् आढ़ी गुआढ़ी सलाह दिंदे की वड्डी डाक्टर कोल ले जाओं। पर वड्डी डाक्टरनी नू देण दे पैसे बल्लू दी नानी कौल किथ्थे सन जेकर कोई सरकारी अस्पताल दी गल्ल करदा सी तां उत्थे वीं इन्नां सारिआं नू कोण पूछदा....जिन्ने चिर नू विचारा मिन्नत तरला कर, इधर–उधर तो उधार सुधार फड़ जा विआजू पैसे फड़ दवाईया लिआऊदां है उदों तक मरीज अगले पार पहूँच जांदा है।(53)

एस.एस कालड़ा ने दलित समाज में निर्धनता को बड़ी समस्या माना है। इसके साथ ही प्रशासनिक क्षेत्रों में विभिन्न स्तरों पर फैले भ्रष्टाचार को भी लेखक ने दलित समाज में एक समस्या माना हैः

> कुत्ती चोरां नाल रल गई। सरकारी मुलाजम ते नेता रल गए। उन्नां दीआं अक्खां 'च'इह थां(जमीन) रड़कन लग्गी। सानू नोटिस आऊण लग्गे कि तुस्सी सरकारी थां ते इह नाजायज कब्जा कीत्ता है इस नू छड्ड जावों नहीं ता तुहाडे विरूद्ध कानूनी कारवाई होवेगी।(73)

निंदर गिल्ल

पंजाबी गैर-दलित लेखक निंदर गिल्ल ने अपने उपन्यास *पंडोरी प्रोहितां* में पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा संस्थाओं में जातिवाद आधारित भेद-भाव को समस्या माना हैः

> स्कूल विच्च धर्म संकट पिआ सुण शहर दे धार्मिक चौधरी वी स्कूलों आ गए। बड़ी मुश्किल नाल समझौता होईया कि सभ बच्चे एक ही जगा पानी पीणगे ते जमात विच्च जित्थे चाहे उत्थे बैठणगे। इस तो पहिला....इस रिआसती स्कूल विच्च उस नू ते होरनां दलितां नू कमरे अंदर नहीं जाण दित्ता जांदा सी। उनां नू कमरे दे बाहर बिठा के खिड़की राही पड़ाईया जांदा सी।(16)

परन्तु धीरे-धीरे समय के परिवर्तन के साथ ही लेखक ने दलित जातियों में शिक्षा के प्रति जागरूकता के चलते शैक्षिक संस्थानों में जातिवाद को लेकर कुछ ढील की स्थिति को प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने जहाँ गैर-दलित जातियों के मध्य जातिवाद को समस्या माना है वहीं दलित जातियों में जातिवाद को भी लेखक ने समस्या माना हैः

> औह बहुजन समाज पार्टी नू "बहूजन..... पार्टी" केहा करदा सी, ऊसनू इह वी सिक्वा सी कि रविदासिआं मजह्बीआं दी वी रिजरवेशन वरत जांदे हन। सरकारी कानूनां अनुसार रिजरवेशन विच्च 50 प्रतीशत रविदासिआं अतै 50 प्रतीशत मजह्बीआं बाल्मीकिआं दा सी । मजह्बीए वाल्मीकि योगता अनुसार न मिलण करके रविदासिए भरती कर लए इस लई वी ऊह मजह्बीएँ वाल्मीकां ऊपर जोर पाऊदां सी कि "पढों अग्गे वधो बरावर होवो"....अस्सी तां नीचा अंदर नीच हां(10)

प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने निर्धनता को बड़ी समस्या माना है। भारतीय समाज में गरीबी समस्या कुष्ठ रोग की तरह गरीबों को पंगु बनाए हुए हैं। समाज का निम्न वर्ग अर्थात गरीब, हरिजन, मजदूर, इस गरीबी की समस्या से पीड़ित हैं। जमींदारों के खेतों में कम पैसे पर वे बेगार खटते हैं। दिन रात श्रम करने पर भी दो जून की रोटी नहीं खा पाते। गरीबी की समस्या का समाधान उपन्यासकार निंदर गिल्ल ने शिक्षा के माध्यम से निकालने का प्रयास किया हैः

> आपणा इन्नां नाल विरोध बहुता चिर नहीं रिहा। बस कुछ कु सालां दा है। जदों आऊण वाली पीड़ी पढ़ गई तां फेर कीहने आपणे चो गोहे कुड़े दा कम्म करना। पहिला आपां दा विरोध करदे सी पर जदों आपणे लोकां दा जट्टा दे दिहाड़ी जोता जाणा ही बंद हो गया तां विरोध वी आपे ही बंद हो गया। चंगा सगो इन्नां बहाने गंदगी चो निकलण दा बहाना मिल गया। नहीं तां असी सारी उमर गोहे विच्च हत्थ देई बैठे रहिणा सी।(53)

प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने धर्म में जातिवाद अर्थात जाति आधारित धर्म को भी पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में समस्या माना हैः

> सिद्धसर साहिब सिद्धसर आले संता तो वी पहिला पिंड दे जुआक सिहोड़े वाले महंत गुरदयाल दास कोल पड़न जाया करदे सन। डेरे महराज दा वी प्रकाश हुन्दा सी। बाबा गुरदयाल दास बहुती भीट्ट नहीं सी मनदा। पर फेर वी जदों भंडारा हुन्दा तां दलितां दी अलग पंगत बाहर बणवाई जांदी ते बाकीआ दी अंदर। बाहर वालियां नू गुड़ दे चोल प्रसाद वगैरा पत्तलां ते वरताया जाण कारण भांडे धोण मांजण दा झंझट न हुन्दा।(14)

जातिवाद के कारण पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में भी गैर दलित जातियां, दलित जातियों को घृणा की दृष्टि से देखती हैं अर्थात जाति धर्म का एक आधार बन चुकी है जिससे हिन्दू धर्म के साथ-साथ सिक्ख धर्म भी प्रभावित हुआ है। पंजाब में भी सिक्ख धर्म में जातिवाद के चलते उच्च जाति के सिक्ख निम्न जाति के सिक्खों का धार्मिक संस्थाओं में प्रवेश तथा उनके द्वारा किया जाने वाले धार्मिक कार्यों को धर्म के विपरीत मानते हैं। इसलिए लेखक ने दलित जातियों में धर्म और धार्मिक कृत्यों में आस्था को बड़ी समस्या माना हैः

> पिंड तां की, सारे पंजाब विच्च ते पंजाब तो बाहर वी उसने कित्ते मजह्बी सिक्खां दा गुरूदुआरा नहीं देखिआ, बाकी तकरीबन सब जातां दे गुरूदुआरे सन। बुड्ढा दल, तरना दल, होर पता नहीं केहड़ी-केहड़ी तरां दे दलां दे गुरूदुआरे सन परन्तु रंगरेटे गुरू के बेटिआं दा आपणा गुरूदुआरा कित्ते नहीं सी।(80-81)

कैलाश चन्द्र चौहान

कैलाश चन्द्र चौहान ने *विद्रोह* उपन्यास में समाज में व्याप्त जातिवाद को समस्या माना है। लेखक के अनुसार दलित क्षेणी का कोई व्यकित पढ़लिख कर चाहे कितना भी उँच्चा क्यों न ऊठ जाए परन्तु उसे उसकी जाति के नाम से ही जाना जाता है न कि पद के नाम से। अर्थात लेखक कैलाशचन्द्र ने जातिवाद को समस्या माना हैः

> फिर भी क्या इतना पढ़लिख कर भी जाति चिपकी रह जाती है। हाँ चिपकी रह जाती है। हिन्दू धर्म में कुछ ऐसा ही है। कर्म के आधार पर बनी जातियाँ जन्म लेने से लेकर मरने तक पीछा नही छोड़ती। शमशानघाट में भी नहीं। चाहे कोई अच्छा पढ़ लिख कर आई.ए.एस आफिसर बन जाए, उसकी जाति वही रहेगी जिस कर्म वाली जाति में

> उसका जन्म हुआ है। डाक्टर अम्बेडकर के साथ क्या हश्र हुआ था। यह सब मैं पढ़कर जान चुका हूँ। (79)

भंवर उपन्यास में लेखक ने दलित समाज में अर्थाभाव को समस्या माना है। निर्धनता के कारण दलित जातियों के लोगों के पास अपनी जीविका का कोई और साधन न होने के कारण ये लोग इस प्रकार के कार्यों को करने के लिए विवश होते हैं और इतना ही नहीं यदि कोई अन्य गरीब दलित व्यकित इनकी उपस्थिति में कूड़ा उठाने का प्रयास करता है तो यह लोग उसे डांटकर भगा देते हैं-

> इन लोगों की उपस्थिति में जब बाहर के व्यकित या बच्चे कट्टे(थैले) उठाए हुए कबाड़ के इन कूड़ेदानों में से कबाड़ चुगने लगते हैं, तो यह लोग उनकों डांटकर भगा देते हैं लेकिन जब कूड़े दान पर काम करने वाले नहीं होते तब बाहर के व्यकित या बच्चे बेझिझक उसमें से बेचने लायक कबाड़ छांट लेते हैं। (47)

दलित जातियों में अर्थाभाव की समस्या से प्रभावित दलित औरतों में बेरोजगारी को भी समस्या माना है। *भंवर* उपन्यास में लेखक ने कूड़े करकट इत्यादि बेच कर जीवन यापन करने वाले और अर्थाभाव से प्रभावित दलित पारिवारों की स्त्रियों की दयनीय स्थिति को समस्या माना हैः

> मैले-कुचेले कपड़ों में दो महिलाएँ व एक पुरूष कूड़े के ढेर पर ही बैठकर कूड़े में से बिकने लायक लोहे, प्लास्टिक, पन्नी पीतल आदि का सामान नंगे हाथों से ही बीन रहे थे। ये सभी चीजे फेकने वालों के लिए तो बेकार थीं, लेकिन इनके लिए अलग आय का साधन। जिन्हें ये कबाड़ियों को बेच देते हैं। (46)

अर्थाभाव के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में गरीब दलित परिवारों की अशिक्षित औरतें घरों में साफ-सफाई का कार्य करती हैं ताकि जीवन यापन कर सकें। उनके पास कार्य के रूप में घरों में साफ-सफाई का कामकाज करने के अतिरिक्त जीवन यापन के लिए अन्य कोई और विकल्प नहीं होता। *भंवर* उपन्यास में बिमला तथा उसकी बूढ़ी मां के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में दलित परिवारों की तरस योग्य हालत को प्रस्तुत किया गया हैः

> गाँव के घरों में काम करने उसकी भाभी नहीं जाती थी, केवल मां जाती थी। मां की उम्र बढ़ चुकी थी, इसलिए मां से काम ज्यादा नहीं हो पाता था। गाँव में आंगन बड़े-बड़े होते थे। उनमें झाड़ू लगाना, कमर दुखाने वाला होता है। भैसों के नीचे से गोबर उठाकर सफाई भी करनी पड़ती है। अब बिमला ने मां के काम में हाथ बटाना शूरू कर दिया था। उसके काम से गांव के लोग खुश थे। उसकी बुजुर्ग मां से अच्छी तरह से काम भी नहीं हो पाता था। घरों से इक्टठा किए कूड़े में वजन ज्यादा हो जाता जो मां बहूत मुशकिल से उठा पाती, वजन कम रखने के चक्कर में कूड़े का टोकरा कम ही भरती थी। इसलिए घूरे तक कूड़ा ले जाने में उसके कई चक्कर लग जाते।(123)

लेखक ने प्रस्तुत उपन्यास में जहाँ दलित जातियों की औरतों को अर्थाभाव की समस्या से प्रभावित दिखाया है वहीं दलित परिवारों की स्त्रियों द्वारा शिक्षित होकर आगे आने के प्रयासो को दलित स्त्री पात्र पुष्पा के माध्यम से समाधान को प्रस्तुत किया हैः

> पुष्पा मेरा परिवार अभी इतना आधुनिक नहीं हुआ कि तुम्हें नौकरी पर भेजने के लिए राजी हो सके।“ यह बात कुछ समझ नहीं आई।

> पड़ोस की औरते मौहल्ला बस्ती करने जाती हैं और कुछ सफाई कर्मचारी हैं। उनके लिए मनाई नहीं, मैं नौकरी नहीं कर सकती?" आप उनसे कहो! जब हमारे समाज की औरतें सफाई का काम कर सकती हैं, मोहल्ला–बस्ती कर सकती हैं, सफाई की नौकरी कर सकती है तो मैं भी नौकरी कर सकती हूँ। मैं तो फिर अच्छी नौकरी करूगी न कि सफाई करने की।(100-101)

कैलाशचन्द्र ने उपन्यास *विद्रोह* में भी दलित जातियों को रोजगार के क्षेत्र में उचित पारिश्रमिक नहीं मिलना को समस्या माना है। प्रस्तुत उपन्यास का गैर- दलित पात्र राजेन्द्र गुप्ता जो कि पेशे से ठेकेदार का काम करता है और वह अपने अधीन काम करने वाले मजदूरों को सरकारी रेट से कम मजदूरी देता है। मजदूरी इतनी कम होती है कि पति-पत्नी दोनों के मिलकर कमाने से भी अर्थाभाव की समस्या ज्यों की त्यों बनी रहती हैः

> राजेन्द्र गुप्ता काम के सिलसिले में कनिष्ठ अभियंता जे.ई के आफिस आया। वह गलियां बनाने के ठेके लेता था। उसका अच्छा खासा काम था। वह ठेकेदार मजदूरों को सरकार द्वारा तय मजदूरी न देकर, मार्किट में प्रचलित मजदूरी से भी कम मजदूरी देता था। जहाँ पाँच सो रूपए मिस्त्री की मजदूरी होती। ठेकेदार मात्र उन्हें सिर्फ तीन सो रूपए देता। पुरूष मजदूर को दो सो रूपए और महिला मजदूर को डेढ सो रूपए देता। फलतः होता यह कि ठेकेदार के पास दोनों पति –पत्नी पूरे दिन यानी तय आठ घंटे की बजाय बारह-बारण घंटे काम करते और मजदूरी मिलती दोनों को मात्र साढे चार सौ रूपए। (56)

प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने दलित समाज की राजनीति में भागीदारी न होने को भी समस्या माना है। वर्तमान समय में पढ़ी लिखी युवा पीढ़ी राजनीति में इसलिए आना चाहती है ताकि दलित जातियों का उद्धार हो सके। उपन्यास *विद्रोह* में दलित पात्र विक्रम राजनीति में इसलिए प्रवेश करना चाहता है ताकि दलित समाज का कल्याण कर सके अर्थात लेखक ने दलित जातियों का राजनीति में प्रवेश को दलित जातियों की राजनीतिक पक्षों से जुड़ी समस्या के समाधान के रूप में प्रस्तुत किया हैः

> राजनीति में हमारी भागीदारी जरूरी है। दलित समाज की आवाज पुरज़ोर तरह से विधान सभा और लोक सभा में उठाए तो बहूत ही हक्क मिल सकते हैं। अम्बेड़कर साहिब राजनीति में नहीं आते तो हमें आरक्षण जैसी सुविधा कहां से मिल पाती। “विक्रम कह कर चुप हो गया” ।(162)

कैलाशचन्द्र चौहान ने प्रशासनिक क्षेत्र में फैले भ्रष्टाचार तथा उससे प्रभावित दलित समाज को एक समस्या माना है। अशिक्षा के चलते ये लोग इस प्रकार के भ्रष्टाचार का शिकार होते हैं और चाह कर भी उसके खिलाफ आवाज नहीं उठा पाते। *भंवर* उपन्यास में कुँवरपाल के घर बेटा होने पर जब वह अपने फंड के पैसे निकलवाने का प्रयास करता है तो उसके अपने फंड के पैसे निकलवाने के लिए भी उसे कलर्क को रिश्वत देनी पड़ती हैः

> “काम तेरा हो जाएगा। खर्चा भी होगा।” वो तो मुझै पता है। पर कितना खर्च होगा बाऊजी। “कम से कम दो हजार।” दो हजार कुछ ज्यादा नहीं है।” यह तू सोच- मेरी जेब में थोड़ी जाएगा, ऊपर भी देना पड़ेगा। फंड पास कराना इतना आसान काम नही है। पहले तो फंड विभाग की स्टेटमैंट निकलेगी। उसमें कितना पैसा है और तेरा पिछला

> कितना बकाया है सब देखना पड़ेगा। एक काम नहीं है जो लोग दस पंद्रह हजार रूपए का फंड लेते हैं वही हजार पंद्रह सौ रूपए दे देते हैं तू तो फिर पचास हजार रूपए मांग रहा है कलर्क एक सांस में बोलता चला गया। " ठीक है बाऊ जी।" कुंवरपाल कलर्क की बातों के जाल में ऐसा फंसा कि उसे हां करनी पड़ी उसे पैसे की जरूरत थी वह मना भी नहीं कर सकता था।(75)

लेखक ने जहाँ प्रशासनिक क्षेत्र में फैले भ्रष्टाचार की समस्या को प्रस्तुत किया है वहीं शिक्षित दलित जातियों में भ्रष्टाचार के प्रति जागरूकता को समाधान रूप में दलित पात्र विक्रम के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

> दूसरी बात रिश्वत रिश्वत है, चाहे अपने आप को ऊँची कौम का कहने वाले, समझे..जब तुम ही गलत काम करोंगे तो अपने बच्चे को क्या शिक्षा दोंगे।.....मजाक मत्त करो जानते हो पैसे लेकर जो तुम बिल पास करते हो, उतनी ही कंस्ट्रक्शन की कवॉलिटी खराब हो जाती है। "पता है लेकिन क्या करें, सिस्टम ही ऐसा है" "इस सिस्टम को बदलेगा कौन"? मेरे बदलने से ते बदलेगा नहीं जो मिलता है उसमें से हिस्सा ऊपर तक देना पड़ता है, न दो तो नौकरी नहीं होगी या तबादला हो जाएगा।"ठीक है लेकिन यह क्यूं नहीं सोचते कि सीवर कर्मचारियों को सुरक्षा के उपकरण क्यों नहीं मिलते? ठेकेदार उनसे बिना सुरक्षा के क्यों काम करवाता है। इसकी वजह रिश्वत ही है, और कुछ नहीं।(85)

कैलाशचन्द्र चौहान द्वारा दलित जातियों को सरकारी सहूलतों का लाभ न मिलने को भी समस्या माना है। सरकार द्वारा वैसे तो गरीब दलित परिवारों को सहायता देने के लिए कई योजनाएँ बनाई गई हैं। परन्तु उनका लाभ देते समय सरकार कई प्रकार की

अटकले लगाती है जिसका लाभ चाह कर भी गरीब दलित परिवारों के लोग नहीं उठा पाते। *भंवर*' उपन्यास में दलित औरत शकुन्तला का पति सफाई कर्मचारी का कार्य करता था उसका देहांत होने पर सरकार द्वारा उसकी नौकरी उसकी पत्नी अथवा उसके परिवार को यह कह कर देने से इन्कार कर दिया जाता है कि वह कच्चा कर्मचारी था इसलिए उसके स्थान पर उसके परिवार के किसी अन्य सदस्य को तरस के आधार पर उसकी नौकरी नहीं मिल सकती। इसलिए पति की मृत्यु के बाद वह अब घर चलाने के लिए घरों में साफ-सफाई का काम करती हैः

> शंकुतला आदमी मरने के बाद वह आधे पर मोहल्ला बस्ती करती है और अपने बच्चों के पेट पालती है। आदमी की जगह करूणा मूलक आधार पर उसे नौकरी नहीं मिल सकती। क्योंकि उसका आदमी अभी कच्चों में था। कच्चों में काम करने वाले कर्मचारियों के परिवार को सरकार कोई सहायता प्रदान नहीं करती, चाहे कर्मचारियों ने दस साल से ज्यादा उसकी सेवा में लगा दिए हो।(49)

कैलाशचन्द्र चौहान ने शिक्षित दलित समाज में सम्पन्न परिवारों द्वारा बेटियों के लिए अच्छे रिश्ते की चाह में बारातियों की रोटी के नाम पर होने वाले लाखों रूपए के खर्च तथा दहेज के नाम पर हो रहे शोषण को समस्या माना है जिसका वर्णन *भंवर* उपन्यास में कैलाशचन्द्र चौहान ने किया हैः

> शादी में फिजूलखर्ची बेकार है।.....न वह उस रिश्ते को हाथ से जाने देना चाहती थी जो एक अच्छे खासे परिवार से था। लड़का एम.टेक था वह टैलीफोन विभाग में इंजीनियर लगा हुआ था। लड़के वालों ने क्हा कि दहेज में चाहे कुछ न दे लेकिन बारातियों की खातिरदारी अच्छी तरह से हो जाए...सेकड़ों मीटर की खाली जमीन पर टैंट में

> अनगिनत गोल टेबल और चारों तरफ कुर्सिआं। अंदर ताजमहल के डिज़ाईन में टैंट लगा हुआ था। बारातियों घरातियों के लिए अलग-अलग तरह का इन्तजाम था गुजराती खाना भी है, दक्षिणी भी है और पंजाबी भी, शराब और बीयर का काऊंटर भी है।(111)

भंवर उपन्यास में दलित जाति की युवती अनामिका जिसका स्वयं का परिवार शहर में जाति छुपा कर रहता है परन्तु वह निम्न जाति के दलित बच्चों को समाज सेवा के नाम पर मुफ्त तीन घण्टे की शिक्षा देकर उनकी सहायता करती है अर्थात दलित परिवारों में अशिक्षा को भी कैलाशचन्द्र ने समस्या मानते हुए स्वयं सेवी संस्थाओं द्वारा दलित जाति के शिक्षा में कमज़ोर बच्चों को शिक्षित करना को समस्या के समाधान के रूप में प्रस्तुत किया हैः

> यहां मैं तीन घण्टे के लिए आती हूँ मैं पढ़ाई में कमजोर बच्चों को पढ़ाती हूँ साथ ही दसवीं या बाहरवी कलास में पढ़ते हैं। उनकी सहायता भी करती हूँ कई बार कुछ महिलाएँ भी अपनी समस्या को लेकर आ जाती हैं उन्हें भी समझाने व समस्याओं को सुलझाने का प्रयास करती हैं।(90)

इस प्रकार लेखक कैलाशचन्द्र चौहान ने दलित समाज में व्याप्त समस्याओं और उनके समाधान को प्रस्तुत किया है

विपिन बिहारी

दलित जातियों में ज्यादातर समस्याओं का कारण अशिक्षा/अल्पशिक्षा और अज्ञानता है जिसके कारण यह लोग अपनी और अपने समाज की प्रगति और विकास के बारे में नहीं सोच पाते ...और इन्हें कई प्रकार के उत्पीड़न झेलने पड़ते हैं। *हमलावर* उपन्यास में विपिन बिहारी ने ग्रामीण दलित समाज के लोगों में निर्धनता, अशिक्षा

और आर्थिक शोषण को समस्या मानते हुए उसके प्रति जागरूकता को समस्या के समाधान के रूप में प्रस्तुत किया हैः

> मदन भाई ठीक कहा कि नहीं। लोगों को जगाने के लिए हम लोगों को ही आगे आना होगा। अब मैं प्रत्येक छुट्टी पर गाँव आऊगां। जब मैं न रहू यहां, तुम समझाना संभालना इन्हें। इतना तो है कि इन कारणों के पीछे हमारी अशिक्षा और निर्धनता है ये स्वर्ण की चाल है कि पढ़ने नहीं दिया गया हमें। अपनी बात कहूं तो सूरजदयाल गुरू जी ने मेरे साथ क्या-क्या अत्याचार नहीं किया था कि मैं भागू स्कूल छोड़कर।(70)

लेखक ने दलित जातियों में बंधुआ मजदूरी को समस्या माना है जिसके चलते लेखक ने दलित जातियों को अपने हक्क के लिए आंदोलन करने को समस्या का समाधान माना है ताकि अब उनका शोषण न किया जा सके। प्रस्तुत उपन्यास में भजन द्वारा दलित टोले को लोगों के बंधुआ मजदूरी न करके खुला काम करने के लिए भी प्रेरित किया जाता है। जब जगदीश बाबू द्वारा रामप्रीत को जबरदस्ती काम करने के लिए बुलाया जाता है तब भी भजन के द्वारा ही जगदीश बाबू को प्रताड़ना दी जाती है और भजन बंधुआ मजदूरी के खिलाफ भी आवाज उठाता है ताकि दलित मजदूरों का आर्थिक शोषण न हो सके। इस प्रकार लेखक ने दलित जातियों में आर्थिक शोषण को भी समस्या माना है, और शिक्षा तथा शोषण के विरूद्ध जागरूकता को समाधान के रूप में प्रस्तुत किया है।

> जरा जबान संभालिए जगदीश बाबू, कहा न आदमी बनिए और आदमी को समझिए, नहीं तो आपके दिन बिगाड़ सकते हैं, आपका अब रौयां टेढा हो जाएगा जो मन में आए कर लिजीए, लेकिन रामप्रीत

> अब नहीं जाएगा आपके यहां कमाने न ही एक कौड़ी फेरेगा। केस मुक्दमा करिएगा तो आप पर भी लादा जाएगा केस मुक्दमा....शोषण उत्पीड़न का। इतने बरसों से आप इसका शारीरिक और मानसिक शोषण करते रहे हैं। भजन की आवाज तेज हो गई थी। मदन थोड़ी दूरी पर आ खड़ा हुआ था। जैसे वह मोर्चा लिए हुए था। (152)

विपिन बिहारी ने *हमलावर* उपन्यास में मदन के माध्यम से पढ़लिख कर दलित जातियों में आए परिवर्तन को प्रस्तुत किया है। शिक्षित होकर यह लोग अपने हक्कों और दिहाड़ी मजदूरी के नाम पर होने वाले शोषण के प्रति जागरूकता को समाधान हेतु प्रस्तुत किया हैः

> मानता हूँ कि आपने रूपए दिए लेकिन रामप्रीत भी तो कमा रहा है, आपके घर बहिया बैल की तरह दिन रात। सरकारी नियम के अनुसार काम करने के आठ घण्टे होते हैं और सरकारी रेट से मजूरी मिलनी चाहिए, लेकिन आप तीन सेर किल्लो भी नहीं और काम उगला से डूबला तक। दूसरा आपके पैसे का मूल्य है लेकिन इसके श्रम का कोई मूल्य नहीं।(152)

विपिन बिहारी ने प्रशासनिक क्षेत्र में फैले भ्रष्टाचार को समस्या मानते हुए समाधान हेतु शोषित दलित जनता में इसके लिए जागृति का प्रयास किया है। शोषित दलित जनता अब अफसरों की स्वार्थी रूचियों को जान चुकी है और अब अपने साथ होने वाले शोषण के प्रति जागरूक भी हो रहे हैं। दलित जातियों में शोषण के प्रति जागरूकता को *हमलावर* उपन्यास में लेखक विपिन बिहारी ने प्रस्तुत किया हैः

> ये सरकारी षडयंत्र है हम लोगों के विरूद्ध। नाम होगा दलितों के कल्याण के लिए इतना करोड़ रूपए गए हैं बजट में, और उन पैसों से

> कुएँ खुदवाए जा रहे हैं। जिसकी कोई प्रासंगिकता नहीं है। यदि उन पैसों से कुछ ऐसा किया जाता, जिससे दो चार को रोजगार मिलता। जिससे वे अपना पेट चलाते तो क्या बुरा होता ? लेकिन ऐसा क्यू होगा। दलितों के नाम के पैसे चाहे लूटा दो या लूट लो। (145)

दलित समाज के लोग सरकारी सहायता के नाम पर मिलने वाले अनुदानों के प्रति भी जागृत हो रहे हैं और सरकारी सहायता के नाम पर मिलने वाले फंड का सही उपयोग करके दलित जातियों के विकास में लगे हैं। प्रस्तुत उपन्यास *हमलावर* में लेखक ने दलित जातियों में आई चेतना को समाधान के रूप में प्रस्तुत किया है। विपिन बिहारी ने दलित जातियों को सरकारी अनुदान न मिलना भी समस्या माना है। वहीं दलित जातियों को इसके प्रति जागरूक करने के प्रयास को समस्या के समाधान के रूप में प्रस्तुत किया है। लेखक विपिन बिहारी ने धर्म में जातिवाद अर्थात जाति अधारित धर्म को समस्या माना है। धर्म में व्याप्त जातिवाद का लोगों पर इतना प्रभाव है कि लोग जातिवाद के नाम पर अशिक्षित जनता को उकसाने में लगे रहते हैं ताकि धर्म को हथियार बनाकर जातिवाद के नाम पर समाज को बांटा जा सकेः

> फिर बाल मुकंद मिसिर का आना जाना शुरू हो गया टोले में, तब वे क्या मजमा खड़ा करते हैं देखेंगें लो। पांव जमाने के लिए कुछ तो करना होगा उन्हें। वहाँ भी पत्थर है और तुम्हारे मंदिर में भी पत्थर ही रहेगा। कण-कण में भगवान का आस्तित्व होता है। इसमें और उसमें कोई अंतर नहीं होगा फिर.... मंदिर के पुजारी उन्हें ही बनवा दिया जाए। सबेरे सांझ धूप-अगरबत्ती जला दिया करेंगे। (37)

देशराज काली

देशराज काली ने पंजाब में दलित जातियों में अशिक्षा अथवा कम शिक्षा को भी समस्या माना है। प्रस्तुत उपन्यास *परणेश्वरी* में लेखक ने एक तरफ दलित जाति के लोगों को शिक्षा ग्रहण करने के लिए प्रयासरत्त दिखाया है वहीं दलित जातियों में शिक्षा के प्रति जागरूकता को भी प्रस्तुत किया है। जिसमें इन से जुड़ी धार्मिक संस्थाएँ भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। लेखक ने शिक्षा के प्रति जागरूकता को समाधान के रूप में प्रस्तुत किया है।

> संत ब्रहम दास जी ने मैनू केहा करदा सी कि आपणे किसे एक बच्चे नू पढ़ा लई, तर जावेंगा। उह सभ नू एही कहन्दे सन कि सिखिआं बंदे दिया अँक्खा हुन्दिया हन। इहदे नाल अक्खा खुल जांदीआ हन। इहदे नाल वहम कट्टे जांदे हन। तैनू नहीं पता उह ता रहिबर हन।(24)

देशराज काली ने पंजाब में जातिवाद को समस्या माना है। पंजाबी नावल *परणेश्वरी* में लेखक ने जातिवादी दंश झेलते दलित लोगों की स्थिति को पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले दलित परिवारों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। पंजाब के ग्रामीण क्षेत्र में दलित जाति के लोगों के पास रहने के लिए घर न होने के कारण ये लोग गाँव की साझी जगह शामलाट पर रहने लगे तो उच्च जाति के लोगों द्वारा इनको मारपीट कर वहां से भी निकाल दिया गया। जिसमें इनका साथ उच्च अधिकारी भी देते हैः

> शामलाटा चरांदा ते काबज हो गए.....चरांदा नहीं रहीआ ता असी विहले हो गए...फेर असी हथियार चुक्के सानू मारियां गया,असी देश ध्रोही हो गए फेर सानू भन्निया गया छल्लिया वांगू कुट्टिया गया इन्स्पैकटर नाले भंनदा सी....ते नाले कहिन्दा सी ...लओ चमारों तुहानू जमीना दईये(27)

पंजाबी उपन्यास *परणेश्वरी* में लेखक देशराजकाली ने पंजाब के ग्रामीण दलित समाज में अंधविश्वास को भी समस्या माना है जो कि इन जातियों के विकास में बाधक हैः

> अद्धी रात रावल दे सिर बाबे आ गए सन। घर दी एक नूकर 'च' बणाई जगह, जिहदे 'च' नाथा वास्ते चिमटा ते कुंडी–घोटणे दे नाल लगोट ते झोली दे नेड़े बैरागण वी पई सी। सामणे ओह नूड़िआं पिआ सी। इहदे ते बाबा जिंदा शाह मदार दा पहरा आ जांदा ए।(18)

इस प्रकार दलित जातियों में धर्म में अत्यधिक आस्था के चलते अंधविश्वास एक बड़ी समस्या माना है।

अज़ीज सरोए

पंजाबी दलित उपन्यासकार अज़ीज सरोए ने *हनेरी रात दे जुगनू* उपन्यास में दलित समाज में व्याप्त आर्थिक शोषण को समस्या मानते हुए दलित लोगों की आर्थिक शोषण के प्रति चेतना को समाधान रूप में प्रस्तुत किया है। वर्तमान समय में दलित वर्ग धीरे-धीरे जागृत होकर एक बड़ी शक्ति के रूप में सामने आ रहा है उच्च वर्ग के शोषण को शिकार लोग अब अपने हक्कों की मांग पर उतर आए हैं। अब यह लोग अपनी स्थिति को सुधारने के लिए परिवर्तन की राह पर चल पड़े हैं ताकि इनका विकास हो सकेः

> यार प्रताप आजा कोई हील्ला वसीला करिए जिस नाल कीर्ती वर्ग इक्क हो सके। आपणे हक्कां प्रति सुचेत हो सके। इह वर्ग लम्बें समय तो दबिया कुचलिया है।"...आखिर इक्क दिन पाली ने प्रताप दी मदद नाल सारे कम्मीआं नू इकतर कीत्ता। औहनां नू समझाया गया...असी बे

जमीने हाँ। उन्नां कोल जमीन है। असी दिन रात मेहनत करदे हाँ ते औह आराम। साढीआं औरतां औहनां दे घरां विच्च् कम्म करदीआं हन, ते जिस्मानी तौर ते औहनां दा शोषण हुन्दां है,पर औहनां दीआं औरतां वेहलपुणे विच्च समां लद्याऊँदीआं हन।(133)

दलित वर्ग के लोग आर्थिक विपन्नता के कारण परिवार में विवाह शादी या बीमारी इत्यादि के समय उच्च वर्ग से कर्ज लेते हैं, और जिसका सूद एक समय पड़ने पर इतना अधिक हो जाता है कि ये लोग सारी उम्र लगा कर भी उस कर्ज़ से मुक्त नहीं हो पाते। लेखक ने पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में उच्च वर्ग के द्वारा ऋणग्रस्तता के नाम पर किए जाने वाले दलित समाज के आर्थिक शोषण को समस्या माना है

बिसवेदार बिक्कर सिंह्य मजाल ए! किसे नू रूपया वी दिहाड़ी दा वद्ध दे देवे। कम्म पूरा दब्ब के लेंदा सी। उसने आद्धा पिंड ब्याज ते पैसे दे के करजाई कर रखिआ सी, जिस विच्च बड्डा हिस्सा वहड़े वाले कम्मीआं दा सी। इह कम्मी उस तो आपणे धीआं पुत्रां दे विआह समय या किसे बिमारी-ठीमारी समय पैसे ले के आपणी गरज़ मारदे सन। इही पैसा दो चार साल विच्च कोड़ी वेल वांग वद्द के दुगणा –चौगणा हो जांदा सी। दो चार, सीरी पाली तां ब्याज ते ही उसदे खेतां विच्च आपणी ऊमर पूरी कर गए सन। इस तो बिना उसदे करजे दी मार हेठ पिंड दी निम्न किसानी वी आई होई सी...।(68)

इस प्रकार निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि 21वी सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श तुलनात्मक अध्ययन (चयनित उपन्यासकारों के संदर्भ में' विषय पर शोध कार्य करते हुए चयनित लेखकों के द्वारा दलित विमर्श के विभिन्न आयामों से जुड़ी समस्याएँ और उनके समाधान को प्रस्तुत किया गया है।

अध्याय 7

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्शः एक तुलनात्मक अध्ययनः व्यवहारिक पक्ष

व्यवहारिक पक्ष

शोधकार्य को व्यवहारिक रूप देने के लिए एक प्रश्नावली का निर्माण किया गया। प्रारम्भ में प्रबुध विद्वानों द्वारा उस प्रश्नावली में सम्मिलित प्रश्नों पर अभिमत प्राप्त किया गया और उनके द्वारा सुझाओं के अनुरूप, प्रश्नावली को अंतिम रूप प्रदान किया गया। इसके पश्चात प्रश्नावली को दलित साहित्य के प्रबुध विद्वानों एवं बुद्धिजीवियों और चिंतको को प्रेषित किया गया। कुल पचास विद्वानों से प्राप्त उत्तरों का समग्रता से विश्लेषण करने के पश्चात जो निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं, उनका सार यहाँ प्रस्तुत किया गया है। इसके साथ ही दलित जातियों के सुधार के लिए कुछ सुझाव भी प्राप्त हुए हैं। उनकों भी यहां पर प्रस्तुत किया गया है।

सर्वप्रथम दलित उपन्यासों को दलित लेखकों द्वारा लिखने के कारणों को स्पष्ट करते हुए विद्वानों ने कहा कि स्वानुभूति तथा स्हानुभूति में अंतर होता है। स्वानुभूति साहित्य की यथार्थकता के लिए अति आवश्यक है। इसके साथ ही दलित साहित्यकार दलित जीवन की मार्मिकता को ज्यादा गहरे ढंग से व्यकत कर सकता है। इसको स्पष्ट करते हुए संत राम ने क्हाः

> स्वानुभूति पर आधारित साहित्य ही दलित साहित्य है। वह साहित्य जिसमें लेखक ने स्वयं उस यातना और पीड़ा को झेला है जिसका वर्णन वह अपनी रचना में कर रहा है जबकि स्हानुभूति को आधार बना कर साहित्य को लिखा जा सकता है परन्तु दुःख दर्द और पीड़ा का केवल अनुमान लगा कर ही।

साहित्य में जाति को आधार बना कर लिखे गए साहित्य को दलित साहित्य के नाम से जाना जाता है। क्या वर्तमान समय में समाज में जातिवाद को लेकर कुछ परिवर्तन की स्थिति आई है? इसको स्पष्ट करते हुए विद्वानों/चिंतकों का मानना है किः

> दलित विमर्श में जाति एक प्राथमिक मुद्दा है जो भारतीय जीवन में रचे-बसे जातीय दृष्टिकोण के उन तमाम सिद्धांतों चाहे वे साहित्यिक अभिव्यक्ति से सम्बन्धित हो या शिक्षा या राजनीति से, सभी के वर्चस्व को ध्वस्त करने के लिए प्रतिबद्ध है। जातिवाद को लेकर ग्रामीण क्षेत्रों में थोड़ा बहूत परिवर्तन आया है परन्तु शहरी क्षेत्रों में जातिवादी संकीर्णताओं में काफी ढील आई है।

उपन्यास के क्षेत्र में दलित विमर्श से जुड़े उपन्यासों का आरम्भ सत्तर के दशक से माना जाता है जबकि उपन्यास की विकास यात्रा लगभग एक सो चालीस वर्षों की मानी गयी है, उसके पहले और बाद में गैर-दलित लेखकों की एक लम्बी लाईन है। दलित साहित्य को लिखने के लिए दलित साहित्यकारों की एक धारा बह निकली है इसका क्या कारण है? इसको स्पष्ट करते हुए विद्वानों/चिंतकों का मानना है किः

> अतीत ही नहीं, आज भी गैर-दलित साहित्यकार दलित जीवन से जुड़ी समस्याओं के विषय में इतनी गंभीरता से नहीं सोचता जितनी गंभीर ये समस्याएं हैं। यहाँ तक कि यह कहना जरूरी लगता है कि तथा-कथित मुख्यधारा के विद्वान, आलोचक और समीक्षक दलित साहित्य की रचनाओं को अविश्वास की दृष्टि से देखते हैं। दलित लेखकों द्वारा रेखांकित जातीय उत्पीड़न उन्हें विश्वसनीय नहीं लगता। उन्हें दलित रचनाएं शिल्पहीन और कला हीन लगती है जबकि होना यह चाहिए था कि वह दलित लेखन की आंतरिकता से स्वयं को जोड़कर देखते।

स्त्री को समाज में शुरू से ही हाशियागत जीवन व्यतीत करना पड़ा है और कहीं न कहीं आज भी अपनी वास्तविक स्थिति को नही पा सकी है जिसकी वह हक़दार है। 21वीं सदी के दलित विमर्श को देखते हुए, वर्तमान समय में समाज में दलित औरतों की स्थिति में क्या परिवर्तन आया है? इस प्रश्न के उत्तर में विद्वानों का मानना है किः

> दलित समाज में ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाएं कम शिक्षा के कारण अभी भी पुराने संस्कारों से जकड़ी हुई हैं। महिलाएं पूरी जिंदगी उन्हीं संस्कारों का पालन करती हैं यदि आवाज उठाती भी हैं तो समाज में उन्हें गलत दृष्टिकोण से देखा जाता है परन्तु शहरी क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति में काफी परिवर्तन देखने को मिलता है। भारतीय संविधान में महिलाओं के लिए कई कानून बनाये गए हैं। शहरी क्षेत्रों में महिलाओं में शिक्षा के प्रति जागरूक्ता से भी इनकी स्थिति में सुधार हुआ है।

दलित जातियों में निर्धनता को बड़ी समस्या माना गया है। यहाँ तक अर्थाभाव के कारण ये लोग अच्छा जीवन व्यतीत कर पाने में असमर्थ है। दलित जातियों में आर्थिक अभावग्रस्तता के क्या कारण है? इस प्रश्न के उत्तर में विद्वानों का मानना है किः

> ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में गैर-सरकारी तथा सरकारी मजदूरी का उचित पारिश्रमिक न मिलना दलित जातियों में गरीबी का एक बड़ा कारण माना गया है जिसके जड़ में मूल कारण इन जातियों में व्याप्त अशिक्षा और अज्ञानता को माना गया है।

शिक्षा किसी भी समाज की तरक्की में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। शिक्षा के बिना व्यकित के विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती। दलित जातियों में शिक्षा

की स्थिति क्या है? इस के उत्तर में प्रिः प्रो. सुखबीर सिंह ने अपने विचार देते हुए क्हा है किः

> दलित जातियों में शिक्षा को लेकर जागृति तो अवश्य आई है परन्तु दलित समाज में अशिक्षा की जगह कम शिक्षा एक बड़ी समस्या के रूप में सामने आ रही है। आर्थिक अभावग्रस्तता के कारण दलित जातियां आधार शिक्षा जो कि स्कूल संस्थाओं में मुफ्त दी जाती है वहीं तक ही शिक्षा ले पाते हैं परन्तु निर्धनता के चलते माध्यमिक और उच्च शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाते।

बेरोजगारी को वर्तमान समाज में एक बड़ी समस्या माना जाता है। दलित जातियों में यह समस्या अन्य जातियों के मुकाबले ज्यादा पाई जाती है इसका क्या कारण है? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए विद्वानों का मानना है किः

> दलित जातियों में बेरोजगारी की समस्या अन्य जातियों के मुकाबले ज्यादा होने कारण दलित जातियों में अशिक्षा और कम शिक्षा है अशिक्षा के कारण ये लोग सरकार द्वारा दी गई सुविधाओं का लाभ नहीं ले पाते। उन्हें रोजगार नहीं मिल पाता जिसके चलते बेरोजगारी की समस्या का सामना करना पड़ता है।

साहित्य और राजनीति एक ही सिक्के के दो पहलू है। साहित्यकार समाज में राजनीतिक जीवन से जुड़े विभिन्न आयामों को प्रस्तुत करता है। वर्तमान समय में दलित जातियों की राजनीतिक स्थिति कैसी है? इस पर विद्वानों ने निम्न अनुसार उत्तर दिया हैः

> स्वतंत्रता के बाद सैद्धांतिक रूप से दलित जातियों की संविधानिक स्थिति बुरी नहीं है, किन्तु व्यवहार में वह सामाजिक, राजनीतिक,

> शैक्षणिक और सांस्कृतिक अधिकारों के उपयोग से वंचित हैं। दलितों की वर्तमान स्थिति के पीछे राजनीति में उनकी असंगठित भूमिका को काफी हद्द तक उत्तरदायी माना गया है। दलित जातियों में गरीबी, शिक्षा तथा रोजगार के अवसर न होने के कारण ये लोग अपने अधिकारों को प्राप्त करने में असफल रहे।

इसका एक अन्य कारण भी सामने आया है किः

> दलित जातियों में निर्धनता के चलते ज्यादा समय अपनी जीविका पार्जन की समस्या को सुलझाने में लगे होने के कारण ये लोग उचित समय राजनीति को नहीं दे पाते। शिक्षा के आभाव के कारण भी इनमें कोई बड़ा राजनीतिक नेतृत्व विकसित नहीं हो पाता। वर्तमान में धीरे-धीरे सरकारी योजनाओं का लाभ लेते हुए अब इनमें चेतना जागृत हो रही है, इनका रूझान अब शिक्षा की ओर अग्रसर हो रहा है जिससे राजनीति में इसकी भागीदारी बढ़ी है ये जातियाँ धीरे-धीरे संगठित होकर एक बड़े वोट बैंक के रूप में तबदील हो रही हैं।

प्रत्येक साहित्यकार अपने समय की परिस्थितियों को साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत करता है वर्तमान समय में दलित विमर्श जवंलत विषय है। दलित साहित्य में विकास की अवधारणा क्या है? इस से सम्बन्धित विद्वानों ने निम्न अनुसार उत्तर दिया हैः

> वर्तमान परिस्थितियों की बात करें तो, दलित विमर्श अपनी अवधारणात्मक विकास की प्रक्रिया में है। इसका कोई भी व्यवस्थित शास्त्र अभी तक नहीं बना है किन्तु दलित चिन्तन एवं आंदोलन का वैश्विक अवलोकन करने के बाद जो प्रमुख सिद्धांत सामने आते हैं वह यह है कि दलित अपनी मुक्ति चाहता है। हृदयहीन बाह्मणवादी एवं

> व्यवस्था के भेदभाव से साथ ही मनुष्य की अपार सम्भावनाओं के साथ भी अवलोकन करना चाहता है।

प्रस्तुत विमर्श में आर्थिक शोषण की समस्या को प्रस्तुत किया गया है क्या वर्तमान समय में भी आर्थिक शोषण की समस्या दलित जातियों के मध्य पाई जाती है? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए विद्वानों का मानना है किः

> वर्तमान समय में भी दलित जातियों को शोषण की समस्या का सामना करना पड़ता है। यह शोषण आर्थिक क्षेत्र से जुड़ा हुआ है। ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में अशिक्षित तथा कम शिक्षित दलित परिवारों को आधे रेट पर दिहाड़ी मजदूरी करनी पड़ती है या फिर कम शिक्षित होने के कारण ठीक से हिसाब-किताब न लगाने का फायदा उठाकर भी उच्च वर्ग द्वारा इनकी मजदूरी में कटौती की जाती है।

परिवर्तन प्रकृति का नियम है जिसके आधार पर किसी भी समाज के विकास का अंदाजा लगाया जा सकता है। वर्तमान समय में दलित जातियों की स्थिति में परिवर्तन की क्या स्थिति है? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए क्हा गया है किः

> शहरी क्षेत्रों में पढ़े लिखे दलित सक्रिय है शिक्षित होने के कारण वह लोग सरकारी सहूलतों का लाभ उठा रहे हैं, इनकी स्थिति पहले से ज्यादा मजबूत हो गई है परन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में जागरूकता की कमी के चलते इनकी स्थिति में सुधार शहरी क्षेत्रों के मुकाबले कम ही हुआ है।

दलित विमर्श के व्यवहारिक पक्ष का अध्ययन करते हुए कुछ सुझाव भी प्राप्त हुए हैं जिनको यहाँ प्रस्तुत किया गया हैः-

1. ग्रामीण क्षेत्रों में दलित जातियों की स्थिति शहरी क्षेत्रों के मुकाबले काफी ज्यादा कमज़ोर है। शिक्षा के विस्तार के द्वारा, प्रौढ़ शिक्षा और सामाजिक शिक्षा के विस्तार के द्वारा ग्रामीण जनता को जागरूक किया जा सकता है।
2. दलित जातियों से जुड़े पेशे में बदलाव की आवश्यकता है। सफाई कर्मचारियों के लिए गंदगी को साफ करने के लिए मशीनों का प्रयोग किया जाना चाहिए।
3. दलित जातियों मे सामाजिक तथा आर्थिक सुधार के लिए इन जातियों में शिक्षा के प्रति जागरूकता की आवश्यकता है ताकि इनमें अज्ञानता खत्म हो और ये लोग अच्छी नौकरियों की प्राप्ति के लिए प्रयास कर सके।
4. दलितों की बस्तियो में गंदगी को दूर करके उन्हें रहने योग्य बनाने के लिए प्रयास किए जाए ताकि उन्हें जो सुविधाएँ प्राप्त नहीं है प्राप्त हो सके और उनके स्वास्थ पर गंदगी भरे वातावरण से बुरा प्रभाव न पड़े।
5. दलित जातियों के रहने के लिए उचित निवास स्थानों की व्यवस्था करनी चाहिए।
6. दलित जातियों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए इनकों इनकी सेवा के बदले उचित वेतन दिया जाना चाहिए, जिससे इनका जीवन स्तर ऊँचा उठ सके तथा इनकी बहुत सी निर्योग्यताएं दूर हो सके।
7. भारतीय संविधान में दलित जातियों के विकास के लिए अनेक कानून बनाए गए हैं। दलित जातियों को उन कानूनों के प्रति जगरूक किया जाए।
8. समाज में अस्पृश्यता को समाप्त करने के लिए चलचित्रों, नाटक, गीतों आदि के द्वारा प्रयास किए जाने चाहिए जिससे साधारण जनता

अस्पृश्यता के दूषित परिणामों को जान सके। शिक्षा द्वारा भी इसकी समाप्ति के पक्ष में जनमत तैयार किया जाना चाहिए।

9. सरकार द्वारा दलित जातियों में मजबूत आर्थिकता के लिए एवं उनके बच्चों को शिक्षा की ओर आकर्षित करने के उद्देश्य से सरकार द्वारा दी जाने वाली सुविधाओं के प्रति दलित जातियों को जागरूक करना।

10. दलित जातियों को जागरूक करने के उद्देश्य से दलित बस्तियों में नुक्कड़ नाटक, सैमीनार, तथा डाक्यूमैंटरी इत्यादि का आयोजन समय-समय पर किया जाना चाहिए।

उपसंहार

उपसंहार

वर्तमान समय में उपन्यास हिन्दी साहित्य की केन्दीय विधा है। यह बड़ी मात्रा में लिखा जा रहा है। उपन्यास विस्तृत गद्य कथा है। यह कथा साधारण जीवन जैसी है। उपन्यास में जीवन अनुभूत और विश्लेषित है। उपन्यास साहित्य मानव-समाज के वास्तविक जीवन को स्पर्श कर मर्मस्पर्शी जीवनानुभूतियों को व्यक्त करता है। वर्तमान समय में उपन्यास विधा के द्वारा दलित विमर्श और उसकी अस्मिता पर विचार विमर्श होना उत्तर आधुनिक युग की एक बड़ी उपल्बधि कहा जा सकता है। आज का दलित विमर्श आधुनिक भारत की नींव रखने वाले महामानव डा. बाबा साहब अम्बेडकर जी के तेजस्वी विचारों का ही परिणाम है। किसी समाज या व्यकित की पहचान जाति नहीं ज्ञान से होनी चाहिए। दलित साहित्य लेखन में गैर-दलित लेखकों के द्वारा भी अपना योगदान देना साहित्यिक विकास के लिए महत्वपूर्ण है। दलित विमर्श में दलित चेतना के साहित्य में दलित साहित्यकारों द्वारा अपनी समस्याओं के बारे में लिखने के बाद गैर-दलित साहित्यकार भी पीछे नहीं रहे। वर्तमान समय में साहित्य की विविध विधाओं में दलित साहित्य की अपनी एक अलग पहचान है। एक समय था जब दलित- साहित्य को पारम्परिक साहित्य के मानदंड पर उतरने के लिए संघर्ष करना पड़ा लेकिन समय के चलते आपबीती वाला अनुभव–जन्य दलित साहित्य तेजी से भारतीय साहित्याकाश में उभरा। यह सामाजिक परिवर्तन की दलित दस्तक है। सामान्य मुनष्य को केन्द्र में लाने वाला यह लेखन विषमता और सामाजिक शोषण से भरी सामाजिक व्यवस्था पर आक्षेप करता है। यह लेखन संवेदना मानव अधिकार नारी सशक्तिकरण आदि प्रमुख बातों को अपने में समेटे हुए है। सबसे महत्वपूर्ण बात कि इसके केन्द्र में मानवता के साथ-साथ, समता, न्याय, बन्धुत्व इत्यादि सब समाहित है, इन्हीं मूल्यों के आधार पर दलित विमर्श से जुड़े सामाजिक पक्ष को प्रस्तुत किया गया है।

21वीं सदी के दलित विमर्श के अंतर्गत हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित उपन्यासकारों ने दलित विमर्श के सामाजिक आयामों को प्रस्तुत करते हुए दलित वर्ग में शिक्षा सम्बन्धी विभिन्न पक्षों को प्रस्तुत किया है। शिक्षा किसी भी समाज के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। चयनित उपन्यासों में शिक्षा से जुड़े आयाम कम शिक्षा तथा अशिक्षा की समस्या को प्रस्तुत किया है। सामाजिक जीवन में दलित नारी की दयनीय स्थिति तथा शिक्षा के प्रभाव से आए परिवर्तन को भी परिलक्षित किया गया है। इसके अतिरिक्त लेखकों ने जातिवादी संकीर्णता की समस्या को प्रस्तुत करते हुए गैर-दलित जातियों तथा दलित जातियों में व्याप्त जातिगत भेदभाव की समस्या को दर्शाया है। विवाह को भारतीय समाज में अति आवश्यक आयाम के रूप में स्वीकार किया जाता है। हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित लेखकों ने विवाह से जुड़े आयाम अन्तर्जातीय विवाह और अनमेल विवाह की समस्या को प्रस्तुत किया है। दलित समाज में आए परिवर्तनों और जागरूक्ता को पीढ़ीगत अंतराल के माध्यम से प्रस्तुत किया है। सामाजिक जीवन से जुड़े विभिन्न आयामों को हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित लेखकों ने अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किया है।

'राजनीति' जीवन का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी के दलित तथा गैर-दलित रचनाकारों ने अपनी रचनाओं में वर्तमान समय में दलित समाज में व्याप्त राजनीतिक पक्ष से जुड़े बिन्दु जैसे.. राजनीति में अवसरवादिता, जाति आधारित राजनीति, दफतरशाही तथा अफसरशाही के साथ-साथ भ्रष्ट प्रशासनिक व्यवस्था और आरक्षण की समस्या को भी प्रस्तुत किया है। हिन्दी तथा पंजाबी दोनों ही भाषाओं के उपन्यासकारों ने दलित विमर्श के राजनीतिक आयाम के अंतर्गत वर्तमान समय में समाज में फैले प्रशासनिक भ्रष्टाचार को एक बहुत गम्भीर मुद्दा माना है। भ्रष्टाचार से वर्तमान समय में समाज का प्रत्येक

वर्ग प्रभावित है, परन्तु सबसे ज्यादा प्रभावित जो वर्ग है वह है निम्न वर्ग अर्थात दलित समुदाय। आरक्षण रूपी ताअने को झेलते दलित युवाओं की मानसिक स्थिति, तथा आरक्षण के कारण दलित जातियों में भेदभाव की स्थिति को भी प्रस्तुत किया गया है।

'अर्थ' को जीवन की अनिवार्य आवश्यकता माना जाता है। 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श के आर्थिक आयाम के अंतर्गत दलित जीवन से जुड़े विभिन्न पक्षों का चित्रण किया गया है। दलित समाज में व्याप्त अर्थाभाव की समस्या, महंगाई से प्रभावित दलित समाज की स्थिति, बेरोजगारी की समस्या, आर्थिक शोषण से प्रभावित दलित समाज तथा आर्थिक शोषण से जुड़े विभिन्न आयाम जैसे आर्थिक ऋणग्रस्तता और आर्थिक कारणों से नारी शोषण की समस्या को प्रस्तुत करते हुए विकास और परिवर्तन की स्थिति को प्रस्तुत किया है।

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श चयनित उपन्यासकारों के अंतर्गत दलित समाज के जीवन से जुड़े विविध आयामों को प्रस्तुत करते हुए दलित समाज के धार्मिक और सांस्कृतिक सरोकारों को भी (आलोच्य रचनाओं में) प्रस्तुत किया गया है जिसके अंतर्गत धर्म में जातिवाद, अंध-विश्वास और रूढ़िवादिता की समस्या को दलित समाज में प्रस्तुत किया गया है। वास्तव में धर्म में अत्यधिक आस्था के चलते ये लोग धर्म से जुड़े कृत्यों के प्रति अंध-विश्वासी और रूढ़िवादी दिखाई देते हैं। आलोच्य उपन्यासों में दलित समाज से जुड़े सांस्कृतिक पक्ष को भी प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत विमर्श के अंतर्गत लेखकों ने दलित समाज में व्याप्त इन सांस्कृतिक पर्वों के महत्व को प्रस्तुत करते हुए होली, दीवाली तथा लक्ष्मी पूजा, सत्यनारायण की पूजा, मकर संक्राति इत्यादि प्रवोत्सव का वर्णन किया है। पंजाबी लेखकों ने पंजाब में दलित जातियों में धर्मों तथा त्यौहारों से जुड़े कुछ मेलों इत्यादि का भी वर्णन किया है जैसे ईद के समय गाँव में मेला लगना, बैसाखी का

मेला, तथा खवाजा की दरगाह का मेला इत्यादि का भी वर्णन किया है। दलित ग्रामीणों के जीवन से जुड़ी संस्कृति अर्थात लोक संस्कृति को भी प्रस्तुत विमर्श के अंतर्गत प्रस्तुत किया गया है। जिसमें दलित समाज में विवाह से जुडी रस्मों जैसे भात की रस्में, विवाह से पहले गीत गाने की रस्म, गौने की रस्म का वर्णन दोनों ही भाषाओं के लेखकों ने लोक संस्कृति के अंतर्गत प्रस्तुत किया है। लोक संस्कृति के अंतर्गत लोक जीवन से जुड़े पक्ष लोकगीतों को भी प्रस्तुत किया गया है जो कि जीवन के विभिन्न पक्षों तथा मनोरंजन से सम्बन्धित होते हैं, का वर्णन दोनों ही भाषाओं के लेखकों द्वारा प्रस्तुत किया गया है। सांस्कृतिक जीवन से जुड़ी लोक प्रथाओं में प्रर्दा प्रथा तथा दहेज प्रथा की समस्या का वर्णन प्रस्तुत किया है। दलित समाज से जुड़े अन्य रीति रिवाजों को भी प्रस्तुत किया गया है जिसमें नव वधू की चेहरा दिखलाई की रस्म, भात भरना, छोछक देना तथा बहू भोज की रस्मों के साथ-साथ मृत्यु सम्बन्धी रस्मों को भी दोनों भाषाओं के लेखकों ने प्रस्तुत किया है।

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए पाया गया है कि दलित समाज में वर्तमान समय में अनेक समस्याएं जुड़ी हुई हैं । ये समस्याएं दलित जीवन के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धर्मिक पक्षों से जुड़ी हुई हैं। हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित तथा गैर-दलित उपन्यासकारों ने प्रस्तुत समस्याओं के निवार्ण बिन्दुओं को किसी पात्र, अथवा प्रसंग का सहारा लेते हुए प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। वास्तव में दलित समाज की अधिकांश समस्याएं आर्थिक जीवन से जुड़ी हुई हैं, क्योंकि भारतीय वर्ण व्यवस्था में दलित हर प्रकार के अधिकारों से वंचित था। इसके साथ ही भारतीय समाज में दलित और नारी दोनों ही रूपों में उपेक्षा और उत्पीड़न का शिकार है। सम्पूर्ण दलित समाज अज्ञान और अशिक्षा के गर्त में पड़ा था। शिक्षा के आभाव में वे अपनी दयनीय स्थिति के बारे में सुचेत नहीं थे। उन्हें सिर्फ उनके पेट की ही चिंता रहती थी। कई प्रकार के

अंध-विश्वास भी उनमें घर किए हुए थे। दलित जातियों के बीच विद्यमान जातिगत असमानता उनके विकास मे बाधक है। दलितों की सामाजिक संरचना में छुपी हुई कई जातियां है जो परस्पर विद्वेषी हैं। हज़ारों सालों की दास्ता से उनमें जो हीनता भाव पनपी है उनसे मुक्ति की राह के लिए ये जातियां अब धीरे-धीरे जागरूक हो चुकी हैं।

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श की तुलना करते हुए चयनित रचनाकारों द्वारा व्यंजित समस्याओं के समाधान को भी प्रस्तुत किया गया है जो कि चयनित रचनाकारों द्वारा सुझाए गए हैं।

21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श विषय पर व्यवहारिक अध्ययन करने के लिए एक प्रश्नावली का निर्माण किया गया था जिससे प्राप्त उत्तरों को प्रस्तुत शोध कार्य में समलित करते हुए अध्ययन के समय प्राप्त समस्याओं के निवार्ण का प्रयास किया गया है।

इस प्रकार दलित विमर्श के विविध आयामों का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए जो समस्याएं उपस्थित हुई हैं, उनसे सम्बन्धित एक प्रश्नावली बनाकर एक रिपोर्ट सामाजिक सर्वेक्षण के माध्यम से तैयार की गई है जिसके अनुसार दलित जातियों में पिछड़ेपन के कई कारण हैं जिनमें से मुख्य कारण आर्थिक असमानता, अशिक्षा तथा अज्ञानता को माना गया है जो की मेरे द्वारा की गई शोध के निष्कर्षों से काफी मेल खाते हैं। जिसको आधार बनाकर प्रस्तुत समस्याओं को दूर करने का प्रयास किया जाएगा।

उपलब्धियां

शोधकार्य के उद्देश्यों को पूर्ण करने हेतु आलोचनात्मक, तुलनात्मक, मनोवैज्ञानिक और सर्वेक्षण(प्रश्नावली) आदि शोध प्रविधियों का प्रयोग किया गया है।

इससे शोध कार्य की महत्वपूर्ण उपलब्धियां/निष्कर्ष प्राप्त हो पाये हैं। शोध कार्यों के निष्कर्षों से यह भी स्थापित होता है कि उपन्यास विधा में अपने समय के दलित विमर्श के विविध आयामों से जुड़कर लेखन हो रहा है। वर्तमान समय में हिन्दी और पंजाबी के गैर-दलित तथा दलित उपन्यासकारों ने दलित जीवन से जुड़े विभिन्न आयामों को स्थान दिया है। 21वीं सदी के हिन्दी और पंजाबी उपन्यासों में दलित विमर्श में व्याप्त समसामयिकता को व्यक्त करने में भी शोध कार्य द्वारा सहायता प्राप्त हुई है। शोध कार्य के एक महत्वपूर्ण उद्देश्य वर्तमान समस्याओं के निराकरण से सम्बन्धित बिन्दुओं को भी इस शोध कार्य में उजागर किया गया है।

शोध कार्य में दलित विमर्श से जुड़े उपन्यासकारों के समक्ष भविष्य में जिन क्षेत्रों में अधिक कार्य करने की आवश्यकता है, उनकों भी उजागर किया गया है। शोध कार्य के उद्देश्यों को समक्ष रखते हुए, नवीन निष्कर्षों को प्रस्तुत किया गया है।

संभावनाएं

- 20वीं सदी और 21वीं सदी के दलित साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन।
- 21वीं सदी के उपन्यासों मे दलित चेतना का यथार्थ।
- दलित साहित्य में युगबोध के विविध आयाम।
- दलित उपन्यासों में सामाजिक सरोकार।
- हिन्दी दलित उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन।
- दलित उपन्यासों में सामाजिक जीवन के विविध पक्ष/ आयाम।
- दलित साहित्य में सामाजिक यंत्रणा और यथार्थ।
- दलित साहित्य में बदलते मानवीय मूल्य।
- हिन्दी और पंजाबी के दलित साहित्य में सामाजिक सरोकारः एक तुलनात्मक अध्ययन।

संदर्भ ग्रंथ सूची

(आधार ग्रंथ सूची)

अ(हिन्दी ग्रंथ)

चन्देल, रूप सिंह. *कानपुर टू कालापानी*. अमन प्रकाशन, 2019.

---. *दगैल*. भावना प्रकाशन, 2019.

चौहान, कैलाश चन्द्र. *भंवर*. सम्यक प्रकाशन, 2013.

---. *विद्रोह*. सम्यक प्रकाशन, 2007.

बिहारी, विपीन. *हमलावर*. श्री नटराज प्रकाशन, 2014.

---.*मरोड़*. कदम प्रकाशन, 2017.

मूर्ति, शिव. *तर्पण*. राज कमल प्रकाशन, 2004.

शुक्ल, वंदना देव. *मगहर की सुबह* . आधार प्रकाशन, 2014.

आ (पंजाबी ग्रंथ)

अणखी, रामस्वरूप. *सलफास*. आत्मा राम एण्ड संज, 2007.

कालड़ा, एस एस कालड़ा. *मुक्ति*. भारती प्रकाशन, 2017.

काली, देशराज. *परणेश्वरी*. चेतना प्रकाशन, 2008.

---. *शांतिपर्व*. दीपक पब्लिशर्ज, 2009.

गिल्ल, निंदर. *पंडोरी प्रोहितां*. सरगम पब्लिकेशन, 2012.

सरोए, अज़ीज. *हनेरी रात दे जुगनू*. चेतना प्रकाशन, 2011.

---. *केही वगे हवा*. लोकगीत प्रकाशन, 2014.

सिंह, बलदेव. *अन्नदाता*. आत्मा राम एण्ड संज, 2004.

कोश ग्रंथ

उपाध्याय, सूर्य नारायण. *आदर्श हिन्दी शब्दकोश*. कमल प्रकाशन, 2006.

चातक, गोबिंद. *आधुनिक हिन्दी शब्दकोश*. तक्षशिला प्रकाशन, 1997.

प्रसाद, कालिका. *बृहत हिन्दी कोश*. वाराणसी, 2002.

बाहरी, हरदेव. *राजपाल हिन्दी शब्दकोश*. राजपाल एण्ड सन्ज, 2003.

(सहायक ग्रंथ सूची)

अ (हिन्दी ग्रंथ)

कुँवर, गौतम भाईदास. *हिन्दी दलित साहित्य की दस्तक*. अनुज्ञा बुक्स, 2018.

कोपव्रत, प्रमोद.सम्पा. *हिन्दी दलित साहित्य एक मूल्यांकन*. वाणी प्रकाशन, 2016.

चौधरी, इन्द्रनाथ. *तुलनात्मक साहित्यः भारतीय परिपेक्ष्य*. वाणी प्रकाशन, 2007.

चौहान, सूरजपाल.*मध्यकालीन हिन्दी दलित साहित्यः एक विचार विमर्श*. वाणी प्रकाशन, 2017.

थोरात, सुखदेव . *भारत में दलित*. सेज पब्लिकेशन्ज़, 2017.

नगेन्द्र, *तुलनात्मक साहित्य*. नैशनल पब्लिशिंग हाउस, 2005.

पालीवाल, कृष्णदत्त.*दलित साहित्य विमर्श*. सस्ता साहित्य मंडल, 2018.

बाल्मीकि, ओमप्रकाश.*दलित साहित्य का सौन्द्रर्य शास्त्र*. राधा कृष्ण प्रकाशन, 2004.

बाल्मीकि, ओमप्रकाश.*दलित साहित्य अनुभव संघर्ष एवं यथार्थ* .राधाकृष्ण प्रकाशन, 2020.

बाला, सुशील.*संत साहित्य वर्तमान परिवेश में प्रासंगिकता*. संगम पब्लिकेशन्ज, 2013.

बोरा, राजकमल. *तुलनात्मक अध्ययनःस्वरूप और समस्याएं*. वाणी प्रकाशन, 2002.

भारती, कँवल. *दलित विमर्श की भूमिका*. इतिहास बोध प्रकाशन, 2006 .

लिम्बाले, शरण कुमार.*दलित साहित्य का सौन्द्रर्य शास्त्र* .वाणी प्रकाशन, 2016.

शंकर, दया. *दलित वैचारिकी और साहित्य*. अनुज्ञा बुक्स, 2018.

सिंह, पीएन.*हिन्दी दलित साहित्यःसंवेदना और विमर्श*. लोकभारती प्रकाशन,

2019.

(आ) पंजाबी ग्रंथ

कुमार, रविन्द्रर. *औरत अतै दलित*. लोकगीत प्रकाशन, 2005.

कौर, परमजीत. *पंजाबी कहानी विच्च दलित सरोकार*. लोकगीत प्रकाशन, 2005.

राम, रोणकी. *दलित पछाण मुक्ति अतै सशकतीकरण*. पंजाबी यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन ब्यूरो, 2012.

राम, रोणकी. *दलित चेतना स्त्रोत और स्वरूप*. लोकगीत प्रकाशन, 2010.

सिंह, सरबजीत.सम्पा. *दलित दृष्टि* .चेतना प्रकाशन, 2004.

सिंह, चरनदीप. *दलित सरोकार अतै साहित* .लोकगीत प्रकाशन, 2004.

हीरा,अमनदीप.*पंजाबी नावल रचना दलित परिपेक्ष्य*. रवि साहित्य प्रकाशन, 2004.

पत्र पत्रिकाएं

राजपाल, हुकुम चन्द. सम्पा. सामाजिक विमर्श.*शब्द सरोकार*, जनवरी मार्च 2015, वर्षः12 अंक 46 .

तनेजा, विनोद. सम्पा.तुलनात्मक अध्ययन से अभिप्राय. *कशफ़*, दिसम्बर 2007, वर्षः 6 अंक 2.

परिशिष्ट

साक्षात्कार –

1 प्रो.(प्रिंसीपल)सुखबीर सिंह

2 इकबाल उदासी

3 रूप सिंह चन्देल

4 विपिन बिहारी

प्रश्नावली

1. मुकेश कुमार 2. सीमा भाटिया 3. नीता रानी 4.अज़ीज सरोए 5. नीलम शर्मा 6. मनदीप कौर 7.हरविन्द्रर सिंह 8. रिंपल कुमारी 9.अनु रानी 10. सोमबीर सिंह 11. जीता.पी 12.अनीश श्रीवास्तव 13.ओम प्रकाश 14. रम्या.आर 15.सतबीर सिंह 16. गीतू खन्ना 17. रेशमा.एम.एल. 18.किनर बी कामाजी 19.अम्बर कुमार चौधरी 20. बाबू लाल धनदे 21. सपरनजीत कौर 22. नरेश कुमार सिहाग 23. बाबू लाल भूरा 24.मुकेश भाटिया 25. गुरप्रीत सिंह 26.रमनदीप राणा 27.कमलेश चौधरी 28.यशमीत कौर 29.सुमित्रा सैनी 30.फरहत प्रवीन 31.विकास कुमार 32. प्रभाकर दास 33. परमजीत कौर 34. सत्येन्द्र कुमार 35. डॉ. शंकुतला देवी 36. संत राम 37. हरिहरानंद 38. बब्लू कुमार भट्ट 39. अमनदीप कौर 40.अंजू सिसोदिया 41.जय प्रताप 42. विपुल राणा 43. गुरमीत सिंह कल्लरमाजरी 44.डॉ. शक्ति 45. कैलाशचन्द्र चौहान 46.परमजीत कौर 47. करमजीत कुस्सा 48. गुरमीत कड़िआलवी 49. परमिंदर सिंह 50. शिवमूर्ति 51.डॉ हरविन्द्र सिंह 52.मनजीत कौर।

International Journal of Research and Analytical Reviews

An open Access, Peer Reviewed, Refereed, Indexed, online and printed International Research Journal

Approved by UGC
Journal No. 43602

E ISSN 2348-1269
Print ISSN 2349-5138

IJRAR — International Journal of Research and Analytical Reviews

Certificate of Publication

This is to certify that Prof. / Dr. रेखा रानी & डॉ. अनिल कुमार पाण्डेय had contributed a paper as author / co-author to

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH AND ANALYTICAL REVIEWS

COSMOS Impact Factor 4.236

Title दलित स्त्री विमर्श आधुनिक उपन्यासों की दृष्टि से

and has got published in volume 6, Issue 1, **Jan. – March, 2019.**

The Editor in Chief & The Editorial Board appreciate the Intellectual Contribution of the author / co-author.

V.B. Jani	R.B. Joshi	T. Pathak
Executive Editor	**Editor in Chief**	**Member Editorial Board**

[VOLUME 6 I ISSUE 1 I JAN. – MARCH 2019]
http://ijrar.com/

e ISSN 2348 –1269, Print ISSN 2349-5138
Cosmos Impact Factor 4.236

दलित स्त्री विमर्श आधुनिक उपन्यासों की दृष्टि से

रेखा रानी(शोधार्थी हिन्दी)& डॉ. अनिल कुमार पाण्डेय(निर्देशक)
लवली प्रोफेशनल विश्वविद्यालय, फगवाड़ा(पंजाब)

Received: February 04, 2019 Accepted: March 11, 2019

ABSTRACT: *साहित्य मनुष्य के जीवन का दर्पण तथा मनुष्य की चितवृतियों का संचित प्रतिबिम्ब माना जाता है ।साहित्य को समाज का दर्पण क्हा जाता है कयोंकि साहित्यकार जो कुछ समाज में देखता है उसको साहित्य के माध्यम से अभिव्यकत करता है । साहित्य के संबंध में परिभाषा देते हुए महीप सिंह लिखते है कि साहित्य अपने समय के सामजिक यथार्थ को हमारे सामने प्रस्तुत करता है और उसका असली चेहरा उघाड़कर दिखाता है ।....साहित्य का दायित्व केवल इतना ही नहीं है कि वह हमें 'क्या हो गए है से परिचित कराए बल्कि आज हम या हमारा समाज जो कुछ भी है,उसके लिए हम कौन थे ' का जानना आवश्यक है और उसी के साथ 'क्या होंगे' पर गंभीर विचार विमर्श भी जरूरी है । साहित्य समाज को उसके यथार्थ को चाहे वह कितना ही गलीज और वीभत्स क्यों न हो से परिचित करवाता है ।साथ ही समसामयिक यथार्थ का निर्माण करने वाली अतीत की शक्तियों का आकलन करते हुए भविष्य के लिए हमारा मार्ग दर्शन करता है ।(महीप सिंह 5) इस प्रकार साहित्यकार समाज का अंग होने के कारण समाज की विसंगतियों से प्रभावित होता है और वह समाज में व्याप्त समस्याओं को अपनी लेखनी के माध्यम से उजागर करता है । साहित्य में गद्य विधाओं में उपन्यास का महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि यह मनुष्य के जीवन तथा समाज के सूक्षम से सूक्षम पक्ष को प्रस्तुत करने में सक्षम होता है । स्त्री विमर्श की बात की जाए तो स्वतंत्रता के बाद नारी आंदोलन विभिन्न उद्देश्यों को लेकर हमारे सामने आता है जिसमें महिलाओं ने विभिन्न स्तर पर सक्रिय योगदान दिया । सम्पूर्ण विश्व में बढती हुई असमानता, भेदभाव, गरीबी तथा हिंसात्मक टकरावों के संकटों ने नारी आंदोलन को बहुआयामी स्वरूप प्रदान किया है । भारतीय महिला आंदोलन में दलित, कामकाजी, मजदूर, निम्न, मध्य एवं उच्च वर्गीय सभी का योगदान है । वर्तमान समय में महिलाओं ने एक दूसरे की परिस्थितियों, समस्याओं,संघर्षों एवं प्राथमिकता को समझने की चुनौती स्वीकार की है ।*

Key Words: ***दलित,उपन्यास,नारी,आयाम।***

विषय विश्लेषण

वर्तमान भारतीय नारी विमर्श के अनेक आयाम हैं और इसका प्रमुख उद्देश्य स्त्री सशक्तीकरण रहा है । आधुनिक साहित्य में समाज और साहित्यकारों का दृष्टिकोण बदला है । समाज में नारी को उचित सम्मान एवं स्थान देने की वकालत की जाने लगी है लेकिन आज भी समाज ने नारी की स्थिति पूरी तरह से नहीं बदली। 'अकसर पत्रिका' में सुधा अरोड़ा का यह कथन इस बात की पुष्टि करता है कि "निश्चय ही हम 21 वीं सदी में भी एक 'बंद समाज' के घेरे को तोड़ नहीं पाए हैं। स्त्री के प्रति हमारा नजरियां आज भी बहूत मानवीय नहीं बना है ।" (सुधा अरोड़ा 31) अर्थात आज हम 21 वीं सदी की दहलीज पर खड़े है आज युग बदल गया है । औरते मर्दों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर हर क्षेत्र में आगे आ रही है परन्तु दलित समाज की औरतों की स्थिति में आज भी परिवर्तन नहीं हुआ है । प्रस्तुत शोध पत्र में दलित स्त्री के जीवन से जुड़े विभिन्न पक्षों को उपन्यासों के माध्यम से प्रस्तुत किया है ।

भारत एक कृषि प्रधान देश है और यहाँ के समाज में ग्रामीण संस्कृति का अपना एक अलग महत्व है । हिन्दी के अनेक उपन्यासों में ग्रामीण परिवेश का विस्तार से चित्रण किया गया है । नारी समाज पर ग्रामीण परिवेश के अंतर्गत आने वाली समस्याओं का चित्रण आलोच्य उपन्यासों में किया गया है । प्रस्तुत उपन्यासों में ग्रामीण दलित स्त्री के जीवन से जुड़ी अनेक समस्याओं को प्रस्तुत किया गया है । जिसमें अधिकांश समस्याएँ विवाह से जुड़ी है । 'मगहर की सुबह ' उपन्यास में उपन्यासकार 'वंदना देव' शुक्ल ने आर्थिक समस्यां से ग्रस्त दलित समाज की कम पढ़ी लिखी और अशिक्षित औरतो की स्थिति को दलित युवती मैना के माध्यम से प्रस्तुत किया है । जिसमें निर्धनता के कारण बदतर पारिवारिक हालातों के चलते छोटी आयु में मैना का विवाह मंदबुद्धि राजों के साथ कर दिया जाता है । उदाहर्ण को लिए........

> तेरे राजो का रिस्ता पक्का करके आया हूँ लड़की सात पास है, चौदह बरस की है । कराहल के पास गाँव की रहने वाली है ।....पाँच मोड़िया है....ये सबसे बड़ी है । बाप गरीब है । हमने कह दी कि हमई उठाएंगे दोनो लंघ का खर्च....मोड़ी का बाप राजी हो गया । (वंदना देव शुक्ल 22)

हिन्दी विभाग

राजकीय महिला महाविद्यालय, हिसार (हरियाणा) एवं
गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी–127021 (हरियाणा)

के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित

अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी 29 सितम्बर, 2021

हिन्दी साहित्य : विविध विमर्श

प्रमाण–पत्र

सहर्ष प्रमाणित किया जाता है कि सुश्री/श्रीमती/प्रो./डॉ. रेखा रानी शोधार्थी हिन्दी विभाग

संस्था/पता लवली प्रोफैशनल यूनिवर्सिटी पंजाब ने

प्रतिभागी के रूप में अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में सक्रिय प्रतिभागिता की एवं अपना वैचारिक योगदान दिया।

इन्होंने दलित विमर्श और राजनीति

विषय पर अपना शोध–पत्र प्रस्तुत किया।

डॉ. आशा सहारण, प्राचार्य,	मधुबाला, स. आ. एवं हिन्दी विभागाध्यक्ष	डॉ. नरेश सिहाग, एडवोकेट
राजकीय महिला महाविद्यालय, हिसार (हरियाणा)	राजकीय महिला महाविद्यालय, हिसार (हरियाणा)	गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
संरक्षक	संयोजिका	सचिव एवं आयोजक

SSFJDMC/31/10/21-241

हिन्दी विभाग

जानकी देवी मेमोरीयल कॉलेज

दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली-110060

एवं

साहित्य संचय शोध संवाद फाउंडेशन (रजि.)

सोनिया विहार, दिल्ली-110090

दो दिवसीय अन्तरराष्ट्रीय संगोष्ठी

समकालीन रचनाएँ एवं रचनाकार

प्रमाणित किया जाता है कि सुश्री/श्री : रेखा रानी, शोधार्थी, हिंदी विभाग, लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, ने जानकी देवी मेमोरीयल कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली एवं साहित्य संचय शोध संवाद फाउंडेशन, दिल्ली, द्वारा 30-31 अक्टूबर, 2021 को 'समकालीन रचनाएँ एवं रचनाकार' विषय पर आयोजित दो दिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में भाग लिया एवं मगहर की सुबह और तर्पण उपन्यासों में सामाजिक सरोकार (दलित साहित्य के संदर्भ में) विषय पर अपना शोधपत्र प्रस्तुत किया।

दिनांक : 30-31 अक्टूबर, 2021

प्रो. (डॉ.) स्वाति पॉल	प्रो. संध्या गर्ग	सुमन रानी	संजय कुमार
प्राचार्या	संयोजक	सह संयोजक	सह संयोजक

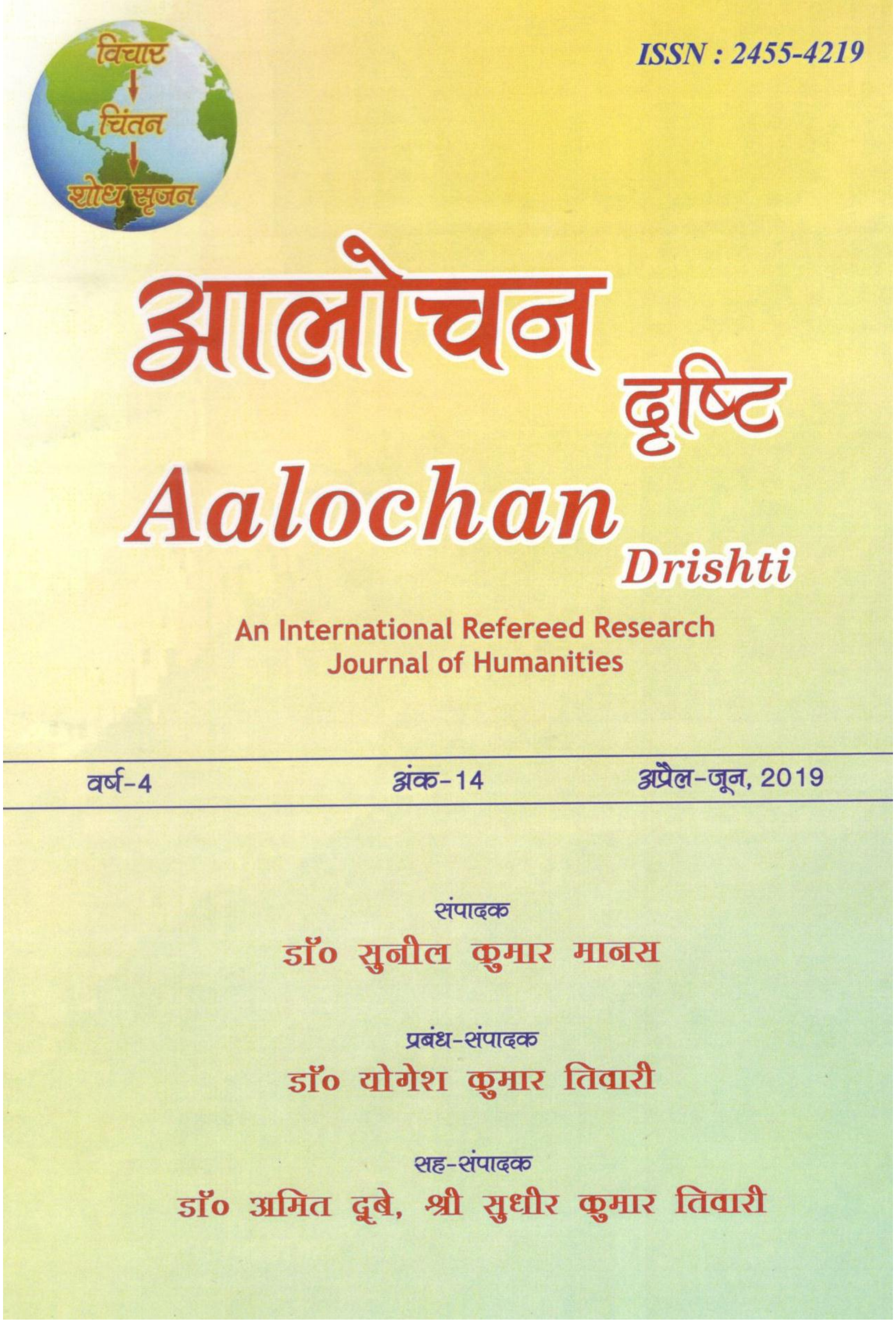

ISSN : 2455-4219
विचार
चिंतन
शोध सृजन
आलोचन दृष्टि
Aalochan Drishti
An International Refereed Research Journal of Humanities
वर्ष-4
अंक-14
अप्रैल-जून, 2019
संपादक
डॉ० सुनील कुमार मानस
प्रबंध-संपादक
डॉ० योगेश कुमार तिवारी
सह-संपादक
डॉ० अमित दूबे, श्री सुधीर कुमार तिवारी

विषयानुक्रमणिका

1. संस्कृतसाहित्ये मानवाधिकाराय न्यायदण्डस्य च वैधानिकता 1-3
डॉ. सुमन कुमारी

2. भारतीयास्तिकदर्शनेष्वीश्वरविचारः 4-7
डॉ. सुजाता पटेल

3. कुटिललिपि में अंकों का विकास एवं अंक-चिह्न 8-15
डॉ. अमित दूबे

4. 'ज्यों मेंहदी का रंग' उपन्यास में दिव्यांग-विमर्श 16-18
सनोज पी. आर.

5. उत्तर-आधुनिक परिदृश्य और निर्मल वर्मा का साहित्य 19-22
डॉ. बीना जैन

6. भारतीय साहित्य के अध्ययन में अनुवाद की भूमिका 23-26
डॉ. दिनेश साहू

7. वृन्दावनलाल वर्मा जी के उपन्यासों में नारी 27-31
अंजना मिश्रा

8. 21वीं सदी के हिन्दी उपन्यासों में दलित समाज (दगैल, मगहर की सुबह, तर्पण...) 32-35
रेखा रानी एवं डॉ. अनिल कुमार पाण्डेय

9. हिन्दी नवगीतों में पर्यावरण बोध 36-41
संजय सिंह यादव एवं डॉ. विनोद कुमार

10. 'यही सच है' का फिल्मांकन : नारी मन का अन्तर्द्वन्द्व 42-45
विनोद कुमार शुक्ल

11. भारत में ब्रिटिश शासन और 'चाँद' का फाँसी अंक 46-49
डॉ. दीप कुमार मित्तल

12. भूमि-अधिग्रहण के परिणामतः विस्थापन से बैगा जनजाति समुदाय... 50-55
डॉ. श्रद्धा गिरोलकर एवं मुकेश्वर सोनवानी

13. 'दुखवा मैं कासे कहूं मोरी सजनी' और 'सोने की पत्नी' कहानी का सांस्कृतिक... 56-59
जगदीश मौर्य

14. अमृतलाल नागर जी के उपन्यासों में महानगरीय परिवेश 60-62
दिव्या

15. स्त्री-विमर्श के स्वरूप की परिधि में स्त्री 63-66
दिलीप कुमार

16. ऐतिहासिक बोध की दृष्टि से 'मानस का हंस' 67-68
पूनम देवी

मासिक
RNI No. MPHIN/2004/14249
अक्षर वार्ता
वर्ष-17 अंक-9 (जुलाई-2021)
Vol - XVII Issue No - IX
(July - 2021)
मूल्य 25/- रुपये
Indexed In International
Impact Factor Services (IIFS) Database
Indexed In the International
Institute of Organized Research
(I2OR) Database
Monthly International
Referred Journal & Peer Reviewed
ISSN 2349 - 7521 , IMPACT FACTOR 5.125
कला-मानविकी-समाजविज्ञान-जनसंचार-वाणिज्य-विज्ञान-वैचारिकी की अन्तरराष्ट्रीय रेफर्ड शोधपत्रिका
» aksharwartajournal@gmail.com » www.facebook.com/aksharwartawebpage

अनुक्रम

» नई शिक्षा नीति और स्कूलों में नैतिक शिक्षा
डॉ. रवि शर्मा 'मधुप' 06
» भारतीय गाँव की धड़कन : किसान जीवन पर एक नज़र
डॉ. हरिप्रिया. आर 00
» हिंदी पत्रकारिता के बदलते स्वरूप एवं आयाम
नवीन कुमार जोशी 10
» गंगा - ऐतिहासिक परिपेक्ष्य भौगोलिक पटल पर
डॉ. निशा शर्मा 13
» राजनीति विरोध और धूमिल की कविता
डॉ.रमेश यादव 15
» आदिवासी अस्मिता के संघर्ष एवं सरोकार 'लौटते हुए' उपन्यास के विशेष संदर्भ में
डॉ. अनीश सिरियक 18
» कितना कुछ एक साथ - संवादों का कोलाज
डॉ. रश्मि रवींद्रन 22
» किन्नर कथा एवं व्यथा
रश्मि गुप्ता 25
» रामचरितमानस की समाजशास्त्रीय विवेचना
राखी सोरठिया चतुर्वेदी 28
» स्त्री विमर्श के उपेक्षित प्रश्न और भारतीय संस्कृति ('अन्या से अनन्या' के विशेष संदर्भ में)
शारदा जाट 30
» सांप्रदायिकता : एक ज़हर (साहित्य अकादेमी पुरूस्कृत उपन्यासों के संदर्भ में)
ममता नारायण बलाई 33
» वर्तमान परिदृश्य में अनुवाद एक सशक्त कला और तकनीक
सुन्दर रानी, डॉ. कमल सैनी 36
» 21वीं सदी के हिन्दी उपन्यासों में दलित जीवन का सामाजिक पक्ष
रेखा रानी, डॉ. अनिल कुमार पाण्डेय 39
» पं. दीनदयाल उपाध्याय - एकात्म मानववाद और अन्य राजनैतिक विचार
डॉ. मधुकांता समाधिया 41
» अर्थव्यवस्था एवं योग - एक समीक्षा
डॉ. अनुज कुमार 45
» अनुसूचित जाति का राजनैतिक नेतृत्व : उज्जैन जिले के विशेष संदर्भ में
मदनलाल बामनिया, डॉ. राकेश परमार 48
» राज्य निर्माण के बाद माड़िया जनजाति का राजनैतिक सशक्तिकरण (जिला - नारायणपुर के विशेष संदर्भ में)
श्रीमती मीनाक्षी ठाकुर, डॉ. लक्ष्मी लेकाम 51
» उत्तराखण्ड के गढ़वाली कवियों के काव्य में पर्यावरण चेतना
डॉ. नीलम ध्यानी 56
» समकालीन हिन्दी आदिवासी नाटकों में अभिव्यक्त आदिवासी जीवन
राखी क्लेमन्ट 58
» वैष्वीकरण और आधुनिक जीवन मूल्यों के सन्दर्भ में डॉ. श्यामसुंदर दुबे का लोक चिन्तन
डॉ. अम्बिका प्रसाद 61
» कलाक्षेत्र में व्यावसायिक संभावनाओं के ज्योतिष शास्त्रीय आधार
डॉ. अनया थत्ते 63
» राजस्थान की सहरिया आदिम जनजाति : एक अवलोकन
रोहिताश कुमार, डॉ. उमा यादव 66
» प्रबन्धन विशेषज्ञ के रूप में श्री कृष्ण
प्रो. कमला देवी 70
» वैश्विक साहित्य में हिंदी की स्थिति
सुकेश कुमारी 75
» Theosophical Philosophy And Education In Indian Context
Anju Sharma, Alka Jaiswal 78
» Robert Browning as a master of dramatic monologues in a different per spective with special reference to his poem 'My LastDuchess'
Dr. Shikha Garg 82
» Personality Development of dolescence With Respect To Their Intellectual and Non Intellectual Aspects
Alka Jaiswal, Nand Kishor Singh 86
» Old Age Problem : Lonliness
Dr. Nidhi Mishra 89
» China's Growing Military Power and Its Impact on India's Security
Suneet Mitra Pandey 92
» Critical Analysis of the Lack of Financial Rights at the Time of Divorce
Purnshri Sharma 95
» देश विभाजन का राजनीतिक चिन्तन विशेष अध्ययन - यशपाल कृत 'झूठा - सच' उपन्यास एवं भीष्म साहनी कृत 'तमस'
डॉ. प्रियंका 100
» कौशल विकास - छात्रों में लक्ष्य केन्द्रित व्यक्तित्व विकास की एक सार्थक पहल
डॉ. सोनिया चंदानी 102